उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

B.Ed.E-01

शैशवाकाल और उसका विकास

खण्ड : एक

शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

इकाई - 1 5

शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई - 2 22

शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियाँ

इकाई - 3 54

वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएँ

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0 पी0 दुबे	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	पूर्व निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 अखिलेश चौबे	पूर्व आचार्य, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 विद्या अग्रवाल	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 प्रतिभा उपाध्याय	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डा0 गिरीश कुमार द्विवेदी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0उषा मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समन्वयक

डॉ0 रंजना श्रीवास्तव	प्रवक्ता, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

ISBN-UP-978-93-83328-00-0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक ; कुलसचिव, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज-2019

मुद्रक : **d0l h0fifVx ,.M ,ykbM oD l] ipoVh] eFkjk&281003-**

B.Ed.E-01 : शैशवकाल और उसका विकास

खण्ड–एक शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

इकाई–1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई–2 शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियॉ

इकाई–3 वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएं

खण्ड–दो शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

इकाई–4 शारीरिक और संवेगात्मक विकास

इकाई–5 संज्ञानात्मक विकास एवं भाषा विकास

इकाई–6 सामाजिक एवं नैतिक विकास

खण्ड–तीन बुद्धि, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता

इकाई–7 बुद्धि सम्प्रत्यय सिद्धान्त एवं मापन

इकाई–8 व्यक्तित्व सम्प्रत्यय एवं मापन

इकाई–9 सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

खण्ड–चार अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

इकाई–10 अभिप्रेरणा, तर्क एवं समस्या समाधान

इकाई–11 स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई–12 तनाव, कुण्ठा और द्वन्द्व

खण्ड–पॉच विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

इकाई–13 विशिष्ट बालक

इकाई–14 मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान तथा समायोजन

इकाई–15 समूह मनोविज्ञान

खण्ड–एक : शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

खण्ड परिचय

शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। बालक के सीखने–सीखने की प्रकिया जन्म से मृत्यु के समय तक चलती रहती है जिसके माध्यम से वह अपने व्यवहार में परिवर्तन लाता है। मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यवहार के अध्ययन पर विशेष बल दिया है। इसके लिए उन्होंने अनेक प्रकार की वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से शिक्षण करने पर जोर दिया है। इन विधियों के प्रयोग से बालकों के व्यवहार से सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित किया जा सकता है। बालकों के व्यवहार पर वंशानुक्रम एवं वातावरण का भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता हैं। गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक वृद्धि एवं विकास की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है और वह परिवर्तनशील होती है। वृद्धि एक अवस्था आने पर अवरूद्ध हो जाती है जबकि विकास की प्रक्रिया लगातार चलती रहती है। प्रस्तुत खण्ड के अर्न्तगत निम्नांकित तीन इकाइयों का अध्ययन किया जायेगा।

इकाई – 1. किसी भी राष्ट्र की उन्नति के लिए शिक्षा एक सशक्त माध्यम है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं संवेगात्मक शक्तियों का विकास किया जाता है। शिक्षा के द्वारा बालकों के व्यवहार को परिमार्जित एवं परवर्तित किया जा सकता है। शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत बालकों के व्यवहार के अध्ययन पर बल दिया जाता है। शिक्षा के द्वारा बालक का सर्वांगीण विकास सम्भव है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों के अनुसार बालकों को वैज्ञानिक विधि एवं तकनीकी के माध्यम से शिक्षा उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इस इकाई में शिक्षा मनोविज्ञान के स्वरूप, उद्देश्य एवं महत्व आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है।

इकाई – 2. मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षण विधियों के माध्यम से शिक्षा मनोविज्ञान के अध्ययन पर बल दिया है। शिक्षाविदों के अनुसार शिक्षा एवं व्यक्ति के व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन मनोवैज्ञानिक विधियों के माध्यम से उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इस इकाई के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक, सम्प्रदायों के विषय में एवं विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक विधियों का उपयोग कैसे करना चाहिए, क्यों करना चाहिए एवं कब करना चाहिए इसके सम्बन्ध में वर्णन किया गया है।

इकाई – 3 बालक के वंशानुक्रम गुण तथा पर्यावरण के प्रभाव के कारण बालकों के वृद्धि एवं विकास की अवस्थाओं में शारीरिक, मानसिक, समाजिक, एवं सांवेगिक विकास की गति किस प्रकार प्रभावित होती है इसके अध्ययन के साथ–साथ वृद्धि एवं विकास में अन्तर, विकास के सिद्धान्त, विकास की अवस्थाओं के महत्व, विशेषताएँ एवं उनके शिक्षा के स्वरूप के सम्बन्ध में भी विस्तार पूर्वक चर्चा की गई है।

इकाई – 1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई की रूपरेखा –

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

1.4 मनोविज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएँ

1.4.1 मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(i) मनोविज्ञान आत्मा का विज्ञान है

(ii) मनोविज्ञान मन का विज्ञान है

(iii) मनोविज्ञान चेतना का विज्ञान है

(iv) मनोविज्ञान व्यवहार के विज्ञान के रूप में

(v) मनोविज्ञान की महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

1.5 मनोविज्ञान की प्रकृति

1.6 मनोविज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ

1.7 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएँ

1.8 शिक्षा मनोविज्ञान का उद्देश्य

1.8.1 शिक्षा मनोविज्ञान के सामान्य उद्देश्य

1.8.2 शिक्षा मनोविज्ञान के विशिष्ट उद्देश्य

1.9 शिक्षा मनोविज्ञान का स्वरूप

1.10 शिक्षा मनोविज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ

1.11 शिक्षा मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र

1.12 शिक्षा मनोविज्ञान का महत्व

1.13 सारांश

1.14 अभ्यास प्रश्न

1.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.1 प्रस्तावना

मानव अपने जीवन काल में अनेक प्रकार के परिवर्तनों से गुजरता है। बालक जन्म के समय अबोध होता है परन्तु ज्यों–ज्यों उसका विकास होता जाता है उसके अन्दर सांसारिक गतिविधियों एवं अनुभवों का समावेश होता जाता है। बालक को जिस प्रकार की आचार एवं शिक्षा–दीक्षा प्रदान की जाती है उसके जीवन में उसी प्रकार का व्यवहार प्रकट होता है। समाज परिवर्तनशील है। परिवर्तनशील समाज को शिक्षित बनाने के लिए शिक्षा एक सशक्त माध्यम है। किसी भी राष्ट्र की उन्नति एवं प्रगति के लिए शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। महात्मा गाँधी के शब्दों में, ''शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक तथा मनुष्य के शरीर मन और आत्मा में अन्तर्निहित सर्वोत्तम अंश का सम्पूर्ण प्रकटीकरण है''। पूर्व में शिक्षा का अर्थ संकुचित था परन्तु आजकल इसका अर्थ बहुत व्यापक है। शिक्षा के क्षेत्र में वृहद परिवर्तन मनोविज्ञान के अध्ययन में सम्भव है। किसी बालक का सम्पूर्ण विकास शिक्षा से ही हो सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन मनोविज्ञान के अध्ययन के माध्यम से सम्भव है। बालकों की प्रवृत्ति, मन, मस्तिष्क, व्यक्तित्व, बुद्धि और कल्पना, तर्क विवेचना, रूचि, अवधारणा, स्मृति, विस्मृति, सृजनात्मकता आदि का विश्लेषण मनोविज्ञान के माध्यम से वैज्ञानिक ढंग से सरलता के साथ किया जा सकता है। शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत शिक्षा और मनोविज्ञान का अध्ययन किया जाता है। अतः सर्वप्रथम शिक्षा एवं मनोविज्ञान के अर्थ को समझना अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा और मनोविज्ञान के अर्थ को समझने के पश्चात् ही शिक्षा मनोविज्ञान की अवधारणा को भलिभाँति समझा जा सकता है। शिक्षा मनोविज्ञान के अर्थ को समझने के उपरान्त ही उसकी परिभाषा, प्रकृति, कार्यक्षेत्र, उद्देश्य एवं विशेषताओं को आसानी से आत्मसात् किया जा सकता है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. शिक्षा के अर्थ एवं उसकी अवधारणा को विवेचित कर सकेंगे।
2. शिक्षा और शिक्षा मनोविज्ञान के अर्थ को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
3. मनोविज्ञान की प्रकृति के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. शिक्षा मनोविज्ञान के उद्देश्य से परिचित हो सकेंगे।
5. शिक्षा मनोविज्ञान की विशेषताओं को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. शिक्षा मनोविज्ञान के कार्य क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।
7. शिक्षा मनोविज्ञान के महत्व से भलि–भाँति अवगत हो सकेंगे।
8. शिक्षा और मनोविज्ञान के मध्य क्या सम्बन्ध है इससे परिचित हो सकेंगे।

1.3 शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए शिक्षा एक सशक्त माध्यम है। शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। शिक्षा के द्वारा बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान और कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिमार्जन किया जा सकता है। शिक्षा के द्वारा ही किसी भी नागरीक को योग्य एवं चरित्रवान बनाया जा सकता है।

शिक्षा का अर्थ जानने से पहले उसके शाब्दिक अर्थ का ज्ञान होना आवश्यक है, ''शिक्षा'' शब्द संस्कृत भाषा की ''शिक्ष'' धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से बना है। ''शिक्ष'' शब्द का अर्थ है सीखना और सिखाना। अतः ''शिक्षा'' शब्द का शाब्दिक अर्थ हुआ–सीखने व सिखाने की क्रिया। ''शिक्षा'' को अंगेजी में ''एजुकेशन'' कहते हैं जो कि लैटिन भाषा के एजूकेटम शब्द से बना है एजुकेटम शब्द इसी भाषा के ''ए'' तथा ''ड्यूको'' शब्दों से मिलकर बना है। ''ए'' का अर्थ है अन्दर से, जबकि ''ड्यूको'' का अर्थ है आगे बढ़ना। इस प्रकर एजूकेशन का शाब्दिक अर्थ है–अन्दर से आगे बढ़ना। अर्थात् बालक की आन्तरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करना। ''एजुकेयर'' तथा ''ऐजुसियर'' शब्दों को भी लैटिन भाषा से लिया गया है। जिसे एजूकेशन शब्द के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। इन दोनों शब्दों का अर्थ भी आगे बढ़ाना, बाहर निकालना अथवा विकसित करना है। अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि शिक्षा शब्द से अभिप्राय जन्मजात शक्तियों का सर्वांगीण विकास करने की प्रक्रिया से है।

शिक्षा के वास्तविक अर्थ को जानने के लिए विभिन्न महान शिक्षा शास्त्रियों एवं विद्वानों ने जो विचार अभिव्यक्त किए हैं उसका अध्ययन करना आवश्यक है–

स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में –

''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।''

"Education is manifestation of perfection already present in man"

-Swami Vivekanand

महात्मा गाँधी के शब्दों में शिक्षा का अर्थ – ''शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक तथा मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा में अन्तर्निहित सर्वोत्तम अंश के सम्पूर्ण प्रकटीकरण से है।''

"By Education I mean an all round drawing out of the best in child and mans body mind and spirit."

-Mahatama Gandhi

जगतगुरू शंकराचार्य के अनुसार ''शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाए। (सा विद्या या विमुक्तये–शंकराचार्य)''

प्लेटो के अनुसार – ''शारीरिक, मानसिक, तथा बौद्धिक विकास की प्रक्रिया ही शिक्षा है।''

"Education is a process of physical, mental and intellectual development."

-Plato

अरस्तु के अनुसार – ''स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करना ही शिक्षा है।''

Education is the creation of a sound mind in a sound body."

-Aristole

हरबर्ट स्पेन्सर ने मनुष्य जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से सामन्जस्य स्थापित करने के आधार पर कहा कि – ''शिक्षा से तात्पर्य अन्तर्निहित शक्तियों तथा बाह्य जगत के मध्य समन्वय स्थापित करने से हैं।''

Education means establishment of co-ordination between the inherent powers and the outer world."

-Herbert Spencer

जान ड्यूवी के शब्दों में – ''शिक्षा व्यक्ति की उन समस्त क्षमताओं का विकास करना है जो उसे अपने वातावरण को नियंत्रित करने तथा अपनी सम्भावनाओं को पूरा करने योग्य बनाएगी।''

"Education is the development of all those capabilities in the individual which will enable him to control his environment and fulfill his possibilities."

- John Dewey

पेस्तालॉजी के शब्दों में – ''शिक्षा व्यक्ति की समस्त जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, समरस तथा प्रगतिशील विकास है।''

Education is the natural, harmonious and progressive development of man's innate powers."

-Pestalozzi

फ्रॉबेल के अनुसार – ''शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी आन्तरिक शक्तियों को बाह्य शक्तियों का रूप देता है।''

"Education is process by which the child makes its internal powers external."

-Froebel

मैकेन्जी के शब्दों में – ''व्यापक अर्थ में शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो जीवन पर्यन्त चलती है तथा जो जीवन के प्रत्येक अनुभव से संवर्धित होती है।''

In wider sense, it is a process that goes on throughout life and is promoted by almost, every experience in life".

-S.S. Makchenzi

ड्रेवर के अनुसार – ''शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिसमें तथा जिसके द्वारा बालक के ज्ञान, चरित्र तथा व्यवहार को ढाला व परिवर्तित किया जाता है।''

Education is process in which and by which the knowledge, character and behaviour of the young are shaped and moulded."

- Drever

टी0 रेमण्ट के अनुसार – "शिक्षा विकास की उस प्रक्रिया का नाम है, जिससे मानव शैशवावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक गुजरता है, ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा वह अपने भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक वातावरण के साथ विभिन्न प्रकार से षनैः षनैः अनुकूलन करता है।**"**

Education is the process of development which consists of the passage of a human being from infancy to maturity, the process where by he adapts himself gradually in various ways to his physical, social and spiritual environment."

-T. Raymont

विभिन्न शिक्षाशास्त्रियों के द्वारा ''शिक्षा'' शब्द की जो परिभाषा दी गयी उसके विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि शिक्षा उद्देश्यपूर्ण, निरन्तर चलने वाली, गतिशील सामाजिक प्रक्रिया है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास सम्भव है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य किसी भी परिस्थिति में अपने को समायोजित कर अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।

1. अरस्तु के अनुसार शिक्षा की परिभाषा लिखिए।

____

____

____

1.4 मनोविज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएँ

मनोविज्ञान के अन्तर्गत प्राणियों के व्यवहार एवं उनके अन्दर पायी जाने वाली विभिन्न क्रिया कलापों का अध्ययन किया जाता है। मनोविज्ञान के अर्थ को समझने के लिए उसके शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषा को समझना आवश्यक है। मनोविज्ञान शब्द का अर्थ है – ''मन का विज्ञान।''

शाब्दिक अर्थ :– मनोविज्ञान को अंग्रेजी में 'साइकोलॉजी' कहते हैं। साइकोलॉजी शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के दो शब्दों 'साइकी' एवं 'लोगस' से मिलकर हुई है। 'साइकी' शब्द का अर्थ–आत्मा है, तथा 'लोगस' का शाब्दिक अर्थ अध्ययन से है। अतः साइकोलॉजी का शाब्दिक अर्थ है– आत्मा का अध्ययन।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।

2. साइकी तथा लोगस शब्द के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

1.4.1 मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ऐसा अध्ययन से ज्ञात होता है कि मनोविज्ञान का अध्ययन 16वीं शताब्दी से प्रारम्भ है। पहले मनोविज्ञान को दर्शनशास्त्र विषय के अन्तर्गत अध्ययन किया जाता था। समय के साथ मनोविज्ञान के स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहा और कुछ वर्ष पूर्व ही यह एक स्वतन्त्र विशय के रूप में प्रकाश में आया। मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र से किन परिस्थिति में अलग हुआ तथा उसके स्वरूप में क्या परिवर्तन हुए इसका संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है–

(i) मनोविज्ञान आत्मा का विज्ञान है

आत्मा का विज्ञान मनोविज्ञान है। इसके प्रबल समर्थकों में प्लेटो, अरस्तू, डेकार्टे आदि यूनानी दार्शनिकों के नाम प्रमुखता से लिए जाते हैं। ''आत्मा का विज्ञान मनोविज्ञान है'' यह अवधारणा 16वीं शताब्दी के बाद आत्मा की प्रकृति के विषय में अलग–अलग तर्क दिये जाते रहे। आत्मा के अर्थ, प्रकृति एवं कार्य को 16वीं शताब्दी मनोवैज्ञानिकों

द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सका। निष्कर्ष स्वरूप आत्मा का विज्ञान मनोविज्ञान है इस अवधारणा को अस्वीकार कर दिया गया।

(ii) मनोविज्ञान मन का विज्ञान है

आत्मा का विज्ञान ही मनोविज्ञान है इस अवधारणा को निरस्त कर देने के पश्चात् 17वीं शताब्दी में मनोविज्ञान को मन के विज्ञान के रूप में परिभाषित किया गया। आत्मा के समान मन का भी प्रत्यक्षीकरण नहीं किया जा सकता। विद्वानों का मन के प्रत्यय एवं कार्य पद्धति के विषय में विचार करने एवं प्रयोग करने के उपरान्त मनोवैज्ञानिकों ने आत्मा के समान ही मन के अस्तित्व को भी अस्वीकृत कर दिया। मन को भी आत्मा के समान देखा नहीं जा सकता है। मनोवैज्ञानिकों का तर्क था कि वह प्रत्यय जिसका प्रत्यक्षीकरण किया जा सके, जो प्रयोग में वैज्ञानिक रूप से सिद्ध किया जा सके, जिसका निरीक्षण किया जा सके,जिसके आकार–प्रकार के विषय में प्रकाश डाला जा सके उसे ही मनोविज्ञान के अन्तर्गत स्थान प्राप्त हो सकता है। मन की प्रमाणिकता को सिद्ध नहीं किया जा सकता एवं प्रयोग की कसौटी पर निष्कर्ष भी प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसलिए इस मान्यता को भी अस्वीकार कर दिया गया।

(iii) मनोविज्ञान चेतना का विज्ञान है

19वीं शताब्दी के मनोवैज्ञानिकों के द्वारा मनोविज्ञान को चेतना के विज्ञान के रूप में मान्यता प्रदान की गई। वाइव, विलियम जेम्स, विलियम विलियम वुण्ट, जेम्स सली आदि मनोवैज्ञानिकों ने मनोविज्ञान को चेतना का विज्ञान कहा। मनोविज्ञान चेतन की क्रियाओं का अध्ययन करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।

3. मनोविज्ञान चेतना का विज्ञान है इस कथन के समर्थकों के नाम बताइए।

____

____

____

मनोविज्ञान के अनुसार चेतना का सम्बन्ध अनुभव से होता है। चेतना का प्रत्यक्षीकरण सम्भव नहीं है। चेतना के अध्ययन में भी वैज्ञानिकता का अभाव पाया गया। विज्ञान की कसौटी पर खरासिद्ध न हो पाने के कारण मनोवैज्ञानिकों ने इस परिभाषा को भी मान्यता प्रदान नहीं की।

(iv) मनोविज्ञान व्यवहार के विज्ञान के रूप में

प्रो0 वाटसन ने 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान कहा। व्यवहारवादियों के अनुसार मनोविज्ञान की विषयवस्तु वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए अर्थात् जिसे देखा एवं सुना जा सके। व्यवहार को देखा, अनुभूत किया तथा परखा जा सकता है। व्यवहार को प्रयोग का विषय भी बनाया जा सकता है। व्यवहार में वस्तुनिष्ठता होती है। इस प्रकार के अवलोकन से स्पष्ट है कि मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान कहा जा सकता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि मानव जाति के ज्ञान में वृद्धि के साथ–साथ मनोविज्ञान के अर्थ में भी बार–बार अपेक्षित परिवर्तन आए। मनोविज्ञान के अर्थ में प्राप्त हुए अपेक्षित परिवर्तन के विषय को वुडवर्थ ने निम्नांकित तथ्यों के माध्यम से व्यक्त किया है–

''सर्वप्रथम मनोविज्ञान ने अपनी आत्मा का त्याग किया, फिर इसने अपने मन का त्याग किया, फिर इसने अपनी चेतना का त्याग किया, अब यह व्यवहार की विधि को स्वीकार करता है।''

(v) मनोविज्ञान की महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

मनोविज्ञान की प्रकृति एवं अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इसे अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है। उनकी परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं–

1. **मन के अनुसार–** ''आधुनिक मनोविज्ञान का सम्बन्ध व्यवहार की वैज्ञानिक खोज से है।''
2. **क्रो व क्रो–**''मनोविज्ञान, मानव व्यवहार और मानव सम्बन्धों का अध्ययन है।''
3. **वारेन के अनुसार –** ''मनोविज्ञान जीवधारी तथा वातावरण की पारस्परिक अन्तःक्रिया से सम्बन्धित विज्ञान है।''
4. **मोर्गन के अनुसार –** ''मनोविज्ञान मानव एवं पशु व्यवहार का विज्ञान है।''
5. **वाटसन के अनुसार –** ''मनोविज्ञान व्यवहार का धनात्मक विज्ञान है''।
6. **वुडवर्थ के अनुसार –** ''मनोविज्ञान वातावरण के सम्पर्क में होने वाले मानव व्यवहारों का विज्ञान है।''
7. **मैकडूगल के अनुसार–** '' मनोविज्ञान आचरण एवं व्यवहार का यथार्थ विज्ञान है''।
8. **हिल्गार्ड, एल्किन्सन तथा एटक्सिन के अनुसार–''** मनोविज्ञान वह विज्ञान है जो व्यवहार तथा मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है''।

9. **ज़िम्बार्डो के अनुसार** – ''मनोविज्ञान जीवधारियों के व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है''।

10. **पिल्सबरी के अनुसार** –''मनोविज्ञान की परिभाषा अत्यन्त संतोषपूर्ण ढंग से मानव व्यवहार के रूप में दी जा सकती है''।

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मनोविज्ञान एक निष्चित विज्ञान है जो प्राणियों के षारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक सभी प्रकार के व्यवहारों का अध्ययन करता है।

व्यवहार शब्द के अन्तर्गत बाह्य तथा आन्तरिक वे सभी प्रतिक्रियाएँ आ जाती है जिन्हें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मापा जा सकता है। ये प्रक्रियाएँ ज्ञानात्मक, भावात्मक अथवा मनोगत्यात्म्क किसी भी एक प्रकार की अथवा संयुक्त प्रकार की हों सकती हैं।

1.5 मनोविज्ञान की प्रकृति

मनोवैज्ञानिक परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त होता है कि मनोविज्ञान एक धनात्मक विज्ञान है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यवहारों का अध्ययन करने के लिए वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। वैज्ञानिक विधि में किसी विषय–सामग्री का व्यवस्थित रूप से अवलोकन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण करके परिणाम प्राप्त किए जाते हैं परिणाम के आधार पर भावी योजना को निश्चित किया जा सकता है। मनोविज्ञान के अध्ययन में वैज्ञानिक विधि का प्रचुरता से प्रयोग किया जाता है। जिसके आधार पर इसकी प्रकृति को वैज्ञानिक माना जाता है।

1.6 मनोविज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ

मनोवैज्ञानिक विश्लेषण एवं विवेचनाओं के आधार पर मनोविज्ञान की निम्न विशेषताएँ बताई गई हैं–

1. विधायक विज्ञान मनोविज्ञान है।
2. मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यवहार का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करते हैं।
3. मनोविज्ञान के अन्तर्गत मनुष्य की अनुभूति का अध्ययन किया जाता है।
4. मनुष्य के चेतन, अचेतन की सभी अवस्थाओं और अनुभवों का अध्ययन मनोविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है।
5. इसमें मनुष्य तथा पशु दोनों पर मनोवैज्ञानिक प्रयोग किए जाते हैं।
6. मनोविज्ञान व्यक्ति एवं वातावरण के बीच समायोजन सम्बन्धी गतिविधियों का अध्ययन करता है।

7. मनोविज्ञान के अन्तर्गत सभी प्रकार की ज्ञानात्मक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।

4. मनोविज्ञान की दो विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

1.7 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएॅ

शिक्षा मनोविज्ञान दो शब्दों से मिलकर बना है– 'शिक्षा' और ' मनोविज्ञान' । इसका शाब्दिक अर्थ है– शिक्षा सम्बन्धी मनोविज्ञान ।

स्किनर के शब्दों में– ''शिक्षा मनोविज्ञान, अपना अर्थ शिक्षा से, जो सामाजिक प्रक्रिया है और मनोविज्ञान से, जो व्यवहार सम्बन्धी विज्ञान है, ग्रहण करता है''।

शिक्षा के द्वारा मानव के व्यवहार में परिवर्तन व परिमार्जन किया जाता है। जबकि मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानव एवं पशुओं के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। व्यक्ति के व्यवहार में परिमार्जन के लिए व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करना नितान्त आवश्यक है। मानव व्यवहार को सुसंस्कृत एवं श्रेष्ठ बनाने के लिए जब व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है तो इस प्रकार के व्यवहार का अध्ययन शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। अतः विभिन्न प्रकार की शैक्षिक समस्याओं का समाधान करने के लिए आधारभूत सिद्धान्तों का वैज्ञानिक उपयोग करना ही शिक्षा मनोविज्ञान की विषयवस्तु है।

अमेरिका की नेशनल सोसाइटी ऑफ कालेज टीचर्स एजूकेशन ने शिक्षा मनोविज्ञान के कार्यों को तीव्रता प्रदान करने में बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। परिणाम स्वरूप समय में शिक्षा मनोविज्ञान को एक स्वतन्त्र विषय के रूप में स्वीकार किया जाता है। शिक्षा मनोविज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने कई परिभाषाएँ दी हैं जिसमें से कुछ प्रमुख निम्नवत वर्णित हैं।

1.7.1 शिक्षा– मनोविज्ञान की परिभाषाएँ :

1. **स्टीफन के अनुसार–** ''शिक्षा मनोविज्ञान, शैक्षिक विकास का क्रमबद्ध अध्ययन है।''

"Education Psychology is a systematic study of educational growth."

-J.M. Stephen

2. कॉलसनिक के अनुसार – ''शिक्षा मनोविज्ञान, मनोविज्ञान के सिद्धान्तों व परिणामों का शिक्षा के क्षेत्र में अनुप्रयोग है।''

"Education Psychology is the application of findings and theories of Psychology in the field of Education." **W. B. Kolesnik**

3. ट्रो के अनुसार – ''शिक्षा मनोविज्ञान, शैक्षिक परिस्थितियों के मनोवैज्ञानिक पक्ष का अध्ययन है''।

"Education Psychology is the study of the Psychological aspects of educational situations." **- Trow**

4. स्किनर के अनुसार –''शिक्षा मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की वह शाखा है जो शिक्षण तथा अधिगम से सम्बन्धित होती है''।

"Education Psychology is that branch of Psychology which deals with teaching and learning." **-B. F. Skinner**

5. क्रो एवं क्रो के अनुसार –''शिक्षा मनोविज्ञान व्यक्ति के जन्म से लेकर वृद्धावस्था तक के सीखने के अनुभवों का वर्णन तथा व्याख्या करता है।''

"Education Psychology describes and explains the learning experiences of an individual from birth through old age." **-Crow and Crow**

6- नाल और अन्य – ''शिक्षा मनोविज्ञान मुख्य रूप से शिक्षा की सामाजिक प्रक्रिया से परिवर्तित या निर्देशित होने वाले मानव–व्यवहार के अध्ययन से सम्बन्धित है।''

"Education Psychology is concerned primarily with the study of human behaviour as it is changed or directed under the social process of education."

Nall and others

1.8 शिक्षा मनोविज्ञान के उद्देश्य

शिक्षा के उद्देश्य के समान ही शिक्षा मनोविज्ञान के उद्देश्य निर्धारित किए गये हैं। शिक्षा के द्वारा ही किसी व्यक्ति को शिक्षित, संस्कारिक एवं सुयोग्य बनाया जा सकता है। शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो व्यक्ति के अन्दर छिपी प्रतिभा का प्रकटीकरण करता है। शिक्षित व्यक्ति ही अच्छे–बुरे में भेद कर सकता है तथा सही

बात को स्वीकार करने के योग्य होता है। शिक्षित व्यक्ति अपनी योग्यता से अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। मनोविज्ञान का उद्देश्य भी सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करते हुए शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने में अपना शत–प्रतिशत योगदान करना है।

स्किनर के अनुसार षिक्षा मनोविज्ञान के उद्देश्य :–

1. सामान्य उद्देश्य 2. विशिष्ट उद्देश्य

1.8.1 शिक्षा मनोविज्ञान के सामान्य उद्देश्य

सामान्य उद्देश्य के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को रखा गया है–

1. व्यक्तित्व के विकास में सहायता देने वाले सिद्धान्तों की खोज करना तथा उससे सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करना।
2. अध्यापक को शिक्षण–प्रशिक्षण कार्य में निपुण बनाने में सहायता प्रदान करना।
3. शिक्षण विधि एवं शैक्षिक क्रियाकलापों में सुधार लाने के लिए एक उपकरण के रूप में कार्य करना।
4. शिक्षा के सांस्कृतिक तथा व्यावसायिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।

5. स्किनर के अनुसार शिक्षा मनोविज्ञान के कितने उद्देश्य है तथा उनके नाम भी लिखिए।

____

____

____

1.8.2 शिक्षा मनोविज्ञान के विशिष्ट उद्देश्य

स्किनर ने शिक्षा मनोविज्ञान के विशिष्ट उद्देश्यों को निम्न प्रकार से वर्णित किया है।

1. छात्र को अपनी योग्यता, क्षमता और शक्तियों को पहचानने में मदद करना व लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रेरित करना।
2. शिक्षक को इस योग्य बनाने में मदद करना कि वह यह जानकारी प्राप्त कर सके कि कौन सा बालक किस सीमा तक विषय वस्तु को सीख सकता है तथा

बालक के व्यवहार में किस सीमा तक परिमार्जन तथा परिवर्तन किया जा सकता है।

3. शिक्षक का व्यवहार बालक के प्रति भेद–भाव रहित और सहानुभूतिपूर्ण होने की क्षमता का विकास करना ।
4. शैक्षिक समस्याओं पर मनोवैज्ञानिक विधि से चिन्तन करने में अध्यापक को सहायता प्रदान करना।
5. शिक्षक में ऐसी क्षमता का विकास करना जिससे वह अपने अध्यापन परिणामों तथा दूसरों के शिक्षा सम्बन्धी क्रिया–कलाप की जाँच कर सके।
6. बालक के सर्वांगीण विकास के लिए उपयुक्त वातावरण का चयन करना। उपयुक्त पाठ्यक्रम, शिक्षण–विधि, शिक्षण सामग्री का चयन करने में सक्षमता प्रदान करना।
7. शिक्षक को वैयक्तिक भिन्नता का ज्ञान प्रदान कर उसे बालकों का सर्वांगीण विकास करने में उचित मार्ग चयन के योग्य बनाना।
8. शिक्षाशास्त्रियों तथा शोधकर्ताओं को शिक्षण से जुड़ी हुई समस्याओं के समाधान के लिए उचित अवसर तथा प्रेरणा प्रदान करना।

1.9 शिक्षा मनोविज्ञान का स्वरूप

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों के द्वारा दी गई शिक्षा मनोविज्ञान की परीभाषाओं के आधार पर शिक्षा मनोविज्ञान के स्वरूप, संरचना कार्य पद्धति अथवा प्रकृति का विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है। शिक्षा मनोविज्ञान की कार्य पद्धति वैज्ञानिकता से परिपूर्ण है। मनोविज्ञान के विभिन्न सिद्धान्तों का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में किया जाता है। मनोविज्ञान की सहायता से सीखने के नियम, ध्यान, थकान, स्मरण की विधियाँ, पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त, शिक्षण एवं शैक्षिक मूल्यांकन आदि के सम्बन्घ में वैज्ञानिक सिद्धान्तों और नियमों का प्रयोग मनोविज्ञान की सहायता से किया जाता है। इस प्रकार अध्ययन, मनन और शिक्षण के आधार पर शिक्षा मनोविज्ञान की प्रकृति को मनोविज्ञान के समान माना गया है।

शिक्षा मनोविज्ञान उन खोजों को शैक्षिक परिस्थितियों में प्रयोग करता है जो कि विशेषतया मानव प्राणियों के अनुभव एवं व्यवहार से सम्बन्धित हैं।

निष्कर्ष स्वरूप यह अभिव्यक्त किया जा सकता है कि शिक्षा– मनोविज्ञान शिक्षा की समस्त गतिविधियों का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करने वाला विज्ञान है। शिक्षा–मनोविज्ञान मनोविज्ञान की एक शाखा है, परन्तु वर्तमान समय में उसे एक

स्वतन्त्र विषय के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत शैक्षिक समस्याओं का निराकरण प्रयोग के आधार पर किया जाता है। प्रयोगों के परिणामस्वरूप अनेकों प्रकार के सिद्धान्तों एवं नियमों का प्रतिपादन किया जाता है। शिक्षा मनोविज्ञान नियमों और सिद्धान्तों के अनुसार शैक्षणिक वातावरण में होने वाले व्यवहार एवं क्रियाओं का अध्ययन करता है। इनकी सीखने की क्रिया और सीखने के उत्पाद पर प्रभाव पड़ता है।

1.10 शिक्षा–मनोविज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ

शिक्षा मनोविज्ञान की परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर शिक्षा–मनोविज्ञान की विशेषताएँ निम्नानुसार वर्णित हैं–

1. शिक्षा–मनोविज्ञान के अन्तर्गत शिशु अवस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक व्यक्ति के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन किया जाता है।
2. शैक्षिक परिवेश के द्वारा बालक के व्यवहार में क्या–क्या अन्तर आते हैं इसका अध्ययन शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है।
3. शैक्षिक वातावरण के द्वारा व्यक्ति अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।
4. शिक्षा–मनोविज्ञान के अन्तर्गत वस्तुनिष्ठ ज्ञान प्राप्त होता है।
5. इसकी विधियाँ वैज्ञानिक होती हैं।

1.11 शिक्षा मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र

शिक्षा–मनोविज्ञान की कार्य पद्धति छात्र, अध्यापक एवं शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया पर आधारित होता है। चार्ल्स ई0 स्किनर ने शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र के विषय में अपना मत दिया है। ''शिक्षा मनोविज्ञान मानव व्यवहार का शैक्षिक वातावरण में अध्ययन करता है। शिक्षा मनोविज्ञान का सम्बन्ध मानव–व्यवहारों और व्यक्तित्व के अध्ययन से है, जिनका उत्थान, विकास और मार्ग प्रदर्शन शिक्षा की प्रक्रिया द्वारा होता है।''

शिक्षा मनोविज्ञान की विषय सामग्री के सम्बन्ध में डगलस और हालैण्ड के विचार ये हैं –

''शिक्षा–मनोविज्ञान की विषय–सामग्री, शिक्षण की प्रक्रियाओं में भाग लेने वाले व्यक्ति की प्रकृति, मानसिक जीवन और व्यवहार है।'' शिक्षा मनोविज्ञान विषय में शिक्षा में आने वाली समस्याओं एवं अवरोध के कारणों का अध्ययन किया जाता है। हमारी शिक्षा व्यवस्था बाल केन्द्रित होने के कारण बालकों को शिक्षित करना बहुत कठिन कार्य है। बालक कैसे किस वातावरण में, किस प्रकार की शिक्षण तकनीकी के द्वारा, किस

गति से सीख सकता है– इन सब बातों की सम्यक जानकारी शिक्षा मनोविज्ञान के माध्यम से ही सम्भव है। शिक्षा मनोविज्ञान के कार्य क्षेत्र निम्नवत् हैं–

क्र.सं0	मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र
1.	वंशानुक्रम एवं वातावरण
2.	विकास की अवस्थाएँ
3.	सीखने की प्रक्रिया
4.	व्यक्तिगत भिन्नताओं का अध्ययन
5.	अभिप्रेरणा
6.	बुद्धि एवं उसका मापन
7.	व्यक्तित्व एवं उसका मापन
8.	अन्येत्तर योग्य बालक के लिए शिक्षा
9.	मानसिक स्वास्थ्य
10.	पाठ्यक्रम निर्माण एवं शिक्षण प्रविधियाँ
11.	शैक्षिक निर्देशन एवं परामर्श
12.	शैक्षिक समस्याएँ
13.	मापन एवं मूल्यांकन

1.12 शिक्षा मनोविज्ञान का महत्व

वर्तमान शिक्षा प्रणाली पूर्णतया बाल केन्द्रित है। बाल केन्द्रित शिक्षा व्यवस्था बालक के अनुकूल होनी चाहिए। इसके लिए शिक्षकों को बाल मनोविज्ञान का ज्ञान होना आवश्यक है। शिक्षा से सम्बन्धित किसी भी प्रकार की समस्याओं का समाधान शिक्षा मनोविज्ञान के अध्ययन के माध्यम से सम्भव है। शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में शिक्षा मनोविज्ञान की भूमिका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है।

शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षा से सम्बन्धित समस्याओं का विवेचन एवं विश्लेषण से प्राप्त परिणामों के आधार पर समस्याओं का समाधान करने का प्रयत्न करता है। एक अध्यापक, बनने एवं बालकों को व्यापक दृष्टिकोण वाली शिक्षा देने के लिए आवश्यक है कि अध्यापकों को शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए। चार्ल्स ई0 स्किनर ने ''शिक्षा मनोविज्ञान को शिक्षक निर्माण की आधारशिला माना है।''

1.13 सारांश

शिक्षा मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक महत्वपूर्ण एवं समाजोपयोगी शाखा है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत प्राणियों के जीवन में परिलक्षित होने वाले समस्त व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। शिक्षा मनोविज्ञान का कार्य क्षेत्र बहुत ही व्यापक है। शिक्षा मनोविज्ञान के अनतर्गत शिक्षार्थी और शिक्षक की शिक्षण कार्य एंव दैनिक जीवन में आने वाली अनेक समस्याओं के समाधान का प्रयत्न किया जाता है। शिक्षा मनोविज्ञान के अनतर्गत सीखने–सिखाने की प्रक्रिया, अध्ययन प्रविधियों का प्रयोग, पाठ्यक्रम निर्माण, छात्रों की निष्पत्ति का मूल्यांकन आदि का अध्ययन किया जाता है। शिक्षा व्यवस्था बाल केन्द्रित होने के कारण इसमें बालक को केन्द्र में रखकर योजना बनाई जाती है तथा इसमें बालक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके अन्तर्गत विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्यन बालकों को केन्द्र में रखकर किया जाता है। शिक्षक बाल स्वभाव व उनकी योग्यता, अभिक्षमता, बुद्धि, व्यक्तित्व व मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर शिक्षण कार्य को प्रभावी बनाने का प्रयास कर सकते हैं।

1.14 अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षा मनोविज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए मनोविज्ञान और शिक्षा मनोविज्ञान में अन्तर बताइए।
2. शिक्षा मनोविज्ञान के स्वरूप एवं कार्यक्षेत्र का वर्णन कीजिए।
3. शिक्षा मनोविज्ञान की प्रकृति एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. शिक्षा मनोविज्ञान के सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
5. शिक्षा मनोविज्ञान के महत्व पर प्रकाश डालिए।

1.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Bhatia, H.R. (1977) : *A Text book? Educational Psychology*, Macmillan, New Delhi.

Chauhan, S.S. (1988) : *Advanced Educational Psychology*, Vikas Publication,

Mathur S.S. (1994) : *Educational Psychology*, Loyal Book Depot, Meerut.

गुप्ता, एस. पी. एवं गुप्ता अलका (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

पाण्डेय, राम शकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. एल. बुक डिपो, नियर गवर्नमेन्ट इण्टर कालिज, मेरठ।

सारस्वत, मालती, (2005), शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन, लखनऊ।

1.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ''स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करना ही शिक्षा है''।
2. साइकी शब्द का अर्थ – आत्मा है, जबकि 'लेगस' शब्द का अर्थ अध्ययन से है।
3. वाईव, विलियम जेम्स, विलियम वुण्ट एवं जेम्स सली।
4. 1. मनोविज्ञान धनात्मक विज्ञान है।

   2. व्यवहार का वस्तुनिष्ठ अध्ययन ही मनोविज्ञान है।
5. दो उद्देश्य है–

   .I. सामान्य उद्देश्य

   II. विशिष्ट उद्देश्य

इकाई – 2 : शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मनोविज्ञान के सम्प्रदाय

2.4 संरचनावाद

2.4.1 संरचनावाद का शिक्षा में योगदान

2.5 प्रकार्यवाद

2.5.1 प्रकार्यवाद का शिक्षा में योगदान

2.6 व्यवहारवाद

2.6.1 व्यवहारवाद का शिक्षा में योगदान

2.7 मनोविश्लेषणवाद

2.7.1 मनोविश्लेषणवाद का शिक्षा में योगदान

2.8 गेस्टाल्टवाद

2.8.1 गेस्टाल्टवाद का शिक्षा में योगदान

2.9 हारमिकवाद

2.9.1 हारमिकवाद का शिक्षा में योगदान

2.10 शिक्षा मनोविज्ञान के अध्ययन हेतु प्रयुक्त विधियाँ

2.11 अन्तर्दर्शन विधि

2.11.1 अन्तर्दर्शन विधि के गुण

2.11.2 अन्तर्दर्शन विधि के दोष

2.12 बहिर्दर्शन विधि

2.12.1 बहिर्दर्शन विधि की गुण

2.12.2 बहिर्दर्शन विधि के दोष

2.13 प्रयोगात्मक विधि

2.13.1 प्रयोगात्मक विधि के गुण

2.13.2 प्रयोगात्मक विधि के दोष

2.14 व्यक्ति–इतिहास विधि

2.14.1 व्यक्ति – इतिहास विधि के गुण

2.14.2 व्यक्ति – इतिहास विधि के दोष
2.15 विकासात्मक विधि
2.15.1 विकासात्मक विधि के गुण
2.15.2 विकासात्मक विधि के दोष
2.16 तुलनात्मक विधि
2.16.1 तुलनात्मक विधि के गुण
2.16.2 तुलनात्मक विधि के दोष
2.17 मनोविश्लेषणात्मक विधि
2.17.1 मनोविश्लेषणात्मक विधि के गुण
2.17.2 मनोविश्लेषणात्मक विधि के दोष
2.18 नैदानिक विधि
2.18.1 नैदानिक विधि के गुण
2.18.2 नैदानिक विधि के दोष
2.19 सर्वेक्षण विधि
2.19.1 सर्वेक्षण विधि के गुण
2.19.2 सर्वेक्षण विधि के दोष
2.20 सारांश
2.21 अभ्यास कार्य
2.22 कुछ उपयोगी पुस्तकें
2.23 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.1 प्रस्तावना

जब से मानव जीवन अस्तित्व में आया है वह पूर्णतया वातावरण पर ही निर्भर रहा है। प्रकृति में वास करने वाले मनुष्य तथा जीव–जन्तु सभी अपनी दैनिक क्रिया–कलापों को अपनी रूचि के अनुसार ही सम्पन्न करते है। प्रस्तुत अध्याय में सम्प्रदाय क्या है, इनका वैज्ञानिक व शैक्षिक योगदान क्या है, इसका अध्ययन करेंगे। मनोविज्ञान के विभिन्न सम्प्रदाय अलग–अलग ढंग से मानव व्यवहार को जानने के लिए अनेक प्रकार के प्रयोग किए। सम्प्रदाय के सम्बन्ध में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों की अलग–अलग विचारधाराएँ हैं। किसी एक सम्प्रदाय के मनोवैज्ञानिक ने अपने अध्ययन में अन्तर्दर्शन को महत्व दिया है। अन्तर्दर्शन आत्म निरीक्षण करने का सर्वोत्तम माध्यम है। सभी सम्प्रदाय अपने अध्ययन में मानव के व्यवहार की व्याख्या करते हैं परन्तु सभी

सम्प्रदायों द्वारा मानव व्यवहार की व्याख्या अपने–अपने ढंग से वर्णित की गई है। शिक्षा में किसी न किसी विधि का अनुसरण एवं प्रयोग आदि काल से होता आ रहा है, परन्तु उसमें वैज्ञानिकता का पूर्णतया अभाव होने के कारण विषयवस्तु की यथार्थता, वैधता, विश्वसनीयता, वस्तुनिष्ठता का सही आकलन नही हो पा रहा था। इस बात को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षा मनोविज्ञान के अध्ययन को वैज्ञानिक विधि से पढ़ाये जाने हेतु प्रयत्न किए गये। विषयवस्तु की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए शिक्षाविदों ने मनोविज्ञान के अध्ययन हेतु कुछ निश्चित विधियों के प्रयोग पर जोर दिया। इन विधियों के माध्यम से अध्ययन करने पर विषय वस्तु सरल, सुबोध, सत्य वैध, विश्वसनीय और यथार्थ सिद्ध होती हैं। इसीलिए शिक्षा मनोविज्ञान में विविध शैक्षिक और व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं के समुचित समाधान हेतु वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग को आवश्यक समझा जाने लगा। फलतः शिक्षा मनोविज्ञान में अध्ययन हेतु विभिन्न प्रकार की विधियों का विकास हुआ व इनका प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में होने लगा।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएँगे कि :–

1. सम्प्रदाय के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. विभिन्न सम्प्रदायों की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
3. विभिन्न सम्प्रदायों के शैक्षिक निहितार्थ को वर्णित कर सकेंगे।
4. सम्प्रदायों के विभिन्न प्रकारों से अवगत हो सकेंगे।
5. सम्प्रदायों के सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई विचारधारा से अवगत हो सकेंगे।
6. शिक्षा मनोविज्ञान में प्रयोग कि जाने वाली विभिन्न विधियों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
7. शिक्षा मनोविज्ञान में प्रयुक्त विभिन्न विधियों की क्या शैक्षिक महत्ता है, इसका ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।
8. शिक्षा मनोविज्ञान की विभिन्न विधियों का प्रयोग करने में सक्षम हो सकेंगे।

2.3 मनोविज्ञान के सम्प्रदाय

मनोविज्ञान के क्षेत्र में 19वीं तथा 20वीं शताब्दी के मध्य में बहुत से सम्प्रदायों की स्थापना हुई। इस समय मनोवैज्ञानिकों कें विचारों में मत विभिन्नता थी। ऐसे मनोवैज्ञानिक जिनकी विचारधारा एक समान थी उन्हें एक सम्प्रदाय में रखा गया। इन सम्प्रदायों को ही मनोविज्ञान के स्कूल के नाम से सम्बोधित किया गया। मनोविज्ञान के कुछ महत्वपूर्ण

सम्प्रदाय निम्नलिखित हैं –

(i) संरचनावाद (ii) प्रकार्यवाद (iii) व्यवहारवाद

(iv) मनोविश्लेषणवाद (v) गेस्टाल्टवाद (vi) हारमिक मनोविज्ञान।

2.4 संरचनावाद

दर्शनशास्त्र से मनोविज्ञान को अलग करके उसे एक स्वतन्त्र अनुशासन के रूप में स्थापित कर उसका अध्ययन करने का श्रेय संरचनावाद को जाता है। इस सम्प्रदाय की स्थापना का श्रेय ई. बी. टिचनर महोदय को प्राप्त है जो विलियम वुण्ट के शिष्य थे। संरचनावाद के समर्थकों के अनुसार इस सम्प्रदाय के मनोवैज्ञानिक मानसिक क्रियाओं का अध्ययन नहीं करते और न ही साहचर्य पर विश्वास करते है। इस सम्प्रदाय के लोग निरीक्षण के माध्यम से अध्ययन करने को महत्व देते है। संरचनावाद के अनुसार मनोविज्ञान चेतना अनुभूतियों का अध्ययन करने वाला विज्ञान था। टिचनर महोदय के अनुसार चेतना की अनुभूतियों को अर्न्तनिरीक्षण विधि के माध्यम से तीन तत्वों में विभक्त किया जा सकता है।

(i) संवेदना (ii) प्रतिमा (iii) अनुराग

वुण्ड ने लिपजिग में सन् 1879 ई. में एक प्रयोगशाला की स्थापना की। प्रयोगशाला के अन्दर कार्य करते समय आपने निष्कर्ष स्वरूप चेतना के अनुभवों को संवेदना तथा भावना में व्यक्त किया है। **टिचनर का ऐसा मानना है कि** ''अनुभवों के अभाव में विज्ञान का कोई अस्तित्व नहीं है। मन तथा शरीर के बीच एक प्रकार का समानान्तर सम्बन्ध हैं, चेतना वर्तमान में होने वाली मानसिक क्रियाओं का पूर्णांक हैं।''

2.4.1 संरचनावाद का शिक्षा में योगदान

1. संरचनावादियों ने ही मनोविज्ञान से दर्शनशास्त्र को अलग करके इसे एक स्वतन्त्र विषय के रूप में मान्यता प्रदान की तथा इसके कार्यप्रणाली को प्रयोगात्मक बनाया।
2. शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत प्रयोगात्मक पद्धति का समावेश होने से शिक्षा की नवीन पद्धति के बारे में जागरूक होने की चेतना शिक्षकों में विकसित हुई।
3. पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों का समावेश किया गया जिसके द्वारा छात्रों के अन्दर चिन्तन, स्मरण, प्रत्यक्षीकरण एवं ध्यान जैसे– मानसिक गुणों का विकास हो तथा उनका प्रयोगात्मक अध्ययन किया जा सके।
4. यह अनुभव के द्वारा सीखने पर बल देता है।
5. यह वाद शिक्षा में शोध को प्रोत्साहित करने पर बल देता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. चेतन की अनुभूतियों को किस विधि के माध्यम से तीन तत्वों में विभक्त किया गया है?

____

____

____

2. संरचनावाद का शिक्षा में क्या योगदान है लिखिए?

____

____

____

2.5 प्रकार्यवाद

प्रकार्यवाद एक ऐसा सम्प्रदाय है जिसकी उत्पत्ति संरचनावाद के विरोध में हुई है। कार्यवाद का प्रारम्भ विलियन जेम्स (1859–1952) के द्वारा हारवर्ड विश्वविद्यालय में किया गया। परन्तु सही अर्थों में इसकी स्थापना का श्रेय शिकागों विश्वविद्यालय में जान डिवी (1859–1952), जेम्स आर एंजिल (1867–1949) एवं हार्वे ए. कार्र (1873–1954) को जाता है। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के इ. एल. थार्नडाइक तथा आर. एस. वुडवर्थ भी इस स्कूल में प्रमुख योगदान देने के लिए प्रसिद्ध हैं।

प्रकार्यवाद एक ऐसा सम्प्रदाय है जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से दो प्रकार के प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए प्रयास किया जाता है।

1. बालक क्या करते हैं ?

2. बालक क्या कोई व्यवहार करते हैं ?

वुडवर्थ (1948) के अनुसार उपरोक्त दोनों प्रश्नों के उत्तर को खोजने वाले मनोविज्ञान को ही प्रकार्यवाद के नाम से जाना जाता है। प्रकार्यवाद के अन्तर्गत चेतना के विभिन्न तत्वों के अध्ययन पर अधिक जोर नही दिया जाता अपितु इसके अन्तर्गत मानसिक क्रियाओं तथा अनुकूली व्यवहारों के अध्ययन पर प्रकाश डाला जाता है। अनुकूलन सम्बन्धी व्यवहार के अन्तर्गत प्रत्यक्षीकरण, स्मृति, भाव, निर्णय एवं इच्छा इत्यादि के

अध्ययन पर बल दिया गया है क्योंकि इन प्रक्रियाओं के माध्यम से ही व्यक्ति वातावरण के साथ अच्छी तरह से समायोजन करने में समर्थ होते हैं।

2.5.1 प्रकार्यवाद का शिक्षा में योगदान

1. बालक के सर्वांगीण विकास में वातावरण को अत्यधिक महत्व देना।
2. परिस्थिति के साथ समायोजन करने की प्रवृत्ति के विकास को महत्व देना।
3. प्रकार्यवाद नें शिक्षा के अन्तर्गत उपयोगिता के सिद्धान्त को महत्व दिया। पाठ्यक्रम में केवल उन्हीं विषयों को समाहित किया जाना चाहिए जिसकी उपयोगिता समाज के लिए उपयुक्त हो।
4. इस स्कूल ने क्रमिक अधिगम जैसी शिक्षण विधि को विकसित किया।
5. शिक्षार्थियों की क्षमता में वैयक्तिक भिन्नता पर विशेष ध्यान दिया गया है।
6. बाल मनोविज्ञान एवं बुद्धि परीक्षण के अध्ययन पर अधिक ध्यान दिया गया है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. प्रकार्यवाद के प्रमुख समर्थकों के नाम लिखिए।

____

____

____

2.6 व्यवहारवाद

इस स्कूल की स्थापना जे. वी. वाटसन ने सन् 1913 ई. में संरचनावाद के विरोध में की थी। इस सम्प्रदाय के अनुसार मनोविज्ञान को चेतन अनुभूति का विज्ञान न मानकर व्यवहार के विज्ञान के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। मनोविज्ञान में व्यवहार का अध्ययन करने के लिए निम्नविधियों का प्रयोग किया जाता है।

(i) प्रेक्षण विधि

(ii) अनुबन्धन के द्वारा

(iii) परीक्षण के द्वारा

(iv) शाब्दिक रिपोर्ट के द्वारा

वाटसन ने अधिगम, संवेग एवं स्मृति के क्षेत्र में प्रयोग पर आधारित अनेक कार्य किए। उनके द्वारा किए गये प्रयोग आधारित कार्यों की मान्यता आज भी शिक्षा मनोविज्ञान के

क्षेत्र में प्रशंसनीय हैं। वाटसन व्यवहार को वंशानुक्रमिक नहीं मानते बल्कि वे पर्यावरण के द्वारा निर्धारित किए जाते हैं ऐसी उनकी मान्यता थी। व्यवहारवाद के अन्तर्गत उद्दीपन की अनुक्रिया से अर्जित–अनार्जित, सुनने तथा सूँघने सम्बन्धी व्यवहार उत्पन्न होते हैं।

मैक्स मेयर, एलबर्ट पी., वीस, एडवर्ड सी., टालमैन, क्लार्क, हल एव ंबी. एफ. स्किनर का नाम व्यवहारवाद के समर्थकों में प्रचलित है।

2.6.1 व्यवहारवाद का शिक्षा में योगदान

1. व्यवहारवादियों ने शिक्षण की जिन विधियों एवं तकनीकियों को विकसित किया उसकी सहायता से बच्चों के व्यवहार का मापन बड़ी ही कुशलता के साथ किया जा सकता है।
2. अधिगम और अभिप्रेरणा के क्षेत्र में व्यवहारवादियों द्वारा जो नियम प्रस्तुत किए गये उनका शैक्षिक दृष्टि से बहुत ही महत्व है।
3. गथरी के अनुसार व्यक्ति को प्रयास करने की आवश्यकता नहीं होती। व्यक्ति किसी विषय वस्तु को एक ही प्रयास में सीख लेता है। गथरी के अनुसार बालक सरल बात को एक ही प्रयास में सीख लेता है जब कि कठिन कार्य को कई बार प्रयास करने पर सीखता है। अतः इससे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि अधिक से अधिक अभ्यास करने पर किसी कार्य को आसानी के साथ सीखा जा सकता है और उसमे स्थायित्व पाया जाता है।
4. बुरी आदतों को समाप्त करने के लिए गथरी ने तीन विधियों का प्रतिपादन किया। (1)सीमा विधि (2) थकान विधि (3) परस्पर विरोधी उद्दीपन की विधि।
5. स्किनर द्वारा दिए गये अभिक्रमित अधिगम (Programmed Learning) विधि के द्वारा अनेक प्रकार के पाठों को सरलता के साथ सीखाया जा सकता है।
6. स्किनर द्वारा प्रतिपादित भाषा विकास के सि़द्धान्त शिक्षा मनोविज्ञान के लिए एक उपयोगी विधि हैं। बच्चों में भाशा विकास अनुकरण एवं पुनर्बलन के कारण पायी जाती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. व्यवहारवाद सम्प्रदाय की स्थापना किसने और किस सन् में की थी।

____

____

2.7 मनोविश्लेषणवाद

मनोविश्लेषणवाद को स्थापित करने का श्रेय सिगमण्ड फ्रायड को जाता है। मनोविश्लेषण शब्द का उपयोग मनोविज्ञान के अर्न्तगत तीन अर्थों में किया जाता है।

1. मनोविश्लेषणवाद के अनुसार मनोविश्लेषण शब्द का प्रयोग एक सम्प्रदाय (स्कूल) के रूप में किया जाता है।
2. मनोविश्लेषणवादियों के अनुसार मनोविश्लेषण का प्रयोग एक सिद्धान्त के रूप में किया जाता है।
3. मनोविश्लेषण शब्द का प्रयोग मनोचिकित्सा की एक विधि के रूप में भी किया जाता है।

सिगमण्ड फ्रायड ने व्यक्तित्व के अन्दर अचेतन मन की क्रिया का विस्तार से विश्लेषण किया है। फ्रायड ने अचेतन, अंहवृत्ति, कामवृत्ति, अवरोध एवं दमन शैशवावस्था में यौन कामुकता, पितृ विरोधी ग्रन्थियों के सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक अध्ययन करते हुए उसके कारणों को इंगित किया है। फ्रायड ने स्वमोह, इदं, अहम, परम अहम एवं मूल प्रवृत्तियों के बारे में भी अनेंक विचारों को प्रयोगात्मक रूप से प्रस्तुत किया है।

2.7.1 मनोविश्लेषणवाद का शिक्षा में योगदान

1. शिक्षा में अचेतन अवस्थाओं की एक महत्वपूर्ण भूमिका बताई गई है। मनोविश्लेषणवाद शिक्षार्थियों के उन व्यवहारों का अध्ययन करने में सहायता प्रदान करते हैं जो वाह्य रूप से बिना कारण के दिखाई देते हैं। बालक के द्वारा सम्पादित किए गये वे कार्य जिसके बारे में बालक स्वयं भिज्ञ नहीं होता इसी अचेतन अवस्था से सम्बन्धित होते हैं।
2. सिगमण्ड फ्रायड द्वारा दिए गये इंद, अहम एवं परम अहम के माध्यम से बालकों के व्यक्तित्व को समझने में काफी मदद मिलती है। तब इदं, अहम एवं परम अहम समन्वित रूप से मिलकर प्रतिक्रिया करते है तो ऐसी स्थिति में बालक सामान्य व्यक्तित्व वाला माना जाता है और इस श्रेणी के बालकों को सामान्य योग्यता वाला बालक कहा जाता है। यदि तीनों प्रत्यय इसके विपरीत कार्य करते हैं तो बालक का व्यक्तित्व विघटनकारी होता है और इस प्रकार के बालकों के व्यवहार कुसमायोजित हो जाते हैं।
3. मनोविश्लेषणवादियों ने शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत समस्यात्मक बालकों को पहचान कर उनके समस्यात्मक होने के कारण को जानने एवं उन्हें कैसे पुनः समायोजित किया जा सकता है, के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग किए हैं।

4. बाल्यावस्था में सीखे गये ज्ञान एवं अनुभवों का प्रभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इस कारण इस सम्प्रदाय के लोगों ने बाल्यावस्था की शिक्षा व्यवस्था हेतु अनेक उपयोगी कार्य किए हैं।
5. मनोविश्लेषणवाद ने शिक्षा व्यवस्था में संवेगों की भूमिका को अत्यधिक महत्व दिया है।
6. मनोविश्लेषणवाद व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की शिक्षा पर बल देता है।
7. मनोविश्लेषणवादी सहशिक्षा का समर्थन करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. मनोविश्लेषण शब्द का प्रयोग मनोविज्ञान के क्षेत्र में किन तीन अर्थों में किया जाता है ?

____

____

____

6. मनोविश्लेषणवाद को किसनें स्थापित किया था ?

____

____

____

2.8 गेस्टाल्टवाद

मैक्स वरदाईमर द्वारा 1912 ई. में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की स्थापना जर्मनी में की गई थी। कर्ट कौफ्का एवं ओल्फगैंग कोहलर ने इस सम्प्रदाय के विकास में अपना अतुलनीय योगदान दिया है। इस सम्प्रदाय के द्वारा प्रत्यक्षीकरण के सम्बन्ध में कई प्रकार के अनुसंधान किए गये। इस सम्प्रदाय के मनोवैज्ञानिकों ने व्यवहार को सम्पूर्णता के रूप में अध्ययन करने पर विशेष रूचि दिखाई। इस सम्प्रदाय के अनुयाइयों का मत है कि अंश से मिलकर ही सम्पूर्णता का निर्माण होता है। अतः उन्होंने सम्पूर्णता में अध्ययन करने पर विशेष बल दिया है। सम्पूर्णता में अध्ययन करने की प्रवृत्ति को मनोवैज्ञानिकों ने गेस्टाल्ट की संज्ञा दी। प्रत्यक्षीकरण के अतिरिक्त इस सम्प्रदाय के प्रवर्तकों ने सीखना, चिन्तन तथा स्मृति के क्षेत्र में कार्य करते हुए महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

2.8.1 गेस्टाल्टवाद का शिक्षा में योगदान

गेस्टाल्टवादियों ने अपने सम्प्रदाय के माध्यम से अनेक नियम एवं सिद्धान्तों का अविष्कार किया जो शिक्षा मनोविज्ञान के अध्ययन के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुए।

1. गेस्टाल्टवादियों ने अपने अध्ययन के द्वारा बताया कि प्रयास एवं त्रुटि के माध्यम से अधिगम तीव्र नहीं हो सकती बल्कि उन्होंने बताया कि सीखने की प्रक्रिया में सूझ का अधिक महत्व है। किसी समस्या के समाधान के लिए व्यक्ति जो निर्णय लेता है या जो क्रिया करता है वह सहसा अचानक उत्पन्न होती है जो सूझ के माध्यम से सीखने की गति के अत्यन्त तीव्र कर देती हैं। मनोवैज्ञानिकों ने छात्रों को विषय वस्तु को सिखाने हेतु सूझ विधि से शिक्षण करने पर अधिक बल दिया है। सूझ के माध्यम से सीखी गई शिक्षा अधिक प्रबल तथा स्थाई होती है।
2. इस सम्प्रदाय के मनोवैज्ञानिकों ने चिन्तन के क्षेत्र में भी बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। इस सम्प्रदाय के मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में बहुत ही सार्थक तथ्य प्रदान किए गये हैं। बरदाईमर ने चिन्तन प्रक्रिया का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया था। वरदाईमर के अनुसार चिन्तन के तीन प्रकार बताए गये तथा इन तीनों प्रकारों का प्रयोग चिन्तन प्रक्रिया को समझने के लिए किया गया।
    1. चिन्तन का a प्रकार
    2. चिन्तन का b प्रकार
    3. चिन्तन का c प्रकार

a प्रकार का चिन्तन : यह उत्पादी चिन्तन है। इसमें बालक को लक्ष्य तक पहुँचना होता है। लक्ष्य प्राप्ति के लिए बालक जिन विधियों या तरीकों का प्रयोग करता है उसके बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील होता है। इस प्रकार के चिन्तन के अन्तर्गत बालक समस्या के विभिन्न भागों को पुनर्संगठित करता है।

y प्रकार का चिन्तन : इस प्रकार के चिन्तन में प्रयास एवं भूल की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती हैं। बालक किसी तथ्य के विषय में बिना पूर्ण जानकारी प्राप्त किए समस्या समाधान के लिए उत्सुक हो जाते हैं और बिना कुछ सोचे समझे समस्या का समाधान प्रारम्भ कर देते हैं।

अतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि y प्रकार के चिन्तन का प्रभाव व आधिपत्य अधिक होने से a प्रकार के चिन्तन के स्वरूप का प्रभाव कम हो जाता है। इसके साथ ही b प्रकार का चिन्तन एक ऐसे चिन्तन का प्रकार है जो

आंशिक उत्पादी तथा आंशिक अउत्पादी होता है। अतः हम कह सकते हैं b प्रकार का चिन्तन पूर्णतया यान्त्रिक होता है।

शिक्षाशास्त्रियों को वरदाईमर के इस शोध के माध्यम से बालकों के चिन्तन स्वरूप एवं क्रिया पद्धति को समझने में काफी मदद मिलती है।

3. गेस्टाल्टवादियों ने स्मृति को एक गत्यात्मक प्रक्रिया माना है। जब बालक किसी विषय वस्तु को सीखता है तो वह उसके मानस पटल पर एक चिन्ह के रूप में अंकित हो जाता है। इस स्मृति चिन्ह में समय के साथ–साथ क्रमिक परिवर्तन होते रहते हैं। इस प्रकार के परिवर्तन प्रत्यक्षणात्मक नियम के अनुकूल होते हैं। गिब्सन, बार्टवेल, आलपोर्ट एवं पोस्टमैन ने भी अपने प्रयोगों के माध्यम से उपरोक्त सिद्धान्त का समर्थन किया। गेस्टाल्टवादियों के अनुसार ऐसे तथ्य जो मन मस्तिष्क के द्वारा धारण किए गये उनमें विकृतियाँ आ जाती है परन्तु समय बीतने के साथ इन विकृतियों का स्वरूप मूल स्वरूप से उन्नत हो जाता है। गेस्टाल्टवादियों के इस प्रयोग से शिक्षा मनोवैज्ञानिकों को स्मृति के स्वरूप को समझने में बहुत मदद मिलती है। यही कारण है शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने स्मृति के स्वरूप को पुनरूत्पादन न मानकर रचनात्मक प्रवृत्ति का माना है।

4. सीखने के लिए अध्यापक को शिक्षार्थियों के सामने विषय वस्तु को समग्रता में प्रस्तुत करना चाहिए।

5. शिक्षार्थियों को किसी विषय वस्तु को सीखने के लिए उनके अन्दर सझ उत्पन्न करने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए। शिक्षार्थी किसी विषय वस्तु को सीखने में आने वाली समस्या का समाधान सूझ विधि से करके शीघ्र सीख लेते हैं।

6. विद्यालय में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षक, शिक्षार्थी एवं प्रधानाचार्य को संगठित होकर कार्य करना चाहिए।

अध्यापक को शिक्षार्थी के सामने सीखी जाने वाली विषय वस्तु को संगठित करके समग्रता के साथ प्रस्तुत करना चाहिए जिससे शिक्षार्थी नवीन और पुराने अनुभवों की विवेचना करके उन्हें सीख सकें।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. शिक्षा में गेस्टाल्टवादियों के दो योगदानों को लिखिए ?

____

____

8. कुछ प्रमुख गेस्टाल्टवादियों के नाम लिखिए।

____

____

____

2.9 हारमिक वाद

हारमिक मनोविज्ञान की सथापना का श्रेय सर विलियन मैकडुगल को जाता है। हारमिक शब्द का उदय ग्रीक शब्द हार्म से हुई है। Horme का अर्थ होता है वृत्ति। मनोवैज्ञानिक मैकडुगल ने अपने अध्ययन में उद्देश्यपूर्ण व्यवहार को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।

मैकडूगल ने बताया कि उद्देश्यपूर्ण व्यवहार करने में जो शक्ति पीछे छिपकर कार्य करती है उसे मूल प्रवृत्ति की संज्ञा दी गई हैं। मूल प्रवृत्ति व्यक्ति के अन्दर पायी जाने वाली मनोदैहिक प्रवृत्ति है। यह प्रवृत्ति ही उद्देश्यपूर्ण व्यवहार करने के लिए व्यक्ति को बराबर बाध्य करती है।

मैकडूगल द्वारा बताई गई सात मूल प्रवृत्तियों का सीधा सम्बन्ध किसी न किसी रूप में व्यक्ति के संवेगों से जुड़ा रहता हैं। ये मूल प्रवृत्तियाँ निम्नानुसार वर्णित हैं –

क्रम सं.	मूल प्रवृत्ति	संवेग
1	स्वीकृति	विरक्ति
2	लड़ाई	क्रोध
3	आत्मदृढ़कथन	उल्लास
4	उत्सुकता	अचरज
5	मातृत्व–पितृत्व	नरम संवेग
6	आत्म–अपमान	नकारात्मक आत्म–भाव
7	उन्मुक्ति	डर

2.9.1 हारमिकवाद का शिक्षा में योगदान

1. मूल प्रवृत्ति सिद्धान्त के माध्यम से बालकों के मूलवृत्तिक व्यवहारों को समझने में सहायता प्राप्त होती है।
2. टोरेन्स (1965) के अनुसार अध्यापक को कक्षा–कक्ष में छात्र द्वारा वर्ग में किए जाने वाले मूल प्रवृत्ति से सम्बन्धित स्वाभाविक व्यवहार का मूल्यांकन करने में काफी मदद करते हैं।

3. हारमिक मनोविज्ञान का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष समूह मस्तिष्क से सम्बन्धित है। इसके द्वारा बालकों के समूह गतिकी को समझने में काफी मदद मिलती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. मैकडूगल द्वारा प्रतिपादित सात मूल प्रवृत्तियों को लिखिए ?

____

____

____

10. हारमिक सम्प्रदाय द्वारा दिये गये सिद्धान्तों की शिक्षा में क्या उपयोगिता है? किसी एक को लिखिए।

____

____

____

निष्कर्ष स्वरूप कह सकते हैं कि हारमिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान का एक सशक्त सम्प्रदाय नहीं रहा फिर भी इस सम्प्रदाय द्वारा किए प्रयोगों का योगदान शिक्षा मनोविज्ञान तथा समाज मनोविज्ञान में बहुत उपयोगी एवं सार्थक रहा।

2.10 शिक्षा मनोविज्ञान के अध्ययन हेतु प्रयुक्त विधियाँ

शिक्षा मनोविज्ञान विषय के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए विभिन्न प्रकार कि मनोवैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है, जिनके माध्यम से छात्रों के व्यवहार की प्रतिक्रियाओं को समझा जा सके तथा उनका वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए सूचनाओं को संग्रहित किया जा सके। वैज्ञानिक विधियों द्वारा आकड़ों के संकलन, विश्लेषण तथा उनकी व्याख्या के अनुसार परिणाम प्राप्त किए जाते है जो वस्तुनिष्ठ, वैद्य, विश्वसनीय तथा निष्पक्ष होते हैं। इस प्रकार निष्कर्ष स्वरूप कह सकते हैं कि शिक्षा मनोविज्ञान की विधियाँ मनोविज्ञान की विधियों से भिन्न नहीं हो सकती। **स्किनर महोदय** ने इस सन्दर्भ में लिखा है, "शिक्षा मनोविज्ञान अपने आँकड़े एकत्रित करने और वर्गीकृत करने में विज्ञान की विधियों और उपकरणों का प्रयोग करता है।" शिक्षा मनोविज्ञान में पूर्व से ही कई प्रकार की मनोवैज्ञानिक विधियों का प्रयोग होता चला आ रहा है। समय में परिवर्तन एवं नवीन शोधों के कारण वर्तमान समय में जिन महत्वपूर्ण विधियों का प्रयोग हो रहा है उनमें से कुछ प्रमुख विधियों का विवरण निम्नवत् है।

(i) अन्तर्दर्शन विधि

(ii) बहिर्दर्शन विधि

(iii) जीवन–इतिहास विधि

(iv) विकासात्मक विधि

(v) तुलनात्मक विधि

(vi) मनोविश्लेषणात्मक विधि

(vii) नैदानिक विधि

(viii) सर्वेक्षण विधि

(ix) प्रयोगात्मक विधि

ऊपर वर्णित विधियों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन भागों में वर्गीकृत किया गया है –

(1) निरीक्षण विधियाँ (2) विवरणात्मक विधियाँ (3) प्रयोगात्मक विधियाँ।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए ?

(11) निरीक्षण विधि कितने प्रकार में वर्गीकृत है तथा उनके नाम भी लिखिए।

____

____

____

2.11 अन्तर्दर्शन विधि

इस विधि का प्रयोग मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रारम्भिक अवस्था में सबसे अधिक किया गया। इस विधि के वैज्ञानिक न होने के कारण मनोविज्ञान में इस विधि का प्रयोग अध्ययन के लिए प्रायः कम किया जाता है। वैज्ञानिकता के अभाव के कारण यह विधि उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकती। इस विधि का प्रतिपादन संरचनावाद सम्प्रदाय के जनक **विलियम वुण्ट** तथा उनके शिष्य **टिचनर** ने किया था।

अन्तर्दर्शन का अर्थ

'अपने अन्दर देखना' अन्तर्दर्शन हैं। **टिचनर** के अनुसार "अपने आत्मा में देखना अन्तर्दर्शन है।" **ऐंजिल** के अनुसार "अन्तर्प्रेक्षण ही अन्तर्दर्शन है।" अन्तर्दर्शन विधि में हम मानसिक क्रियाओं एवं प्रक्रियाओं को देखने व समझने का प्रयास करते हैं।

इस विधि के द्वारा व्यक्ति अपने अनुभवों के समय या अनुभव के पश्चात सुख–दुख, क्रोध–शान्ति, घृणा–प्रेम में अपनी मानसिक दशाओं तथा भावनाओं का अन्तर्निरीक्षण करके उनकी विवेचना और उनका विश्लेषण करते थे। तथा इसके आधार पर मनोवैज्ञानिक नियमों एवं सिद्धान्तों को प्रतिपादित करते थे। अतः इस विधि को अन्तःअवलोकन अथवा आत्मगत निरीक्षण का भी नाम दिया गया।

अन्तर्दर्शन के सम्बन्ध में **स्काउट** का कथन है– "अपने मस्तिष्क के कार्य–व्यापारों का एक क्रमबद्ध रीति से अध्ययन करना ही अन्तर्दर्शन है।"

2.11.1 अन्तर्दर्शन विधि के गुण

अन्तर्दर्शन विधि के प्रमुख गुण निम्नलिखित है –

1. अन्तर्दर्शन विधि से व्यक्ति के व्यवहार एवं उनकी कार्यशैली के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष, तत्काल एवं स्वाभाविक शिक्षा प्राप्त करते है।
2. अन्तर्दर्शन विधि से व्यक्ति स्वतः ही अपने व्यवहार का अवलोकन एवं मूल्यांकन करता है।
3. इस विधि से अध्ययन करने पर व्यय कम होता है।
4. इस विधि के लिए किसी विशेष प्रकार के मापन उपकरण एवं प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती है।
5. यह अत्यन्त सरल एवं सर्व सुलभ विधि है।
6. यह विधि अन्य विधियों द्वारा प्राप्त किए गये तथ्यों, नियमों और सिद्धान्तों की विवेचना करने में सहायता प्रदान करते हैं।
7. इस विधि के लिए किसी प्रयोगशाला की आवश्यकता नहीं होती है। **रॉस के शब्दों में,** "मनोवैज्ञानिक का स्वयं का मस्तिष्क प्रयोगशाला होता है और क्योंकि वह सदैव उसके साथ रहता है, इसलिए वह अपनी इच्छानुसार कभी भी निरीक्षण कर सकता है।"

2.11.2 अन्तर्दर्शन विधि के दोष

अन्तर्दर्शन विधि के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं –

1. इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति अपने व्यवहार का अवलोकन स्वयं करते है।
2. इस विधि के प्रयोग से शिशुओं, बालकों, निःशक्त व्यक्तियों एवं पशु–पक्षियों पर अध्ययन करना एक जटिल कार्य है।
3. इस विधि से अचेतन अवस्था के व्यवहार का अध्ययन करना कठिन कार्य है।
4. यह विधि वैज्ञानिक नही है।

5. इस विधि में मन के द्वारा मन का निरीक्षण किया जाता है। मन का निरीक्षण करना एक अत्यन्त जटिल कार्य है।
6. इस विधि द्वारा मस्तिष्क की वास्तविक परिस्थिति के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना कठिन कार्य है।
7. अन्तर्दर्शन विधि से प्राप्त सूचनाएँ आत्मनिष्ठ होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(12) अन्तर्दर्शन विधि को किसने प्रतिपादित किया था ?

____

(13) अन्तर्दर्शन के सम्बन्ध में स्काउट का कथन क्या है ?

____

2.12 बहिर्दर्शन विधि

इस विधि को प्रतिपादित करने का श्रेय व्यवहारवादी सम्प्रदाय के जनक जान वी0 वाटसन को जाता है। व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन अवलोकन विधि के द्वारा जब किया जाता है तो वह बहिर्दर्शन कहलाता है। परन्तु मनोविज्ञान के अन्तर्गत शैश्वावस्था से प्रौढ़ावस्था तक तथा मनुष्य के चेतन व अचेतन मस्तिष्क के विषय में अध्ययन करने के लिए जब अन्तर्दर्शन विधि अनुपयुक्त हो गई तब इसके लिए मनोवैज्ञानिको ने एक एक नवीन पद्धति का अविष्कार किया जिसे बहिर्दर्शन नाम दिया गया। यह विधि नवीन, वैज्ञानिक व अधिक उपयोगी सिद्ध हुई। बहिर्दर्शन विधि की विशेषता है कि इसमें निरीक्षण एवं परीक्षण दोनों विधियाँ समाहित हैं। अन्तर्दर्शन विधि के अन्तर्गत दूसरों की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। इस विधि में हम व्यक्ति के व्यवहार, आचरण, क्रियाओं–प्रतिक्रियाओं उसके मानसिक एवं शारीरिक क्रियाओं का अध्ययन, निरीक्षण एवं परीक्षण, प्रेक्षण विधि से करते हैं। व्यक्ति के द्वारा अभिव्यक्त की गई प्रतिक्रियाओं के आधार पर हम उसके व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को समझकर उनके व्यवहार का

मूल्यांकन करते हैं। यह बहुत ही सरल विधि है और कोई भी व्यक्ति इसके विषय में प्रशिक्षण प्राप्त कर इसके प्रयोग में कुशलता प्राप्त कर सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।
(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(14) बहिर्दर्शन विधि के प्रतिपादक कौन थे तथा वे किस सम्प्रदाय से सम्बन्धित थे?

____

____

____

2.12.1 बहिर्दर्शन विधि के गुण

बहिर्दर्शन विधि के प्रमुख गुण निम्नवत् हैं –

1. इस विधि का प्रयोग शिशुओं, बालकों, किशोरों एवं प्रौढ़ो के लिए किया जाता है।
2. अचेतन, अर्धचेतन, विकृत एवं विक्षिप्त मानसिक अवस्थाओं में पाये जाने वाले व्यवहारों का अध्ययन बहिर्दर्शन विधि के द्वारा सरलता के साथ किया जा सकता है।
3. इस विधि से एक साथ कई व्यक्तियों के व्यवहार का मापन अवलोकन के द्वारा लगाया जा सकता है। इससे प्राप्त परिणाम वस्तुनिष्ठ, विश्वसनीय तथा वैध होते है।
4. इस विधि से प्राप्त परिणाम संख्यात्मक होते है जिसके कारण इनका सांख्यिकीय विश्लेषण आसानी से किया जा सकता है।
5. इस विधि में वैज्ञानिकता अधिक मात्रा में पायी जाती है।
6. अन्तर्दर्शन विधि की तुलना में इस विधि से प्राप्त परिणाम अधिक यथार्थ होते है।

2.12.2 बहिर्दर्शन विधि के दोष

इस विधि के दोष निम्नवत हैं –

1. जिस प्रयोज्य पर निरीक्षण का कार्य किया जाना है उसे उसकी जानकारी होने के कारण वह पूर्व से ही उस कार्य के लिए तैयार रहता है जिसके कारण वह अपने स्वाभाविक व्यवहार एवं आदत को अभिव्यक्त नहीं करता हैं।

2. इस विधि के अन्तर्गत दूसरों के व्यवहार का अवलोकन एवं विवेचना करते समय व्यक्ति अपनी पूर्वधारणाओं एवं पूर्वाग्रहों से प्रभावित हो जाता है।
3. बहिर्दर्शन विधि द्वारा व्यवहार का अवलोकन करना एक कठिन कार्य है।
4. यौन सम्बन्धित गोपनीय व्यवहारों का अवलोकन इस विधि द्वारा आसानी से नहीं किया जा सकता है।
5. इस विधि के प्रयोग हेतु योग्य प्रशिक्षक की आवश्यकता होती है। जिससे उचित प्रशिक्षण दिया जा सके। परन्तु इसका सर्वथा अभाव रहता है।
6. इस विधि के प्रयोग में समय और श्रम अधिक लगता है।

2.13 प्रयोगात्मक विधि

जब व्यक्ति कोई कार्य अपनी उपस्थिति में सम्पन्न करता है तो निश्चित ही वह उसे अपने नियंत्रण में करने का प्रयास करता है। इस पद्धति का मुख्य उद्देश्य उद्दीपन एवं प्रतिक्रिया में प्रकार्यात्मक सम्बन्ध स्थापित करना है। शोधकर्ता प्रयोग करने के लिए परिस्थितियों को सर्वप्रथम नियंत्रित करता है उसके बाद उद्दीपन को प्रयोज्य के सामने रखता है तद्पश्चात व्यक्ति के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों का निरीक्षण करता है। चूँकि इस विधि में परिस्थिति को नियंत्रित किया जाता है इसलिए इसे नियंत्रित निरीक्षण की विधि के नाम से भी जाना जाता है। प्रयोगात्मक विधि अधिक विश्वसनीय एवं वैध होते हैं क्योंकि यह वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित होता है। प्रयोग करते समय जब शोधकर्ता के सामने समस्या आती है तो उस समस्या के समाधान के लिए अनुमान लगाता है। इस अस्थाई समाधान को सामने रखकर वह उसका परीक्षण करता है। इस अस्थाई समाधान के अनुमान को ही प्राकक्ल्पना कहते है।

शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग अत्यधिक हो रहा है। इस विधि के उचित प्रयोग के लिए इसमें निम्नलिखित बाते अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

- चरों की पहचान करना।
- चरों को परिभाषित करना।
- चरों को नियंत्रित करना।

परीक्षण के समय प्रायः पाँच प्रकार के चरों का वर्णन मिलता है, जो निम्नलिखित है–

- निराश्रित चर,
- आश्रित चर,

– परिनियामक चर,

– नियंत्रित चर एवं

– मध्यवर्ती चर।

प्रयोगात्मक विधि चरण :–

प्रयोगात्मक विधि के प्रमुख चरण निम्नलिखित हैं–

1. समस्या
2. परिकल्पना निर्माण
3. प्रयोग अभिकल्प
4. प्रतिदर्श चयन
5. प्रयोग एवं आंकड़ों का संकलन
6. आँकड़ों का विश्लेषण व परिणाम
7. परिणामों का सामान्यीकरण

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(15) प्रयोगात्मक विधि के चरणों के नाम लिखिए।

____

____

____

2.13.1 प्रयोगात्मक विधि के गुण

प्रयोगात्मक विधि के प्रमुख गुण निम्नवत वर्णित है –

1. प्रयोगात्मक विधि पूर्णतया वैज्ञानिक विधि है।
2. इस विधि से प्राप्त परिणामों में वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता एवं वैधता पायी जाती है।
3. प्रयोगात्मक विधि से प्राप्त परिणामों का पुनः परीक्षण द्वारा सत्यता की जाँच की जा सकती है।

4. इस विधि के प्रयोग से अनेक प्रकार की कठिनाइयों का समाधान किया जा सकता है।

5. पशुओं पर प्रयोग करके प्राप्त परिणामों के आधार पर उनका प्रयोग मनुष्यों के ऊपर भी किया जा सकता है।

2.13.2 प्रयोगात्मक विधि के दोष

प्रयोगात्मक विधि के दोष निम्नलिखित हैं–

1. सावधानी से परिस्थितियों का निर्माण करने के पश्चात भी इस विधि में कृत्रिमता आ जाती है।

2. प्रयोगात्मक विधि के द्वारा बालकों में डर, भय, क्रोध आदि परिस्थितियों का निर्माण करना असम्भव होता है।

3. इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति को नियंत्रित वातावरण में कार्य करना होता है जिसके कारण प्रयोगकर्ता की स्वतन्त्रता बाधित होती है जिससे प्रयोग के प्रति शोधकर्त्ता की रूचि समाप्त हो जाती है।

4. प्रयोग के दौरान व्यक्ति को बाह्य एवं आन्तरिक कारण भी प्रभावित करते हैं। बाह्य कारणों को नियंत्रित किया जा सकता है, परन्तु आन्तरिक परिस्थितियों पर नियंत्रण करना कठिन कार्य है।

5. जानवरों पर किए गये शोध से जो परिणाम प्राप्त होते हैं वैसे ही परिणाम मनुष्यों से प्राप्त हो आवश्यक नहीं है।

6. भौतिक परिस्थितियों को नियंत्रित करना सरल हो सकता है, परन्तु व्यवहार से सम्बन्धित परिस्थितियों पर नियंत्रण करना अत्यधिक कठिन होता है। अतः इस विधि से प्राप्त परिणाम त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(16) प्रयोगात्मक विधि के दो गुणों एवं दो दोषों को लिखिए।

2.14 व्यक्ति–इतिहास विधि

इस विधि के प्रयोग के लिए मनोवैज्ञानिकों को समाज में रहने वाले प्रत्येक वर्ग के व्यक्तियों के सम्पर्क में जाना पड़ता है। समाज में किसी व्यक्ति का स्वभाव कुछ और दूसरे का कुछ होता है। इस प्रकार की भिन्नता क्यों है, इसकी जानकारी ज्ञात कर मनोवैज्ञानिक इस विधि का प्रयोग कर यह समझने का प्रयत्न करते हैं कि अमुख व्यक्ति समाज विरोधी व्यवहार क्यों कर रहा है। समाज विरोधी कार्य को करने वाले व्यक्ति अपराधी, मनोरोगी, झगड़ालू तथा समस्यात्मक प्रवृत्ति के होते हैं। मनोवैज्ञानिक ने इसको जानने के लिए उसके जीवन के पूर्व इतिहास का अध्ययन करते है। इसके लिए मनावैज्ञानिक उसके परिवार के सदस्यों, मित्रों एवं सगे–सम्बन्धियों, शिक्षकों, पड़ोसियों आदि से सम्पर्क कर उसके अन्दर इस प्रकार की प्रवृत्ति क्यों आयी इसके कारणों को जानने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार वह व्यक्ति के आनुवंशिक, पारिवारिक एवं सामाजिक वातावरण, रुचियों, रहन–सहन, उसके क्रिया–कलाप, उसके स्वास्थ, संवेगात्मक विकास से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्र करते हैं। व्यक्ति के विषय में सम्यक जानकारी एकत्रित कर लेने के पश्चात अध्ययनकर्त्ता यह जानने का प्रयास करता है कि वह इस प्रकार का अवांछनीय व्यवहार किस कारण से कर रहा है। इस विधि का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के किसी विशिष्ट व्यवहार के कारणों का पता लगाना है। इस सम्बन्ध में क्रो व क्रो ने लिखा है – "जीवन इतिहास विधि का मुख्य उद्देश्य किसी कारण का निदान करना है।"

2.14.1 व्यक्ति इतिहास विधि के गुण :–

व्यक्ति इतिहास विधि के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं –

1. उपचारात्मक परामर्श व निर्देशन की दृष्टि से यह विधि उत्तम है।
2. यह विधि मन्द बुद्धि, पिछड़े बालक तथा मानसिक रूप से अक्षम बालकों का अध्ययन करने में सहायक है।
3. इस विधि में शोध करने के लिए विभिन्न स्रोतों तथा तथ्यों के संकलन से प्राप्त परिणाम विश्वसनीय एवं वैध होते है।
4. यह विधि निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण की उपयोगी विधि है।

2.14.2 व्यक्ति इतिहास विधि के दोष :–

व्यक्ति इतिहास विधि के दोष निम्नलिखित हैं–

1. इस विधि के प्रयोग में धन, समय एवं श्रम अधिक लगता है।
2. इस विधि का प्रयोग केवल प्रशिक्षित व्यक्ति के द्वारा ही किया जा सकता है।

3. इस विधि से प्राप्त सूचनाओं, तथ्यों की व्याख्या करते समय विशेषज्ञों के मत में एकरुपता नहीं पायी जाती हैं।

इस विधि से तथ्यों को एकत्र करते समय प्रयोज्य से सम्बन्धित सूचनाओं एवं विशिष्ट तथ्यों को उसके दोस्त एवं परिवार के सदस्य छिपा लेते हैं। तब ऐसी परिस्थिति में प्राप्त परिणाम विश्वसनीय नहीं होते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(17) व्यक्ति इतिहास विधि के किसी एक गुण एवं दोष को लिखिए।

2.15 विकासात्मक विधि

इस विधि के द्वारा व्यक्ति के विकास के चरण का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति के विकास की विभिन्न अवस्थाओं– शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था तथा प्रौढ़ावस्था तक होने वाले शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास के स्वरूप का अध्ययन किया जाता है। इसके माध्यम से यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि व्यक्ति के विकास पर वंशानुक्रम तथा वातावरण का क्या प्रभाव पड़ता है, विकास की विभिन्न अवस्थाओं में किस प्रकार की मानसिक क्रियाएँ होती हैं और उनकी संरचना कैसी है। इस विधि को जेनेटिक विधि के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है।

2.15.1 विकासात्मक विधि के गुण :–

विकासात्मक विधि के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं–

1. विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अध्ययन के लिए यह विधि सर्वोत्तम है।
2. यह विधि वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित है।
3. इस विधि से जो परिणाम प्राप्त होते है वे विश्वसनीय एवं वैध होते है।
4. बालक के विकासात्मक दोषों को समझने के लिए यह विधि अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

2.15.2 विकासात्मक विधि के दोषः–

विकासात्मक विधि के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं–

1. इस विधि के प्रयोग में समय, धन एवं श्रम अधिक लगता है।
2. इस विधि के द्वारा अचेतन व्यवहारों का अध्ययन सम्भव नहीं है।
3. अनुमान पर आधारित होने के कारण इस विधि से प्राप्त परिणाम विश्वसनीय नहीं होते हैं।
4. मानवीय विकास की विभिन्न अवस्थाओं को कई कारक प्रभावित करते हैं, उन सभी कारकों को एक साथ नियंत्रित करके अध्ययन करना सम्भव नहीं है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(18) विकासात्मक विधि के दो गुणों को लिखिए।

____

____

____

2.16 तुलनात्मक विधि

इस विधि का प्रयोग शोध कार्यों हेतु किया जाता है। इस विधि में प्राणियों के व्यवहार सम्बन्धी समानताओं तथा विषमताओं का अध्ययन किया जाता है। इसमें विभिन्न पशुओं के व्यवहार, मूल प्रवृत्तियों तथा बुद्धि विकास का अध्ययन किया जाता है और उनकी तुलना मानव व्यवहारों से की जाती है।

तुलनात्मक विधि के सम्बन्ध में लेण्डन का मत है– "तुलना का अर्थ एक तथ्य को दूसरे के साथ रखने और दोनों के निकट सम्बन्ध का अध्ययन करने से है।"

2.16.1 तुलनात्मक विधि के गुणः–

तुलनात्मक विधि के गुण निम्नलिखित हैं–

1. ऐसे प्रयोग जो मनुष्यों के ऊपर नही प्रशासित किए जा सकते, उन प्रयोगों को पशुओं के ऊपर प्रशासित करके नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित करने की यह उत्तम विधि है।
2. मानव व्यवहार सम्बन्धी समानताओं एवं विशमताओं का पता वैज्ञानिक ढंग से ज्ञात करने की यह सर्वोत्तम विधि है।

3. अन्य प्रजातियों के लिए पूर्व से उपलब्ध ज्ञान के आधार पर व्यवहार को समझना सरल हो जाता है।

2.16.2 तुलनात्मक विधि के दोषः–

तुलनात्मक विधि के दोष निम्नलिखित हैं–

1. मानव एवं जानवर में भिन्नता होने के कारण जानवरों के लिए बनाए गये नियमों को मनुष्य के ऊपर प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है।
2. इस विधि का प्रयोग करते समय अन्य विधियों का भी सहयोग लिया जाता है क्योंकि यह विधि स्वयं में पूर्ण नहीं है।
3. इस विधि में एक प्रजाति से प्राप्त ज्ञान को अन्य प्रजातियों पर सावधानी के साथ प्रयुक्त किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(19) तुलनात्मक विधि के सम्बन्ध में लेण्डन महोदय द्वारा व्यक्त किए गये मत को लिखिए।

____

____

____

2.17 मनो–विश्लेषणात्मक विधि

वियना के प्रसिद्ध मनोचिकित्सक सिगमण्ड फ्रायड इस विधि के आविष्कारक माने जाते हैं। इस विधि के द्वारा व्यक्ति के 'अचेतन मन' का अध्ययन करके, उसकी दमित इच्छाओं के सम्बन्ध में सूचनाएँ एकत्र की जाती हैं। शिक्षा शब्दकोष में मनोविश्लेषणात्मक विधि के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है, "मनोविश्लेषणात्मक विधि सामान्य एवं असमान्य प्रतिक्रियाओं और अचेतन मानसिक प्रक्रिया के अध्ययन द्वारा मन के गहन कारणों को खोजने के लिए सिगमण्ड फ्रायड द्वारा प्रतिपादित एक तकनीकी विधि है।"

2.17.1 मनो–विश्लेषणात्मक विधि के गुणः–

इस विधि के गुण निम्नलिखित हैं–

1. इस विधि से व्यक्ति के चेतन एवं अचेतन मन का अध्ययन किया जाता है।
2. इस विधि के प्रयोग से व्यक्ति की भावना ग्रन्थियों की जानकारी प्राप्त करना तथा मानसिक विकारों आदि को दूर करना सम्भव है।
3. इस विधि में व्यक्ति अपने मन की बातों को छिपा नहीं सकता है।

2.17.2 मनो–विश्लेषणात्मक विधि के दोषः–

इस विधि के दोष निम्नलिखित हैं–

1. इस विधि का प्रयोग विशेषज्ञों के माध्यम से ही किया जा सकता है। विशेषज्ञों की सहायता न लेने पर इस विधि से प्राप्त परिणाम असत्य, अधूरे व गलत हो सकते हैं।
2. इस विधि के प्रयोग में श्रम, समय और धन अधिक लगता है।
3. व्यक्ति के मन में छिपी अनेक इच्छाओं के सार्वजनिक हो जाने के कारण लोग इस विधि के प्रयोग हेतु अपना सहयोग नहीं प्रदान करते है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

(20) मनो–विश्लेषणात्मक विधि के आविष्कारक का नाम लिखिए।

____

____

____

2.18 नैदानिक विधि

मनोविज्ञान के अन्तर्गत इस विधि का प्रयोग व्यक्ति के सामने आने वाली समस्याओं के कारणों का पता लगाने के लिए किया जाता है। इस विधि के द्वारा बालकों की समस्याओं से सम्बन्धित कारणों का अध्ययन करके कठिनाइयों को दूर करने का प्रयत्न किया जाता है। इसे उपचारात्मक उपाय भी कह सकते हैं।

निदानात्मक विधि में तीन कार्य अनिवार्य रूप से निहित होने चाहिए–

(1) **निदान** – इसमें कारणों की जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

(2) **विहितीकरण** (Prescription) – इसमें केस से सम्बन्धित कठिन बातों का बोध किया जाता है।

(3) **उपचार** – इसके द्वारा अपक्रिया (Malfunctioning) में सुधार लाया जाता है।

उपचारात्मक विधि के सम्बन्ध में **स्किनर** का विचार है – ”उपचारात्मक विधि साधारणतया विशिष्ट सीखने, व्यक्तित्व अथवा जटिल प्रकृति की व्यवहार कठिनाइयों का अध्ययन करने में प्रयोग की जाती है और अध्ययन के अन्तर्गत केस के लिए उपयुक्त विविध उपचारात्मक कार्य विधियों–प्रविधियों का उपयोग करती है,“

निदानात्मक विधि शिक्षा से जुड़ी हुई समस्याओं के निदान करने की एक उपयोगी विधि है। इस विधि के माध्यम से हकलाने वाले, अपराधी प्रवृत्ति वाले बालकों की समस्याओं, पिछड़े बालकों की कठिनाइयों को जानने, प्रतिभाशाली बालकों के सामान्य कक्षा के छात्रों के साथ सामंजस्य स्थापित न कर पाने के कारणों का पता लगाने इत्यादि कार्य में प्रयोग किया जा सकता हैं।

2.18.1 नैदानिक विधि के गुणः–

नैदानिक विधि के गुण निम्नलिखित हैं :–

1. समस्याओं के समाधान के लिए नैदानिक विधि का प्रयोग किया जाता है। समस्याओं की सम्यक जानकारी हो जाने के पश्चात ही व्यक्तियों को उपचारात मक उपाय दिये जा सकते है।
2. छात्रों की शैक्षिक प्रगति में आने वाली समस्याओं को समाप्त करने के लिए यह विधि अत्यन्त सिद्ध होती है।

2.18.2 नैदानिक विधि के दोषः–

नैदानिक विधि के दोष निम्नलिखित है :–

1. इस विधि का प्रयोग कुशल मनोचिकित्सक के द्वारा ही सम्भव है।
2. इस विधि में समय, श्रम तथा धन अधिक लगता है।

विद्यालयों में सुविधाओं के अभाव के कारण इस विधि के द्वारा छात्रों की समस्याओं का उचित समाधान नहीं हो पाता है।

2.19 सर्वेक्षण विधि

मनोविज्ञान की यह अत्यधिक महत्वपूर्ण विधि है। इस विधि में व्यक्तियों के प्रतिदर्ष से आकड़ों को एकत्र करके उनका सामान्यीकरण किया जाता है, इसलिए इसे सांख्यिकीय विधि भी कहा जाता है। शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में इस विधि को एक उपयोगी एवं विश्वसनीय विधि के रूप में स्वीकार किया गया है। अवलोकन, साक्षात्कार,

प्रश्नावली, परीक्षण इत्यादि मापन उपकरणों एवं प्रविधियों के प्रयोग से प्राप्त ऑकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करके परिणाम एवं निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं। इस विधि से प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता एकत्र किये गये ऑकड़ों की विश्वसनीयता पर निर्भर होती है।

2.19.1 सर्वेक्षण विधि के गुणः–

सर्वेक्षण विधि के गुण निम्नलिखित हैं–

1. यह विधि पूर्णतया वैज्ञानिक है। इस विधि के प्रयोग में गणित की सहायता ली जाती है। गणितीय सहायता के कारण इसमें विश्वसनीयता एवं प्रमाणिकता अधिक पायी जाती है।
2. इस विधि में न्यादर्श से प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किए जाते है।
3. सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग में विभिन्न चरों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों का विस्तृत अध्ययन किया जाना इस विधि के माध्यम से सम्भव है।

2.19.2 सर्वेक्षण विधि के दोषः–

सर्वेक्षण विधि के दोष निम्नलिखित हैं–

1. इस विधि के द्वारा व्यक्तिगत समस्याओं का अध्ययन नहीं किया जा सकता क्योंकि दत्त सामग्री का सम्बन्ध समूहों से होता है।
2. इस विधि का प्रयोग विषय विशेषज्ञ द्वारा ही किया जा सकता है।

   इस विधि से प्राप्त परिणामों की वैधता एवं विश्वसनीयता न्यादर्श से प्राप्त आकडों की वैधता एवं विश्वसनीयता पर निर्भर करती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(21) सर्वेक्षण विधि के दो गुणों एवं दोषों को लिखिए?

____

____

____

2.20 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत मनोवैज्ञानिकों द्वारा समय–समय पर स्थापित किए गये सम्प्रदायों का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसके अन्तर्गत विभिन्न सम्प्रदायों के समर्थकों का योगदान तथा सम्प्रदायों के विभिन्न प्रकारों का विवेचन किया गया है। कुछ प्रमुख सम्प्रदायों में संरचनावाद, प्रकार्यवाद, व्यवहारवाद, गेस्टाल्टवाद, मनोविश्लेषणवाद तथा हारमिकवाद के सन्दर्भ में उनके द्वारा प्रतिपादित विभिन्न सिद्धान्तों एवं नियमों की व्याख्या की गई है। इसके साथ ही इनकी शिक्षा जगत में क्या योगदान हैं इसे भी उल्लिखित किया गया है।

प्राचीन शिक्षा व्यवस्था में वैज्ञानिकता का अभाव था जिसके कारण प्राप्त निष्कर्षों को सत्यता की कसौटी पर कसा नहीं जा सकता था और उस विधि से प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता पर संदेह बना रहता था। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में अध्ययन हेतु कई प्रकार की नवीन शिक्षण प्राविधियों एवं विधियों का उपयोग होने लगा। अध्ययन की सुविधा सरलता की दृष्टि से शिक्षा मनोविज्ञान की विधियों को तीन भागों में विभक्त किया गया है, जो निरीक्षण विधि, प्रयोगात्मक विधि, विवरणात्मक विधियाँ हैं।

निरीक्षण विधि में अन्तर्दर्शन विधि एवं बहिर्दर्शन विधि का अध्ययन करते हैं। अन्तर्दर्शन विधि में आत्म निरीक्षण किया जाता है और आत्मनिरीक्षण करना एक कठिन कार्य है। जबकि बहिर्दर्शन विधि के द्वारा दूसरे व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। यह पद्धति अधिक वैज्ञानिक है इसलिए इससे प्राप्त परिणाम विश्वसनीय एवं वैध माने जाते है। प्रयोगात्मक विधि में प्रयोग नियंत्रित परिस्थिति में किए जाते हैं इसलिए इस विधि का प्रयोग बहुतायत किया जाता है। विवरणात्मक विधियों के अन्तर्गत जीवन इतिहास विधि, विकासात्मक विधि, तुलनात्मक विधि, मनोविश्लेषणात्मक विधि, नैदानिक विधि एवं सर्वेक्षण विधि आती हैं। इन विधियों के प्रयोग से प्राप्त परिणाम विश्वसनीय एवं वैद्य होते हैं।

2.21 अभ्यास कार्य

1. सम्प्रदाय को स्पष्ट करते हुए संरचनावाद का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. मनोविश्लेषवाद का सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. प्रकार्यवाद का शिक्षा में क्या योगदान है लिखिए।
4. गेस्टाल्टवाद एवं व्यवहारवाद का विस्तृत वर्णन कीजिए।
5. हारमिक मनोविज्ञान पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

6. शिक्षा मनोविज्ञान की प्रमुख विधियाँ कौन–कौन हैं? किसी एक विधि का सविस्तार वर्णन कीजिए।
7. शिक्षा मनोविज्ञान में प्रायोगिक विधि के महत्व पर प्रकाश डालिए। इसके गुण एवं दोषों को भी लिखिए।
8. अन्तर्दर्शन एवं बहिर्दर्शन विधि में अन्तर लिखिए।
9. व्यक्ति इतिहास विधि का वर्णन कीजिए।
10. तुलनात्मक विधि क्या हैं? इसके गुणों एवं दोषों को भी लिखिए।

2.22 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Agrawal, J.C. (1995) : Essentials of Educational Psychology, Vikas Publishing House Private Limited, New Delhi.

Bhatia, H.R. (1977) : A Text book of Educational Psychology, Macmillan, New Delhi.

Chauhan, S.S. (1988) : Advanced Educational Psychology, Vikas Publishing House, New Delhi.

Sharma, R.N. (1984) : System of Psychology, Surjeet Publication, Delhi.

Srivastav, D.S. (2008) : Educational Psychology, Shree Publishers & Distributors, 20, Ansari Road, Daryaganj, New Delhi.

Wolman, Benjamin B. (1995) : Contemporary Theories and systems in Psychology, Freeman Book company, Delhi.

गुप्ता, एस0पी0 एवं गुप्ता, अलका (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद।

पाण्डेय, के0पी0 (2007) : नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी।

पाण्डेय, रामशकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर0 लाल बुक डिपो, निकट गवर्नमेन्ट इण्टर कालेज, मेरठ।

भटनागर, सुरेश (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर लाल बुक डिपो, मेरठ।

सिंह आर0 एन0 (2001) : आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

सिंह अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी0बी0 प्रिन्टर्स पटना।

स्व अध्ययन सामग्री एम.ए.ई.डी.–02, उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

स्व अध्ययन सामग्री यू.जी.ई.डी.–02, उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

2.23 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (क) संवेदना (ख) प्रतिभा (ग) अनुराग
2. (i) यह अनुभव के द्वारा सीखने पर बल देता है।

(ii) यह वाद शिक्षा में शोध को प्रोत्साहित करने पर बल देता है।

3. विलियम जेम्स, जान डिवी, जेम्स आर. एंजिल, हार्वे ए. कार्र एवं वुडवर्थ।
4. व्यवहारवाद की स्थापना वाटसन ने सन् 1913 ई. में की थी।
5. (i) मनोविश्लेषण शब्द को प्रयोग एक सम्प्रदाय के रूप में किया जाता है।

   (ii) मनोविश्लेषण शब्द को प्रयोग एक सिद्धान्त के रूप में किया जाता है।

   (iii) मनोविश्लेषण शब्द को प्रयोग मनोचिकित्सा की एक विधि के रूप में किया जाता है।
6. सिगमण्ड
7. (i) सीखने के लिए अध्यापक को शिक्षार्थियों के सामने विषय वस्तु को समग्रतामें प्रस्तुत करना चाहिए।

(ii) विद्यालय में सीखने–सीखाने की प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षक,शिक्षार्थी एवं प्रधानाचार्य को संगठित होकर कार्य करना चाहिए।

8. मैक्स वरदाईमर, कर्ट कोफ्का एवं ओल्फ गैंग कोटलर।
9. स्वीकृति, लड़ाई, आत्मदृढ़कथन, उत्सुकता, मातृत्व–पितृत्व, आत्म अपमान एवं उन्मुक्ति।
10. मूल प्रवृत्ति सिद्धान्त के माध्यम से बालकों के मूलवृत्तिक व्यवहारों को समझने में सहायता प्राप्त होती हैं।
11. निरीक्षण विधि दो प्रकार की होती है :–

    क – अन्तर्दर्शन विधि

    ख – बहिर्दर्शन विधि
12. अन्तर्दर्शन विधि का प्रतिपादन संरचनावाद क`जनक विलियम वुण्ट तथा उनके शिष्य टिचनर ने किया था।

13. "अपने मस्तिष्क के कार्य व्यापारो का एक क्रमबद्ध रीति से अध्ययन करना ही अन्तर्दर्शन है।"

14. बहिर्दर्शन विधि के प्रतिपादक जान वी0 वाटसन थे तथा वे व्यवहारवादी सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते थे।

15. समस्या, परिकल्पना निर्माण, प्रयोग अभिकल्प, प्रतिदर्श चयन, प्रयोग एवं आकड़ो का संकलन, आंकड़ो का विश्लेषण व परिणाम तथा परिणामों का सामान्यीकरण।

16. **प्रयोगात्मक विधि के गुण –**

    (i) यह पूर्णतया वैज्ञानिक विधि है।

    (ii) प्रयोगात्मक विधि द्वारा प्राप्त परिणामों में वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता एवं वैधता होती है।

प्रयोगात्मक विधि के दोष –

(i) सावधानी से परिस्थितियों का निर्माण करने के पश्चात भी उसमें कृत्रिमता आ जाती है।

(ii) प्रयोगात्मक विधि के द्वारा बालकों में डर, भय, क्रोध, आदि परिस्थितियों का निर्माण करना असम्भव होता है।

17. **गुणः** यह विधि निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण कि उपयोगी विधि है।

    दोषः इस विधि के प्रयोग में धन, समय और श्रम अधिक खर्च होता है।

18. **गुण :**

    1. यह विधि वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित है।

    2. इस विधि से जो परिणाम प्राप्त होते हैं वे विश्वसनीय एवं वैध होते हैं।

19. "तुलना का अर्थ एक तथ्य को दूसरे के साथ रखने और दोनो के निकट सम्बन्ध को अध्ययन करने से है।"

20. सिगमण्ड फ्रायड

21. सर्वेक्षण विधि के गुण –

    (i) यह विधि पूर्णतया वैज्ञानिक है। इस विधि के प्रयोग में गणित की सहायता ली जाती है। गणितीय सहायता के कारण इसमें विश्वसनीयता एवं प्रमाणिकता अधिक पायी जाती है।

(ii) इस विधि में न्यादर्श से प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये जाते है।

सर्वेक्षण विधि की के दोष

(i) इस विधि के द्वारा व्यक्तिगत समस्याओं का अध्ययन नहीं किया जा सकता क्योंकि दत्त सामग्री का सम्बन्ध समूहों से होता है।

(ii) इस विधि से प्राप्त परिणामों की वैधता एवं विश्वसनीयता न्यादर्श से प्राप्त आकड़ों की वैधता एवं विश्वसनीयता पर निर्भर करती है।

इकाई –3 वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएँ

इकाई की रूपरेखा –

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्‌देश्य

3.3 वृद्धि

3.4 विकास

3.4.1 वृद्धि और विकास की परिभाषाएँ

3.5 वृद्धि और विकास में विभिन्नताएँ

3.6 विकास क्रम में परिलक्षित होने वाले परिवर्तन

3.7 विकास के सिद्धान्त

3.7.1 विकास की दिशा का सिद्धान्त

3.7.2 निरन्तरता का सिद्धान्त

3.7.3 विकास की गति में वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त

3.7.4 विकास के क्रम का सिद्धान्त

3.7.5 संतुलित विकास का सिद्धान्त

3.7.6 सामान्य से विशिष्ट की ओर का सिद्धान्त

3.8 विकास की विभिन्न अवस्थाएँ

3.9 शैशवावस्था का अर्थ, महत्व विशेषताएँ एवं शिक्षा व्यवस्था

3.9.1 शैशवावस्था का अर्थ एवं महत्व

3.9.2 शैशवावस्था की प्रमुख विशेषताएँ

3.9.3 शैशवावस्था में शिक्षा व्यवस्था

3.9.4 शैशवावस्था के शैक्षणिक स्वरूप का महत्व

3.10 बाल्यावस्था का अर्थ, महत्व, विशेषताएँ एवं शिक्षा व्यवस्था

3.10.1 बाल्यावस्था का अर्थ एवं महत्व

3.10.2 बाल्यावस्था की प्रमुख विशेषताएँ

3.10.3 बाल्यावस्था में शिक्षा व्यवस्था

3.11 किशोरावस्था का अर्थ, परिभाषाएँ, विशेषताएँ एवं शिक्षा व्यवस्था

3.11.1 किशोरावस्था का अर्थ एवं परिभाषाएँ

3.11.2 किशोरावस्था की विशेषताएँ

3.11.3 किशोरावस्था में शिक्षा व्यवस्था

3.12 सारांश
3.13 अभ्यास के प्रश्न
3.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें
3.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना

मानव के जीवन में नित प्रतिदिन नवीन परिवर्तन होते रहते हैं। मनुष्य के जीवन में प्रतिपल परिवर्तन होते रहते है। अतः हम कह सकते है मनुष्य का जीवन परिवर्तनशील हो। मानव का जीवनकाल कई स्तरों से होकर आगे बढता है और उसके प्रत्येक स्तर में परिवर्तन निश्चित है। व्यक्ति – व्यक्ति में अन्तर होने के कारण उनके अन्दर परिवर्तन भी कई प्रकार के होते है। सभी जीवधारियों में वृद्धि और विकास की अवस्था लगभग एक जैसी होती है। शिक्षा मनोविज्ञान के अर्न्तगत वृद्धि शब्द से आशय व्यक्ति के शारीरिक संरचना एवं उनके क्रियाओं में होने वाले परिमाणात्मक परिवर्तन से है। विकास के क्रम को व्यक्ति अपने अनुभवों, योग्यताओं एवं परिपक्वता के आधार पर प्राप्त करता रहता है। विकास में गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दोनो पक्ष निहित होते है। व्यक्ति के अन्दर विकास की विभिन्न क्रियाओं जैसे– शारीरिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं संवेगात्मक पक्ष में परिवर्तन होता रहता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन काल की विभिन्न अवस्थाओं शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावास्था एवं वृद्धावस्था से होकर आगे बढना पड़ता है। प्रस्तुत इकाई में वृद्धि एवं विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन करके विषय के सम्बन्ध में सम्यक जानकारी उपलब्ध कराई जायेगी।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इस योग्य हो जायेगे कि :

- वृद्धि एवं विकास की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।
- वृद्धि और विकास में भेद कर सकेंगे।
- वृद्धि और विकास की विभिन्न अवस्थाओं के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- वृद्धि और विकास की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- विकास के सिद्धान्तों की विवेचना कर सकेगे।

3.3 वृद्धि

व्यक्ति के अन्दर होने वाले परिमाणात्मक परिवर्तनों के लिए वृद्धि शब्द का प्रयोग किया जाता है। माँ के गर्भ में भ्रूण बनने के बाद जब बालक का जन्म होता है तब शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक जाने की प्रक्रिया में उसके अंगो के आकार, लम्बाई तथा भार इत्यादि में परिवर्तन होता है जिसे वृद्धि कहा जाता है। वृद्धि का मापन किया जा सकता है। बालकों की वृद्धि की अवस्था का स्पष्ट अवलोकन अन्य व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है। कभी–कभी बालक का शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है परन्तु उसमें कार्य करने की क्षमता एवं योग्यता मन्द होती है। वृद्धि की तुलना में विकास की गति धीमी होती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे लिखे रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।
(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(1) परिमाणात्मक परिवर्तन सम्बन्धित है–
(क) वृद्धि से
(ख) विकास से

____

____

____

3.4 विकास

गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक चलने वाली विकास की अवस्थाओं में क्रमिक परिवर्तन होते रहते है। इस प्रकार श्रृंखलाबद्ध परिवर्तनों के क्रमों को विकास कहा जाता है।

व्यक्ति में जन्म से लेकर मृत्यु तक विकास की विभिन्न अवस्थाओं में परिवर्तन होते रहते है। व्यक्ति तथा उसके पर्यावरण के मध्य एक प्रकार से पारस्परिक अन्तःक्रिया होती रहती है। इन प्रक्रियाओं के हाने से व्यक्ति के अन्दर एक स्पष्ट संरचना और प्रकार्यों का जन्म होता रहता है। अतः निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते है कि समस्त परिवर्तनों की इस क्रमिक श्रृंखला को ही 'विकास' कहते है। व्यक्ति का विकास जैसे–जैसे होता है, उसके अन्दर परिवर्तन पूर्णतया स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगते हैं। विकास का यह क्रम व्यक्ति की आयु के बढ़ने के साथ–साथ उसके

शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक स्तर को भी प्रभावित करता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति में अनेकों प्रकार की विशेषताएँ, क्षमताएँ व योग्यताएँ स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

3.4.1 वृद्धि तथा विकास की परिभाषाएँ

(1) हरलाक के शब्दों में — '' विकास अधिक वृद्धि तक ही सीमित नहीं है, इसके बजाय इसमें प्रौढ़ावस्था के लक्ष्य की ओर परिवर्तनों का प्रगतिशील क्रम निहित रहता है। विकास के परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन विशेषताएँ और नवीन योग्यताएँ प्रकट होती हैं।''

"Development is not limited to growing larger instead, it consist of a progressive series of changes towards the goal of maturity. Development results in new characteristics and new abilities on the part of the individual."

- **Hurlock**

(2) मेंरीडिथ के अनुसार '' कुछ लेखक अभिवृद्धि का प्रयोग केवल आकार की वृद्धि के अर्थ में करते हैं और विकास का भेदीकरण या विशिष्टीकरण के अर्थ में।''

Some writers reserve the use of 'growth' to designate increments in size and of 'development' to mean differentiation." - **Meridith**

3.5 वृद्धि और विकास में विभिन्नताएँ

क्रमांक	वृद्धि	विकास
1.	वृद्धि एक निश्चित आयु तक चलने वाली प्रक्रिया है।	यह आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है।
2.	इसका स्वरूप बाह्य होता है।	इसका स्वरूप आन्तरिक होता है।
3.	वृद्धि, विकास का एक स्तर है।	विकास में वृद्धि समाहित होती है।
4.	वृद्धि केवल शारीरिक परिवर्तनों में परिलक्षित होती है।	विकास के सभी पक्षों शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक में परिवर्तन संयुक्त रूप से विकसित होता है।
5.	वृद्धि के अन्दर परिमाणात्मक परिवर्तनों के गुण पाये जाते है।	इसमें गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दोनों प्रकार के गुण पाये जाते हैं।

6.	वृद्धि का मापन किया जा सकता है।	विकास में होने वाले परिवर्तन का मापन नही किया जा सकता, केवल उसकी अनुभूति की जा सकती है।
7.	वृद्धि में कोई निश्चित क्रम नहीं होता है।	विकास में निश्चित क्रम होता है।
8.	वृद्धि का प्रयोग संकुचित अर्थ में किया जाता है।	विकास शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जाता है।
9.	वृद्धि की कोई निश्चित दिशा नहीं होती है।	विकास की एक निश्चित दिशा होती है।
10.	वृद्धि का कोई लक्ष्य नहीं होता है।	विकास का लक्ष्य निश्चित होता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(2) वृद्धि एवं विकास के दो प्रमुख भेदों को लिखिए।

____

____

____

3.6 विकास क्रम में परिलक्षित होने वाले परिवर्तन

मानव विकास की प्रक्रिया में होने वाले परिवर्तनों ने हरलाक में चार प्रकार के बताए है जो निम्नवत् वर्णित है –

(क) आकार में परिवर्तन

बालक के शारीरिक विकास की अवस्था में उसके आकार में परिवर्तन होता है। बालक के उम्र बढ़ने के साथ उसमे शारीरिक विकास के दौरान उसकी लम्बाई चौड़ाई एवं वजन में वृद्धि हो जाता है। बालक के आन्तरिक अंगो की संरचना में भी वृद्धि होती है।

(ख) शरीर के अंगों में आनुपातिक परिवर्तन

बालक के शरीर का विकास एक निश्चित आयु के बाद अवरूद्ध हो जाता है। बालक के शारीरिक विकास की प्रक्रिया में उसके समस्त अंगो में परिवर्तन एक निश्चित

अनुपात में होता है। बाल्यावस्था जब अपनी चरम स्थिति में होती है उस समय बालक का शारीरिक विकास प्रौढ़ के समान परिलक्षित होता है।

(ग) पुराने चिन्हों का विलोप होना

बच्चा ज्यों–ज्यों बड़ा होता है उसके अन्दर से बचपन की कुछ आदतों एवं विशेषताओं का विलोप हो जाता है, जैसे– बच्चे का रोना, रेंगकर एवं घुटने के बल चलना, दूध के दाँतो का क्षय होना एवं बोली में परिवर्तन, इसके अतिरिक्त थाइमस ग्रन्थि एवं पीनियल ग्रन्थि भी समाप्त हो जाती है।

(घ) नये चिन्हों का प्रकट होना –

विकास की अवस्था में कुछ पुराने चिन्ह समाप्त हो जाता है एवं कुछ नवीन चिन्ह उत्पन्न हो जाते है जैसे नये दाँतो का निकलना, यौनांगो का विकास, दाढ़ी–मूँछ का आना, गुप्तांगों पर बालों की वृद्धि इत्यादि। बालक में इन चिन्हों के उत्पन्न होने के साथ ही उनके अन्दर मानसिक विकास के लक्षण भी स्पष्ट रूप दिखाई देने लगते है, यथा – भाषा – कौशलों का विकास, नैतिक मूल्यों का विकास, धार्मिक विश्वास एवं यौन सम्बन्धी जिज्ञासा।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिए गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(3) हरलाक के अनुसार मानव विकास की प्रक्रिया के नाम बताइए

____

____

____

3.7 विकास के सिद्धान्त

विकास के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन निम्नवत् वर्णित है।

3.7.1 विकास की दिशा का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार विकास ऊपर से नीचे की ओर होता है,जबकि मानसिक क्षेत्र में यह मूर्त से अमूर्त चिन्तन की क्षमता की ओर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

3.7.2 निरन्तरता का सिद्धान्त

मानव के अन्दर विकास की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती हैं। इस प्रकार व्यक्ति के अन्दर विकास गर्भावस्था से प्रारम्भ होकर जीवन पर्यन्त चलती रहती है। व्यक्ति के

अन्दर केवल आकार–प्रकार उसके कार्य करने की क्षमता में ही विकास के द्वारा परिवर्तन नही होता बल्कि विकास के साथ ही बालकों के व्यवहार में भी परिवर्तन आता है जिसके द्वारा व्यक्ति में परिपक्वता आती है। विकास एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। विकास जीवन में कभी तीव्रगति से व कभी धीमी गति से चलता है।

स्किनर के शब्दों में – ''विकास–प्रक्रियाओं की निरन्तरता का सिद्धान्त केवल इस तथ्य पर बल देता है कि व्यक्ति में कोई आकस्मिक परिवर्तन नही होता है।''

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे लिखे रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(4) निरन्तरता के सिद्धान्त के सम्बन्ध में स्कीनर द्वारा दिए गये वक्तव्य को लिखिए।

____

____

____

3.7.3 विकास की गति में वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त :–

विभिन्न प्रकार के अध्ययनों से स्पष्ट है कि बालक एवं बालिकाओं में विकास की गति में अन्तर पाया जाता है। एक ही आयु वर्ग के बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक विकास में विभिन्न प्रकार की विभिन्नताएँ पायी जाती हैं। **स्किनर के अनुसार** – ''विकास के स्वरूपों में व्यापक वैयक्तिक भिन्नताएँ होती है।''

3.7.4 विकास के क्रम का सिद्धान्त

''इस सिद्धान्त के अन्तर्गत बच्चों के अन्दर चलने, बोलने एवं भाषायीय ज्ञान का विकास क्रमबद्ध तरीके से होता है। बच्चें तीन महिने के बाद एक विशेष प्रकार की आवाज निकालने लगते हैं, 6 माह के बाद उसमें खिलखिला कर हँसने वाली ध्वनि का विकास होता है। 17 माह के पश्चात् भाषा सम्बन्धी विकास के फलस्वरूप वह माता–पिता के लिए ''मा'', ''पा'' जैसे शब्दों का उच्चारण करना सीख लेता है।

3.7.5 संतुलित विकास का सिद्धान्त :–

बच्चों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास के सभी पक्ष एक दूसरे से सम्बन्धित होते है। विकास के प्रत्येक स्तर आपस में परस्पर सम्बन्धित होने के कारण बच्चे के विकास की गति संतुलित होती है। इस सम्बन्ध में **गैरिसन**

का विचार है कि – ''शरीर सम्बन्धी दृष्टिकोण व्यक्ति के विभिन्न अंगों के विकास में सामंजस्य एवं परस्पर सम्बन्ध पर बल देता है।''

3.7.6 सामान्य से विशिष्ट की ओर का सिद्धान्त :–

''इस सिद्धान्त के अनुसार विकास की प्रक्रिया में बच्चा बहुत ही साधारण अनुक्रियाएँ करता है, इसके पश्चात वह विशिष्ट अनुक्रियाओं को करने के लिए प्रेरित होता है। इस सम्बन्ध में **मनोवैज्ञानिक हरलॉक का कथन है–** 'मानसिक एवं शारीरिक अनुक्रियाओं में सामान्य क्रिया विशिष्ट क्रिया से सदैव पहले होती है।''

3.8 विकास की विभिन्न अवस्थाएँ

विकास की प्रक्रिया जन्म से लेकर मृत्यु तक सतत् निरन्तर चलती रहती है। इसके अन्तर्गत जीवधारियों का विकास भ्रूणावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक आयु के बढ़ने के साथ–साथ निरन्तर चलती रहती है। बढ़ती उम्र के साथ–साथ विकास की विभिन्न अवस्थाओं में बाह्य एवं आन्तरिक संरचना की दृष्टि से उसके आकार एवं प्रकार्यों में परिवर्तन होता रहता हैं। रॉस महोदय के अनुसार विकास में चार अवस्थाएँ होती है–

1. शैशवावस्था – (जन्म से 5 या 6 वर्ष तक)
2. बाल्यावस्था – (5 या 6 वर्ष से 12 वर्ष तक)
3. किशोरावस्था – (12 या 13 वर्ष से 18 या 19 वर्ष तक)
4. प्रौढ़ावस्था – (18 या 19 वर्ष से मृत्युपर्यन्त)

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।
(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(5) रॉस महोदय के अनुसार विकास की प्रत्येक अवस्था के नाम लिखिए।

——————————————————————————————

——————————————————————————————

——————————————————————————————

(6) 12 या 13 वर्षों से लेकर 18 या 19 वर्ष तक की आयु तक के बालक को किस अवस्था में स्थान दिया गया है।

——————————————————————————————

——————————————————————————————

3.9 शैशवावस्था का अर्थ, महत्व, विशेषताएँ एवं शिक्षा व्यवस्था

3.9.1 शैशवावस्था का अर्थ एवं महत्व :–

यह अवस्था शिशु के जन्म लेने के बाद 5 से 6 वर्ष तक रहती है। इस अवस्था के शिशु अपनी माता के ऊपर पूर्णतया आश्रित होता है। इस अवस्था को भविष्य की आधारशिला के नाम से भी जाना जाता है। **(i) सिगमण्ड फ्रायड** ने इस दिशा में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि व्यक्ति को अपने भविष्य में क्या बनना है इसका निर्धारण 5–6 वर्ष तक की आयु में ही हो जाता है। शिशु का पूरा व्यवहार मूल प्रवृत्तियों पर निर्भर करता है। शिशु किसी भी कार्य में सन्तुष्टि तुरन्त चाहता है। इस अवस्था में शिशु वही कार्य करना चाहता है जिससे वह आनन्दित होता है। **(ii) एस. ए. कोर्टिस** के अनुसार शैशवावस्था का अर्थ – ''शैशवावस्था औसतन जन्म से पाँच अथवा छह वर्ष की आयु तक है जिसके अन्तर्गत इन्द्रियाँ काम करने लगती हैं और बच्चा रेगंना, चलना और बोलना सीखता है।''

हरलॉक के अनुसार – ''दो वर्ष बाद प्रारम्भिक बाल्यावस्था आती है और 6 वर्ष तक की आयु तक रहती है।''

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(7) शैशवावस्था किस आयु तक मानी जाती है ?

(i) शिशु के जन्म के बाद 5 या 6 वर्ष तक

(ii) 6 से 12 वर्ष तक

____

____

4.9.2 शैशवावस्था की प्रमुख विशेषताएँ

शैशवावस्था की प्रमुख विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

➢ शिशु के जन्म लेने के बाद उसका शारीरिक विकास 5 वर्ष की अवस्था तक तीव्र गति से होता है। 1 वर्ष के अन्दर हड्डियों, मांसपेशियों इत्यादि के विकसित होने के कारण शिशु उठने, बैठने व खड़े होने लगते हैं। तीन वर्ष की आयु में शिशु के दाँत निकल आते है। शिशु की इन्द्रियाँ तेजी से कार्य करने लगती है। शिशु के भार एवं लम्बाई में लगातार वृद्धि होती है।

- शैशवावस्था में बच्चों का मानसिक विकास तीव्र होता है। तीन वर्ष की आयु तक बच्चे की सभी मानसिक शक्तियाँ सक्रिय हो जाती है।
- इस अवस्था में बच्चों में किसी वस्तु को जानने की प्रवृत्ति बढ़ जाती है।
- इस अवस्था में बालक देखकर सीखते हैं। बच्चे अपने मात–पिता, भाई बहन के द्वारा जो कार्य किए जा रहे है उसे देखकर सीखता है।
- शिशु इस अवस्था में शारीरिक व मानसिक दोनों रूप से अपरिपक्व होते हैं। उचित पालन–पोषण एवं देख–रेख होने से शिशु परिपक्व हो जाते है।
- इस अवस्था में शिशु का पूरा व्यवहार मूल प्रवृत्तियों पर आधारित होता है।
- इस अवस्था के शिशुओं में प्रेम या काम भावना की प्रवृत्ति बड़ी प्रबल होती है। शिशु को अपने अंगों से प्रेम करना, माँ का स्तनपान करना, अँगूठा चूसना आदि काम करने में आनन्द की अनुभूति होती है।
- इस अवस्था के शिशुओं के अन्दर नैतिकता का अभाव पाया जाता है। इस अवस्था में शिशु के अन्दर अच्छे–बुरे उचित और अनुचित का ज्ञान नहीं होता है। शिशु इस अवस्था में उसी कार्य को करता है जिसमें उसे आनन्द की प्राप्ति होती है।
- शैशवावस्था के अन्तिम चरण में शिशु में सामाजिकता का विकास होने लगता है।

3.9.3 शैशवावस्था में शिक्षा व्यवस्था

इस अवस्था को सीखने का **आदर्श काल** कहा गया है। **वाटसन** ने शैशवावस्था के सम्बन्ध में अभिव्यक्त किया है – ''शैशवावस्था में अधिगम की सीमा एवं तीव्रता, विकास की ओर किसी अवस्था की तुलना में अत्यधिक होती है।''

"The scope and intensity of learning during infancy exceeds that of any other period of development."

शैशवावस्था के शैक्षणिक स्वरूप का महत्व –

- शैशवावस्था में शिशु के शिक्षा उसके माता–पिता द्वारा प्राप्त होती है, अतः वे ही शिशु के पहले शिक्षक एवं शिक्षिका होते है। इसलिए परिवार को ही पहले बालक के शारीरिक, मानसिक, सवेंगात्मक और समाजिक विकास पर बल देना चाहिए। शिशु के शारीरिक विकास के लिए उसके पौष्टिक संतुलित आहार की व्यवस्था उसके माता–पिता को करनी चाहिए।
- शिशु की सुव्यवस्थित शिक्षा एवं स्वास्थ्य के लिए घर तथा विद्यालय का वातावरण शान्त, आकर्षक एवं स्वच्छ होना चाहिए।

- शिशुओं की मूल प्रवृत्तियों का विकास करना चाहिए, उनको दबाना नही चाहिए। मूल प्रवृत्तियों के द्वारा बालक के शारीरिक और मानसिक विकास को तीव्रता प्राप्त होती है।
- शैशवावस्था में बालकों की शिक्षा संगीत के माध्यम से होनी चाहिए। संगीत की सहायता से बालको का शारीरिक तथा मानसिक विकास अच्छी तरह से होता है। बालक संगीत प्रिय होते हैं।
- शैशवावस्था में बच्चों में खेलने की प्रवृत्ति अधिक होती है। इस अवस्था के बच्चों को खेलने से रोकना नहीं चाहिए बल्कि उनके लिए खेलने के बेहतर अवसर उपलब्ध कराने चाहिए।
- शिशु को परिवार के बीच में ही सामाजिक विकास के अवसर मिलने चाहिए क्योंकि बालक परिवारिक सदस्यों के साथ रहकर ही सामाजिक गुणों को सीखता है।
- बच्चे को घर में मातृभाषा में शिक्षा उपलब्ध करानी चाहिए। मातृभाषा के माध्यम से बच्चे किसी भी बात को जल्दी सीख लेते हैं। उनके अन्दर तर्क करने, समस्या का समाधान करने की प्रवृत्ति का विकास मातृभाषा में अध्ययन करने के कारण जल्दी से विकसित हो जाता है।
- शिशुओं की शिक्षा व्यवस्था उनकी वैयक्तिक भिन्नता को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।
- शिशुओं को दण्ड एवं भय के द्वारा अनुशासित एवं नियंत्रित नही करना चाहिए। दण्ड एवं भय से बालक का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं समाजिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।
- शिशुओं को नैतिक तथा चारित्रिक विकास के लिए महापुरूषों, आदर्श चरित्र वाले व्यक्तियों जैसे महात्मा गाँधी इत्यादि के बारे में जानकारी देनी चाहिए।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(8) सीखने का आदर्शकाल’ किसी अवस्था को कहा जाता है, इस सम्बन्ध में वाटसन के मत को भी लिखिए।

____

____

____

3.10 बाल्यावस्था का अर्थ, महत्व, विशेषताएँ एवं शिक्षा व्यवस्था

3.10.1 बाल्यावस्था का अर्थ एवं महत्व :–

बाल्यावस्था बालक के निर्माणकारी काल के नाम से प्रसिद्ध है। बाल्यावस्था की सीमा 6–12 वर्ष तक होती है। यह विकास की दूसरी अवस्था होती है। इस अवस्था में विकास की गति तीव्र होती है। इस अवस्था में बालक के अन्दर शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक परिवर्तन परिलक्षित होते है।

कोल व ब्रूस ने बाल्यावस्था को जीवन का अनोखा काल बताया है। इस सन्दर्भ में उन्होंने व्यक्त किया है– ''वास्तव में माता–पिता के लिए बालविकास की इस अवस्था को समझना कठिन है।''

"This is indeed, a difficult period of a child development for a parent to understand".

-Cole and Bruce

बाल्यावस्था को मनोवैज्ञानिकों ने दो भागों में विभक्त किया है–

1. **पूर्व–बाल्यावस्था** – इस अवस्था में बालक तीव्र गति से विकास करता है।
2. **उत्तर–बाल्यावस्था** – उत्तर बाल्यावस्था में बालक के अन्दर स्थायित्व का बोध दिखाई पड़ने लगता है और बालक भविष्य के लिए तैयारी करता है।

फ्रायड के अनुसार इस अवस्था में बालक के अन्दर तनाव की स्थिति का दमन हो जाता है, वह बाहर की दुनिया को देखने व समझने लगता है परन्तु वह परिवक्वता को प्राप्त नहीं करता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(9) विकास की दूसरी अवस्था का क्या नाम है।

____

____

____

(10) बालक के अन्दर स्थायित्व का बोध किस अवस्था में दिखाई देता हैं

(क) पूर्व बाल्यावस्था (ख) उत्तर बाल्यावस्था

____

____

____

3.10.2 बाल्यावस्था की प्रमुख विशेषताएँ :–

विकास की दृष्टि से बाल्यावस्था की मुख्य विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

- **शारीरिक विकास में स्थायित्व –** बाल्यावस्था में बालक का शारीरिक विकास बहुत मन्द गति से होता है तथा उनमें शारीरिक मजबूती आती है।
- **मानसिक योग्यताओं में दृढ़ता–** शैशवावस्था में विकसित मानसिक क्षमता को इस अवस्था में दष्ढ़ता प्राप्त होती है जिसके कारण बालक के अन्दर तर्क, विचार–विमर्श, चिन्तन–मनन एवं समस्या–समाधान करने की क्षमताओं का विकास होता है।
- **जिज्ञासा प्रवृत्ति की अधिकता–** बाल्यावस्था में बालक अपने जीवन में जिन बातों को देखता है उसकी जानकारी प्राप्त करना चाहता है। वह विभिन्न प्रकार के प्रश्नों को पूछकर एवं उनका उत्तर प्राप्त कर अपनी जिज्ञासा को संतृप्त करता है।
- **सामूहिक खेलों में रुचि –** इस अवस्था में बालक समूह में खेलना पसन्द करते हैं। खेलने से मना करने पर उनके अन्दर चिन्ता, खिन्नता एवं तनाव उत्पन्न हो जाता है।
- **वस्तुओं को एकत्रित करने की प्रवृति का विकास –** बाल्यावस्था में बालक के अन्दर अपनी पसन्द की वस्तुओं को एकत्रित करने की प्रवृत्ति का विकास होता है। बालक एकत्रित की गई वस्तुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करके अपने ज्ञान में अभिवृद्धि करता है। संग्रह करने की आदत द्वारा भी बालकों में सीखने की प्रवृत्ति बढ़ती है।
- **रचना से युक्त कार्यों में रुचि –** बाल्यावस्था में बच्चे अपने अभिभावकों के द्वारा किए जा रहे कार्यों को देखकर उनका अनुसरण करते हैं और अपने अन्दर अनुसरण के माध्यम से सीखने की प्रवृत्ति का विकास करते हैं।
- **परिस्थिजन्य परिवर्तन में रुचि –** इस अवस्था में बालक, का सामना वास्तविकता से होता है। वह वास्तविक तथ्यों के सम्पर्क में आता है और वह प्रकृति में पायी जाने वाली प्रत्येक वस्तु की तरफ आकर्षित होकर अपने ज्ञान में वृद्धि करता है। इस सम्बन्ध में **स्ट्रांग महोदय** का मत है कि – ''बालक अपने को अतिविशाल संसार में पाता है और उसके विषय में अविलम्ब ज्ञान प्राप्त करना चाहता है।''
- **सामाजिकता का विकास –** बालक समूह में रहकर सहयोग, सद्भावना, सहनशीलता, सहिष्णुता, सत्यनिष्ठा आदि सामाजिक गुणों को सीखता है।

इन गुणों को विकसित करने में स्कूल, समूह में रहने वाले सदस्य एवं मित्र सहायक होते हैं।

- **नैतिकता का विकास–** इस अवस्था के अन्तर्गत बालक के अन्दर नैतिक मूल्यों का विकास होने लगता है। इस अवस्था में अच्छाई–बुराई, ईमानदारी–बेइमानी, सत्य–असत्य, नैतिक एवं अनैतिक आदि का ज्ञान बालक को होने लगता है। इस सम्बन्ध में **स्ट्रांग महोदय** का मत है कि ''छ, सात और आठ वर्ष के बच्चों में अच्छे–बुरे का ज्ञान, न्यायपूर्ण व्यवहार, ईमानदारी और सामाजिक मूल्यों की भावना का विकास होने लगता है।''
- **बर्हिमुखी व्यक्तित्व का विकास –** इस अवस्था में बालक केवल अपने कार्य में रुचि रखते हैं और ऐसे बालक एकान्त प्रिय होते हैं। बाल्यावस्था में बर्हिमुखी स्वभाव के कारण बालकों में भ्रमण करने की प्रवृत्ति, प्रकृति को समझने तथा दूसरों के विषय में जानकारी प्राप्त करने में रुचि दिखायी पड़ती है। बर्हिमुखी प्रतिभा के कारण वे वातावरण के साथ सामन्जस्य स्थापित कर लेते हैं।
- **काम प्रवृत्ति की अनिच्छा –** बाल्याावस्था को अनोखा काल एवं निर्माणकारी अवस्था के नाम से जाना जाता है। बालक का अधिकांश समय खेलने–कूदने, पढ़ने–लिखने एवं घूमने में नष्ट हो जाता है जिसके कारण काम प्रवषत्ति की ओर उनका ध्यान आकृष्ट नहीं होता है। इस सम्बन्ध में फ्रायड का मत है कि शिशु में जन्म से ही काम भावना विकसित होने लगती है। बाल्यावस्था में पितृ एंव मातृ विरोधी भावना ग्रन्थियाँ समाप्त हो जाती है। इस अवस्था में बालक–बालिकाओं में समलिंगीय प्रेम भावना उत्पन्न होने लगती हैं।

3.10.3 बाल्यावस्था में शिक्षा व्यवस्था

इस अवस्था को बालक के निर्माणकारी काल के नाम से जाना जाता है। बालकों के स्वभाव एवं उनकी विशेषताओं को दृष्टिगत रखकर ही उनके लिए शिक्षा व्यवस्था का निर्धारण किया जाना चाहिए। बालकों के स्वभाव के अनुसार ही उनके लिए उचित शिक्षा व्यवस्था के लिए नियोजन करना चाहिए। बालक की शिक्षा का उत्तरदायित्व परिवार के सदस्यों, अध्यापक एवं समूह के सदस्यों के ऊपर होता है। अतः बालकों की शिक्षा की व्यवस्था के लिए निम्नांकित बातों पर ध्यान देना चाहिए–

- माता–पिता को बालकों के शारीरिक विकास पर विशेष ध्यान देना चाहिए। जब बालक शारीरिक रूप से स्वस्थ्य होगा तो उसका मानसिक विकास भी अच्छा होगा। बालक के उत्तम मानसिक विकास के लिए स्वच्छ वातावरण एवं सन्तुलित आहार की उचित व्यवस्था अभिवावको को करनी चाहिए।

- ➢ बालकों के व्यवहार एवं आचरण को ध्यान में रखकर उनके माता–पिता एवं शिक्षक को उन्हें शिक्षा देनी चाहिए। इसके लिए माता–पिता एवं शिक्षक को बाल मनोविज्ञान का ज्ञान होना आवश्यक है।
- ➢ बालकों को उनकी इच्छानुसार पढ़ने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। अपने द्वारा चयनित विषय की शिक्षा प्राप्त करने में बालकों को स्वतन्त्रता होने पर वे बिना किसी दबाव के तीव्र गति से शिक्षा ग्रहण कर सकते है।
- ➢ बाल्यावस्था में बालकों की रूचि और जिज्ञासा में निरन्तर परिवर्तन होते रहते है। इन परिवर्तनों के आधार पर बालकों के शैक्षिक पाठ्यक्रम व शिक्षण विधियों में उनकी इच्छा के अनुसार परिवर्तन किया जाना आवश्यक है। उचित माध्यम से शिक्षण न करने के कारण बालकों की पढ़ने में अरूचि हो जाती है जिससे उनकी मानसिक प्रगति अवरूद्ध हो जाती है।
- ➢ बाल्यावस्था में बालक के अन्दर विषय–वस्तुओं, विभिन्न घटनाओं, पर्यटन एवं तीर्थ स्थलों, देश एवं विश्व के बारे में जानकारी प्राप्त करने की प्रबल जिज्ञासा होती है। अतः स्कूल एवं घर परिवार के सदस्यों को उन्हें भ्रमण पर ले जाने की व्यवस्था करनी चाहिए। पढ़ने की अपेक्षा वस्तुओं के प्रत्यक्ष सम्पर्क में ले जाने से बालक किसी विषय वस्तु को प्रत्यक्ष रूप से देखकर आसानी व जल्दी से सीख जाते है।
- ➢ मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। बालक बड़ा होकर समाज के सम्पर्क में पहुँचता है। समूह के सदस्यों के साथ रहकर वह तमाम तरह की गतिविधियों को करता एवं देखता है। इस प्रकार बालक का समाज में अन्तःक्रिया होने के कारण उसके व्यवहार में परिवर्तन आता है। इस प्रकार में सदस्यों से व्यवहार के कारण उसके अन्दर अनुशासन, सहयोग, सहानुभूति जैसे सामाजिक गुण विकसित होते है।
- ➢ बच्चों में नैतिक मूल्यों के विकास के लिए विद्यालयों में मूल्य आधारित शिक्षा की सुचारू व्यवस्था होनी चाहिए जिससे बालकों के अन्दर नैतिक मूल्यों का विकास हो सके।
- ➢ बालकों के सांवेगिक विकास के लिए उनके संवेगों का दमन करने से उनके अन्दर हीनता की भावना विकसित हो जाती है। बालकों के सांवेगिक विकास के लिए आवश्यक है कि उनकी मूल प्रवृत्तियों की ओर ध्यान दिया जाय। अवांधित संवेगों के द्वारा बालकों में ईर्ष्या, घृणा, द्वेष इत्यादि की भावना विकसित हो जाती है। अतः बालकों की शिक्षा व्यवस्था मूल प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।

➢ मनोवैज्ञानिकों ने बालकों की शिक्षा व्यवस्था में खेल और क्रिया को सम्मिलित करने पर जोर दिया है। बालकों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास के लिए पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन विद्यालयों में आवश्यक है। अतः बालकों के लिए खेल–विधि द्वारा शिक्षा देने की व्यवस्था अनिवार्य रूप से करायी जानी चाहिए।

3.11 किशोरावस्था का अर्थ, परिभाषाएँ, विशेषताएँ एवं शिक्षा व्यवस्था

3.11.1 किशोरावस्था का अर्थ एवं परिभाषाएँ :–

किशोरावस्था जीवन की सबसे कठिन, जटिल, तनावयुक्त, संवेदनशील एवं उलझन वाली अवस्था है। बाल्यावस्था एवं प्रौढ़ावस्था के बीच की कड़ी को किशोरावस्था के नाम से जाना जाता है। इस अवस्था में न उसे बालक समझा जाता है और न ही प्रौढ़। बालक को भविष्य का निर्माता माना जाता है। अतः शिक्षक, माता–पिता एवं समाज के प्रबुद्ध वर्ग को इस बात पर विचार करना चाहिए कि बालक का सर्वांगीण विकास किस प्रकार किया जाय।

इस सम्बन्ध में **क्रो एवं क्रो** का मत है – ''किशोर ही वर्तमान की शक्ति और भावी आशा को प्रस्तुत करता है।''

"Youth represents the energy of the present and the hope of the future."

-Crow and Crow

किशोरावस्था को अंग्रेजी भाषा में **'एडोलसेन्स'** कहते है। एडोलसेन्स शब्द लैटिन भाषा के **'एडोलेसिय'** शब्द से लिया गया है, जिसका अर्थ परिपक्वता की ओर बढ़ने से है।

किशोरावस्था के सम्बन्ध में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गयी कुछ प्रमुख परिभाषाए निम्नवत् है–

जरसील्ड के अनुसार – ''किशोरावस्था वह समय है, जिसमें विकासशील व्यक्ति बाल्यावस्था से परिपक्वता की ओर बढ़ता है।''

"Adolescence is period through which a growing person makes transition from childhood to maturity." **-Jersield**

स्टैनलोहाल के अनुसार – ''किशोरावस्था अधिक बल और तनाव, तूफान एवं संघर्ष का काल है।''

"Adolescence is period of great stress and strain, storm and strife."

- Stanley Hall

शिक्षा शब्द कोष में किशोरावस्था के अर्थ को इस प्रकार वर्णित किया गया है

किशोरावस्था यौवनावस्था के परिपक्वावस्था के मध्य घटित होने वाली और मोटे तौर पर 13 से 14 वर्ष की आयु से आरम्भिक 20 वर्षो तक विस्तृत होने वाली मानव विकास की एक अवधि है।''

"Adolescence is a period in human development occurring between puberty and maturity and extending roughly from 13 to 14 years of age up to the early 20s."

- Dictionary of Education

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(11) स्टैनलोहाल के अनुसार किशोरवस्था को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने किशोरावस्था को दो भागों में विभक्त किया है–

(1) पूर्व – किशोरावस्था – 12 से 16 वर्ष की आयु तक

(2) उत्तर – किशोरावस्था – 17 से 19 वर्ष की आयु तक

3.11.2 किशोरावस्था की विशेषताएँ –

किशोरावस्था की प्रमुख विशेषता 'परिवर्तन' है। बालकों में परिवर्तन शारीरिक, मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक होता है। किशोरावस्था की कुछ प्रमुख विशेषताओं का वर्णन निम्नवत् वर्णित है–

- **दैहिक विकास में तीव्रता –** इस अवस्था में बालक एवं बालिकाओं के शरीर में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन दिखाई देती है। इस अवस्था में बालक पुरूषत्व को एवं बालिकाएँ स्त्रीत्व को प्राप्त करती है।
- **मानसिक विकास –** इस अवस्था में मानसिक शक्तियों का विकास अत्यन्त तीव्र गति से होता है। तीव्र मानसिक विकास होने के कारण उनके अन्दर स्मृति, ध्यान, कल्पना, चिन्तन–मनन, तर्क आदि करने की क्षमताएँ एवं योग्यताएँ बढ़ जाती हैं। इस अवस्था में ही बालकों में समस्या–समाधान की योग्यता की क्षमता का विकास होता है।
- **कामुकता की भावना का विकास –** किशोरावस्था में कामुकता की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। मनोवैज्ञानिक रॉस ने स्लाटर के कथन का समर्थन किया

है, ''काम समस्त जीवन का नही तो किशोरावस्था का मूल तथ्य है। एक विशाल नदी के अत्यधिक तीव्र प्रवाह के समान यह जीवन की भूमि के बड़े भागों को सींचता है एवं उपजाऊ बनाता है।'' काम उत्तेजना का विकास आत्मीयता, समलिंगीय काम भावना एवं विषमलिंगीय काम भावना से होते हुए आगे बढ़ता है।

- **वृद्धि का उत्कृष्टतम विकास –** बालक के अन्दर किशोरावस्था में आत्मविश्वास का भाव अत्यधिक होता है, जिसके कारण वह इस अवस्था में असम्भव कार्य को करने के लिए दृढ़ संकल्पित हो जाता है। जब बालकों को लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है तो वे अत्यधिक उत्साहित व प्रसन्न होते है, लक्ष्य की प्राप्ति न होने पर वे हतास व निरास हो जाते हैं।

स्थिरता एवं समायोजन का अभाव – इस अवस्था में बालकों के अन्दर स्थिरता का अभाव होता है तथा वातावरण के साथ वे अपना उचित समायोजन स्थापित नहीं कर पाते है।

- **धर्म की प्रवृत्ति का विकास –** इस अवस्था में बालकों के अन्दर पूजा–पाठ की प्रवृत्ति विकसित है। किशोरावस्था में बुरी लत पड़ जाने के कारण जब उन्हें दण्ड का सामना करना पड़ता है तब उनको सही और गलत में फर्क करने की समझ का विकास होता है अर्थात आत्म बोध होता है। बालकों में इस प्रकार की प्रवष्त्ति को धार्मिक शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा के माध्यम से विकसित की जा सकती है।
- **समाज सेवा की भावना –** किशोरावस्था में बालक समाज सेवा करना चाहता है। किसी भी राष्ट्र की उन्नति में वहाँ निवास कर रहें बालकों के ऊपर निर्भर करती है। बालक आदर्श समाज का निर्माण करने के लिए उत्सुक एवं कष्ट समर्पित रहते है।
- **बर्हिमुखी स्वभाव –** किशोरावस्था में बालक अपने आस–पास के वातावरण तथा विभिन्न प्रकार की क्रिया–कलापों में रूचि लेता है। विद्यालय, समाज एवं राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित होने वाले पाठ्य सहगामी क्रियाओं में वह प्रतिभाग करना चाहता है। बर्हिमुखी प्रतिभा से परिपूर्ण होने के कारण उनके अन्दर आत्मनिर्भरता, आत्म नियंत्रण, सहयोग, अनुशासन, परोपकार की भावना आदि गुणों का विकास होता है।
- **रूचियों में परिवर्तन –** किशोरावस्था में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन के साथ ही बालक एवं बालिकाओं की रूचियों में भी स्पष्ट परिवर्तन दिखाई देता है। इस अवस्था में पत्र–पत्रिकाएँ, कहानी, उपन्यास पढ़ना, संगीत में रूचि लेना,

सिनेमा देखना, घुमने–फिरने में रूचि लेना, संगीत में रूचि लेना, सिनेमा देखना, घूमने–फिरने में रूचि लेना, अपने को सुन्दर बनाने का प्रयत्न करना आदि प्रवृत्तियों को विकसित होते हुए देखा जा सकता है।

- **बहादुरी की भावना –** इस अवस्था में बालकों के अन्दर त्याग बलिदान और राष्ट्रप्रेम की भावना का विकास होता है। जब राष्ट्र को अपने दुश्मनों से संकट उत्पन्न हुआ तब इन्ही बालको ने अपनी राष्ट्र भूमि कि रक्षा के लिए अपनी जान की परवाह किए बिना देश के लिए बलिदान हुए है।
- **भविष्य के प्रति सचेष्ट –** इस अवस्था में बालक अपने भविष्य के प्रति सचेष्ट रहता है। उसके अन्दर कुछ बनने की प्रबल इच्छा होती है। इसके लिए वह अपने कर्त्तव्यों का पालन करता है। छात्र अपनी योग्यता, क्षमता एवं रूचि के अनुसार पाठ्यक्रमों का चुनाव कर भविष्य हेतु तैयारी करता है।

3.11.3 किशोरावस्था में शिक्षा व्यवस्था

माता–पिता, अभिभावकों एवं अध्यापकों को बालकों को शिक्षित करने के लिए उपयुक्त शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे वे शिक्षित होकर अपने भविष्य को बना सकें। किशोरों की शिक्षा के सन्दर्भ में **वैलेन्टाइन महोदय का कथन है** – ''मनोवैज्ञानिकों द्वारा बहुत समय तक उपदेश दिये जाने के बाद अन्त में यह बात व्यापक रूप से स्वीकार की जाने लगी है कि शैक्षिक दृष्टि से किशोरावस्था का अधिक महत्व हैं।''

किशोरावस्था में शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था बालक एवं बालिकाओं के लिए होनी चाहिए। किशोरावस्था में शिक्षा व्यवस्था का क्या स्वरूप होना चाहिए उसे निम्नानुसार वर्णित किया जा रहा है–

- **शारीरिक विकास के लिए शिक्षा–** किशोरावस्था में बालकों के शारीरिक विकास की गति तीव्र होती है जिसके कारण उनके अन्दर अनेक प्रकार के परिवर्तन दिखाई देने लगते है। किशोरावस्था में बालकों के शरीर में तीव्र ऊर्जा का संचरण होता है। बालकों की शारीरिक शक्ति पूरा उपयोग हो इसके लिए शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ शिक्षा, योग शिक्षा एवं विद्यालयों में खेलकूद का आयोजन होना चाहिए।
- **मानसिक विकास के लिए शिक्षा–** स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिक का निवास होता है। इस अवस्था में बालकों के मानसिक विकास की गति अत्यन्त तीव्र होती है। इसलिए बालकों की शिक्षा उनकी रूचियों, अभिवृत्तियों एवं योग्यताओं के अनुसार होनी चाहिए। किशोरों की शिक्षा व्यवस्था मानसिक विकास की दर पर निम्नांकित प्रकार से होनी चाहिए–

- कला, विज्ञान, साहित्य, भूगोल एवं इतिहास जैसे विषयों की शिक्षा व्यवस्था अनिवार्य रूप से लागू की जानी चाहिए।
- विद्यालय में पुस्तकालय, वाचनालय एवं प्रयोगशाला की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। पुस्तकालय में स्तरीय पुस्तकों को रखना चाहिए जिससे उसके अध्ययन से बालकों के अन्दर सृ्जनशक्ति का विकास हो सके।
- विद्यालयों में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सेमिनार, कार्यशालाएँ एवं सम्मेलन आदि का आयोजन होना चाहिए। जिससे उनके ज्ञान में वृद्धि हो सके।
- छात्रों को ऐतिहासिक पृष्टिभूमि का अध्ययन कराने के लिए भ्रमण इत्यादि का आयोजन विद्यालय स्तर से होना चाहिए।

➢ **समाजिक गुणों की वृद्धि के लिए शिक्षा –** विद्यालयों को किशोरों के अन्दर सहयोग, भाई–चारा, सहानुभुति एवं सद्भावना, जैसे गुणों को विकसित करने के लिए विद्यालयों में एन.एस.एस., एन.सी.सी., स्काउट–गाइड एवं खेल–कूद के आयोजन की व्यवस्था होनी चाहिए।

➢ **सांवेगिक विकास के लिए शिक्षा –** किशोरावस्था में संवेग बालकों के जीवन में सघर्ष एवं तनाव की स्थिति को उत्पन्न करते है। बालकों के मन में अच्छे और बुरे संवेगो के कारण दुविधा की स्थिति उत्पन्न होती है। बालक इस अवस्था मे उत्साहित एवं हतोत्साहित होते रहते हैं। शिक्षा के माध्यम से उनके अन्दर आने वाले गलत संवेगों को नष्ट किया जा सकता है तथा अच्छे संवेगो का विकास किया जा सकता है।

- बालकों के अन्दर चारित्रिक गुणों एवं आर्कषक व्यक्तित्व के विकास के लिए उन्हे महापुरूषों, नायको एवं शहीदो के विषय में लिखी पुस्तकों को पढ़ने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए।
- विद्यालय में नैतिक शिक्षा एवं धार्मिक शिक्षा की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- अध्यापक एवं अभिभावकों द्वारा बालकों के संवेगों का अध्ययन करने के बाद ही उन्हें संवेगात्मक शिक्षा दी जानी चाहिए।

➢ **वैयक्तिक भेदों के अनुसार शिक्षा –** बालकों की वैयक्तिक भिन्नता को ध्यान में रखते हुए बालकों की रूचि, अभिरूचि एवं आवश्यकताओं के अनुसार ही स्कूलों में विभिन्न पाठ्यक्रमों का संचालन किया जाना चाहिए। जिससे बालक अपनी योग्यतानुसार शिक्षा प्राप्त कर सकें।

➢ **यौन शिक्षा की आवश्यकता –** किशोरावस्था में बालकों को यौन शिक्षा विद्यालय स्तर पर उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इस सन्दर्भ में **रॉस** महोदय का कथन है– ''यौन शिक्षा की परम आवश्यकता को कोई भी अस्वीकार नहीं करता है। इसके लिए इस बात की आवश्यकता है कि किशोर को एक ऐसे वयस्क के द्वारा गोपनीय शिक्षा दी

जाय जिस पर उसे पूर्ण विश्वास हो।'' बालक जानकारी के अभाव में यौन सम्बन्धी गलतिया जाने–अनजाने कर बैठते है। यौन सम्बन्धि जानकारी के लिए छात्रों के पाठ्यक्रम में इसकी शिक्षा के लिए उचित स्थान प्राप्त होना चाहिए।

➢ **उत्तम शिक्षण–विधियों का शिक्षा में उपयोग** – बालकों में स्वयं करके सीखने की प्रवषत्ति अधिक होती है। स्वयं के द्वारा सीखा गया ज्ञान स्थायी होता है। इस अवस्था में बालकों के अन्दर निरीक्षण, तर्क करने ,विचार–मन्थन एवं चिन्तन करने की प्रवृत्ति का विकास तीव्र गति से होता है। परम्परागत प्रणाली की अपेक्षा नवीन मनोवैज्ञानिक शिक्षण तकनीक के माध्यम से बालकों को शिक्षा प्रदान करने से उनके अन्दर सीखने की प्रवृत्ति का विकास दर बढ़ जाता है। इसलिए नवीन तकनीकी से युक्त शिक्षण पद्धति की व्यवस्था विद्यालयों में होनी चाहिए। इसके लिए छात्रों का शिक्षण व्यावहारिक होना चाहिए और उसका सम्बन्ध बालक के दैनिक जीवन होना चाहिए। जिससे वह लाभान्वित हो सकें।

सहानुभुतिपूर्ण व्यवहार – किशोरावस्था में बालक उलझन के कारण अनेकों प्रकार की मानसिक समस्याओं से ग्रसित हो जाते है। अतः अभिभावकों एवं शिक्षकों को बालक के साथ सहानुभुतिपूर्ण व्यवहार के माध्यम से शिक्षा देनी चाहिए। इस अवस्था में किशोरों को उत्तरदायित्व देकर स्वतन्त्रतापूर्वक, स्वछन्दता के साथ कार्य करने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये गये विकल्पों में से सही विकल्प को चुनिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

(12) किशोरावस्था है –

(i) संघर्ष और तनाव का काल

(ii) निर्माणकारी काल

(iii) सीखने का आदर्शकाल

___

___

___

3.12 सारांश

प्रस्तुत इकाई में अभिवृद्धि एवं विकास के अर्थ एवं उनके अन्तर के विषय में वर्णन किया गया है। अभिवृद्धि में परिमाणात्मक और विकास में परिमाणात्मक एवं गुणात्मक दोनों गुणों का समावेश होता है। मानव विकास काल को अध्ययन की दृष्टि

से शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में विभेदित किया गया है। बालकों की इन अवस्थाओं में अनेको प्रकार की समस्याएँ आती रहती है। शैशवावस्था को जीवन का आधार काल, बाल्यावस्था को जीवन का अनुपम काल एवं किशोरावस्था को अधिक बल और तनाव, तूफान एवं संघर्ष के काल के नाम से भी वर्णित किया गया है। इस इकाई के अन्तर्गत इन अवस्थाओं की विशेषताओं, महत्वों, समस्याओं तथा इनमें बालकों के प्रति किए जाने वाले व्यवहार के अध्ययन के साथ–साथ शिक्षा की व्यवस्था के सम्बन्ध् ा में वर्णन किया गया है।

3.13 अभ्यास के प्रश्न

(i) वृद्धि एवं विकास को परिभाषित करते हुए उनमें अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(ii) विकास के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का सविस्तार वर्णन कीजिए।

(iii) बाल्यावस्था के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उनके लिए शिक्षा का स्वरूप कैसा होना चाहिए सविस्तार समझाइए।

(iv) शैशावस्था का सविस्तार वर्णन कीजिए।

(v) किशोरावस्था के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Craig, J. Grace (1983) : Human Development, Prentice Hall; INC Englewood cliffs, New Jersey.

Sntrock, J.W. (2007) : Child Development Eleventh Edition, Tata Mc-Graw Hill, New Delhi.

Wolman, B.B. (Ed.) (1982) : Hanbook of Development Psychology, Prentice Hall, : Englewood cliffs, New Jersey.

गुप्ता एस. पी. एवं गुप्ता अलका (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

सारस्वत मालती (2005) : मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन लखनऊ।

सिंह अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी. बी. प्रिंटर्स पटना।

सिंह कर्ण (2008) : अभिगकर्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, गोविन्द प्रकाशन लखीमपुर–खीरी।

3.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

(1) वृद्धि से

(2)–

वृद्धि	विकास
(i) वृद्धि एक निश्चित आयु तक चलने वाली प्रक्रिया है (ii) वृद्धि के अन्दर परिमाणात्मक परिवर्तनों के गुण पाये जाते है।	(i) विकास की प्रक्रिया आजीवन चलती रहती है। (ii) इसमें गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दोनों प्रकार के गुण पाये जाते हैं।

(3) (i) आकार में परिवर्तन (ii) शरीर के अंगो में अनुपातिक परिवर्तन (iii) पुराने चिन्हों का विलोप होना (iv) नये चिन्हों का प्रकट होना।

(4) ''विकास प्रक्रियाओं की निरन्तरता का सिद्धान्त केवल इस तथ्य पर बल देता है कि व्यक्ति में कोई आकस्मिक परिवर्तन नही होता है।''

(5) शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, एवं प्रौढ़ावस्था।

(6) किशोरावस्था

(7) शिशु के जन्म के बाद 5 या 6 वर्ष तक।

(8) शैशवावस्था को आदर्श काल कहा जाता है एवं वाटसन का मत है कि 'शैशवावस्था में अधिगम् की सीमा एवं तीव्रता, विकास की ओर किसी अवस्था की तुलना में अत्यधिक होती है।

(9) बाल्यावस्था

(10) उत्तर बाल्यावस्था

(11) ''किशोरावस्था अत्याधिक बल और तनाव, तूफान एवं सघर्ष का काल है।''

(12) संघर्ष और तनाव का काल

खण्ड : दो

शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

इकाई - 4 7
शारीरिक एवं संवेगात्मक विकास

इकाई -5 26
मानसिक एवं भाषा विकास

इकाई - 6 41
सामाजिक एवं नैतिक विकास

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0 पी0 दुबे	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	पूर्व निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 अखिलेश चौबे	पूर्व आचार्य, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 विद्या अग्रवाल	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 प्रतिभा उपाध्याय	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डा0 गिरीश कुमार द्विवेदी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0उषा मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समन्वयक

डॉ0 रंजना श्रीवास्तव	प्रवक्ता, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

ISBN-UP-978-93-83328-00-0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक ; कुलसचिव, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रक : **d0l h0fifVx ,.M ,ykbM oD1] ipoVh] eFkjk&281003-**

B.Ed.E-01 : शैशवकाल और उसका विकास

खण्ड–एक शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

इकाई–1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई–2 शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियॉ

इकाई–3 वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएं

खण्ड–दो शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

इकाई–4 शारीरिक और संवेगात्मक विकास

इकाई–5 संज्ञानात्मक विकास एवं भाषा विकास

इकाई–6 सामाजिक एवं नैतिक विकास

खण्ड–तीन बुद्धि, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता

इकाई–7 बुद्धि सम्प्रत्यय सिद्धान्त एवं मापन

इकाई–8 व्यक्तित्व सम्प्रत्यय एवं मापन

इकाई–9 सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

खण्ड–चार अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

इकाई–10 अभिप्रेरणा, तर्क एवं समस्या समाधान

इकाई–11 स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई–12 तनाव, कुण्ठा और द्वन्द्व

खण्ड–पॉच विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

इकाई–13 विशिष्ट बालक

इकाई–14 मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान तथा समायोजन

इकाई–15 समूह मनोविज्ञान

खण्ड – 2 : शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

खण्ड परिचय

मानव जीवन परिवर्तशील है। व्यक्ति का जीवन कई अवस्थाओं से होकर जीवन के अन्तिम सफर तक पहुॅचता है। व्यक्ति के जीवन के विकास के लिए आवश्यक है कि उसका सर्वांगीण विकास हों। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है। स्वस्थ व्यक्ति बल, बुद्धि एवं विद्या से परिपूर्ण हो सकता है। बशर्ते उसकी आवश्यकता के सभी साधन उसे उपलब्ध हों। ऐसा शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। किसी भी व्यक्ति का विकास शैश्वावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था एवं प्रौढ़ावस्था से होकर गुजरता है। व्यक्ति का सर्वोत्तम विकास शारीरिक सांवेगिक, सामाजिक, भाषा संज्ञानात्मक एवं नैतिक विकास पर निर्भर करता है। इन सबके अच्छे विकास के लिए व्यक्ति का वातावरण के साथ अच्छा समायोजन होता है।यदि व्यक्ति का वातावरण से उचित समायोजन होता है तो उनका विकास सभी अवस्थाओं से अच्छा होता है। प्रस्तुत खण्ड में शारीरिक, सांवेगिक, संज्ञानात्मक भाषा, सामाजिक एवं नैतिक विकास का विस्तृत अध्ययन तीन इकाइयों के अन्तर्गत किया गया है।

इकाई –4 इस इकाई के अन्तर्गत शैश्वावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में होने वाले विकास के क्रम का अध्ययन किया गया है। प्रत्येक अवस्था में बालक के शारीरिक विकास को कौन कौन से कारक प्रभावित करते हैं इसका विवेचन किया गया है। यदि बालक शारीरिक रूप से स्वस्थ होगा तो उसका व्यवहार भी अच्छा होगा। बालक के शारीरिक संरचना को स्वस्थ रखने के लिए समाज, घर–परिवार व बालक को शिक्षित होना आवश्यक है। शिक्षा ही बालकों को स्वस्थ रखने के लिए मार्ग प्रशस्त करती है। व्यक्ति के जीवन को संवेग भी कई प्रकार से प्रभावित करते हैं। कुछ संवेग जन्मजात होते हैं और कुछ को बाद में बालक अपने जीवन काल में अर्जित करता है। बालक में डर, क्रोध, उत्सुकता, हर्ष, स्नेह, दुख इत्यादि का विकास संवेगों के कारण होता है। किशोरावस्था में बालकों के अन्दर लगभग सभी प्रकार के संवेगों का विकास हो जाता है। संवेग के द्वारा ही व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए अभिप्रेरित होता है। संवेग के विकसित होने से ही व्यक्ति असम्भव कार्य को सम्भव कर दिखाता है। संवेग मनुष्य के मानसिक तथा शारीरिक विकास को प्रभावित करते हैं जिसका प्रभाव मनुष्य के विकासक्रम के सभी अवस्थाओं में दिखलाई पड़ता है। संवेंगात्मक स्थिति के व्यक्ति आवेश में आकर प्रशंसनीय तथा निन्दनीय दोनों प्रकार के कार्य को जाने अनजाने कर बैठता है। प्रस्तुत इकोई में शारीरिक एवं सांवेगिक विकास में होने वाले परिवर्तनों का विस्तृत अध्ययन किया गया है।

इकाई –5 व्यक्ति के जीवन में पल–पल कुछ न कुछ परिवर्तन होता रहता है। जैसे–जैसे बालक की आयु में वृद्धि होती जाती है। उनके अन्दर सोचने, समझने एवं चिन्तन करने की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। इन सबका सीधा सम्बन्ध बुद्धि से होता है। बुद्धि का सम्बन्ध मस्तिष्क से होता है। मानसिक विकास का सम्बन्ध व्यक्ति की मानसिक क्षमताओं से होता है। सभी प्रकार की मानसिक क्रियाएं संज्ञानात्मक विकास के अन्तर्गत आती हैं। संज्ञान का अर्थ है समझना व जानना। पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त के अन्तर्गत संवेदी पेशीय अवस्था, पूर्व संक्रियात्मक अवस्था, मूर्त संक्रियात्मक अवस्था तथा औपचारिक संक्रिया की अवस्था के विषय में चर्चा की है। इसके साथ ही ब्रुनर के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त के अन्तर्गत संक्रियता की अवस्था, दृश्य प्रतिमा की अवस्था तथा सांकेतिक अवस्था का भी विवेचन किया गया है। मानव के अतिरिक्त सभी प्राणियों में अपनी बातों को दूसरों को सम्प्रेषित करने के लिए भाषा ही एक सशक्त माध्यम है भाषा चाहे जिस भाषा में बोली जाय उसका एक मात्र उद्देश्य अपनी भावनाओं एवं व्यवहार के प्रकटीकरण से है। भाषा का विकास बालकों में शैशवावस्था बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था को कैसे प्रभावित करता है और भाषा विकास से व्यक्ति के जीवन में क्या परिवर्तन आते हैं। प्रस्तुत इकाई में संज्ञानात्मक एवं भाषा विकास का विस्तृत वर्णन किया गया है।

इकाई – 6 मनुष्य बुद्धिमान व सामाजिक प्राणी है। मनुष्य अपने बुद्धि के द्वारा ही समाज में अपनी एक पहचान बनाता है। मनुष्य के शारीरिक मानसिक, सांवेगिक विकास के साथ–साथ उसका सामाजिक विकास भी अत्यन्त आवश्यक है। बालक के अन्दर सामाजिकता के गुण, परिवार, पास–पड़ोस के द्वारा सर्वप्रथम विकसित होता है परन्तु उसका परिमार्जन और सुदृढ़ीकरण विद्यालय में औपचारिक शिक्षा के माध्यम से होता है। बालकों का समाजीकरण करने के लिए शिक्षक को सामाजिक विकास तथा समाजीकरण का ज्ञान होना आवश्यक है। इस इकाई के अन्तर्गत बालक का सामाजिक विकास शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में कैसे होता है और बालक का सामाजिक विकास कैसे प्रभावित होता है। इसका विस्तृत विवेचन किया गया है। इस इकाई में नैतिक विकास के सम्बन्ध में कोहलबर्ग एवं पियाजे के सिद्धान्तों का भी अध्ययन किया गया है। नैतिकता को कौन कौन से कारक प्रभावित करते हैं इसका भी उल्लेख इस इकाई में किया गया है।

इकाई – 4 शारीरिक और संवेगात्मक विकास

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 शारीरिक विकास

4.3.1 जन्मपूर्व शारीरिक विकास

4.3.2 शैशवावस्था में शारीरिक विकास

4.4 बाल्यावस्था में शारीरिक विकास

4.5 किशोरावस्था में शारीरिक विकास

4.6 शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

4.7 शारीरिक विकास का शैक्षिक महत्व

4.8 संवेगात्मक विकास

4.8.1 संवेग का अर्थ

4.8.2 संवेग की परिभाषा

4.9 शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास

4.10 बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास

4.11 किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास

4.12 संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

4.13 सारांश

4.14 अभ्यास कार्य

4.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.1 प्रस्तावना

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को आकर्षक बनाने में शारीरिक संरचना का हिष्ट–पुष्ट होना अत्यन्त आवश्यक है। बालक के अन्दर होने वाले शारीरिक परिवर्तनों को अभिव्यक्त करने के लिए प्रायः तीन शब्दों का प्रयोग किया जाता है। जो निम्नवत् है–

1. विकास

2. अभिवृद्धि

3. परिपक्वता

बालक के शारीरिक विकास के अन्तर्गत शरीर की संरचना, स्नायु मण्डल, माँसपेशिय वृद्धि एवं अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का महत्वपूर्ण स्थान है। शरीर के सभी अंगों के स्वस्थ्य होने से बालक शारीरिक रूप से स्वस्थ्य माना जाता है। जब बालक का शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगा तो उसका मानसिक स्वास्थ्य भी उत्तम होगा। ''स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ्य मस्तिष्क का वास होता है।'' इस कथन को दृष्टिगत रखते हुए कहा जा सकता है कि बालक का यदि शारीरिक विकास उत्तम होगा तो उसका शैक्षिक विकास भी सर्वोत्तम होगा। मनुष्य एक सहृदय प्राणी है। मनुष्य में सुख–दुख का अनुभव संवेगों पर आधारित होता है। कभी–कभी व्यक्ति हंसता रहता है परन्तु अचानक व्यथित होकर रोने लगता है। दया, सहिष्णुता, प्रेम, अक्रामकता, दुख–सुख, आनन्द की अनुभूति इत्यादि सभी गुण संवेगो पर आधारित होते हैं। प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत बालक के शारीरिक विकास के साथ–साथ संवेगात्मक विकास का भी विस्तृत वर्णन किया गया है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

1. शारीरिक परिवर्तनों को अभिव्यक्त करने के लिए किन तीन शब्दों का प्रयोग किया जाता है?

____

____

____

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

(1) शारीरिक विकास के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।

(2) जन्म से पूर्व तथा जन्म के पश्चात होने वाले शारीरिक परिवर्तनों को समझ सकेंगे।

(3) सभी अवस्थाओं में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के क्रमागत अवस्थाओं के विकास क्रम से अवगत हो सकेगे।

(4) शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले बाधक घटकों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(5) संवेग और संवेगात्मक विकास के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।

(6) संवेगो की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

(7) संवोगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(8) विभिन्न आयु वर्ग में परिलक्षित होने वाले संवेगों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त कर सकेंगे।

4.3 शारीरिक विकास

4.3.1 जन्म से पूर्व शारीरिक विकास

शिशु के जन्म लेने से पूर्व गर्भ में जब अण्ड शुक्राणु से मिलकर निषेचन करता है तब अण्ड निषेचित होकर दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। इस अवस्था में कोशा में विभाजन तीव्र गति से होता है। इनमें से कुछ, प्रजनन कोष और कुछ शरीर कोष बन जाते हैं। शरीर कोष से ही शरीर के समस्त भाग का निर्माण होता है। जन्म पूर्व कोष को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. डिम्बावस्था
2. पिण्डावस्था
3. भ्रूणावस्था

तीनों चरणों से गुजरने के दौरान शिशु के आकार–प्रकार में परिवर्तन गर्भ के अन्दर होता हैं। जन्म से लेकर छः वर्ष की आयु वाला बच्चा शिशु कहलाता है।

4.3.2 शैशवावस्था में शारीरिक विकास

शैशवावस्था में शारीरिक विकास की गति जन्म से तीन वर्ष की आयु तक तीव्र गति से होती है। शैशवावस्था में होने वाले शारीरिक विकास के महत्वपूर्ण पक्षों का वर्णन निम्नवत् है–

1. भार :– जन्म के समय से लेकर शैशवावस्था तक के समय में बालक का भार बालिका से अधिक होता है। जन्म के समय बालक का भार लगभग 7.15 पौंड और बालिकाओं का भार 7.13 पौंड होता है। शुरूआत के 6 महीने में शिशु का भार दोगुना और वर्ष की समाप्ति पर तीन गुना हो जाता है। बालक–बालिकाओं के भार को निम्न तालिका से भलि–भाँति समझा जा सकता है–

शैशवावस्था में बालक और बालिकाओं का औसत भार

आयु	जन्म के समय	3 माह	6 माह	9 माह	1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष	4 वर्ष	5 वर्ष	6 वर्ष
बालकों का औसत भार कि.ग्रा. में	3.2	5.7	6.9	7.4	8.4	10.1	11.8	13.5	14.8	16.3
बालिकाओं का औसत भार किग्रा.में	3.0	5.6	6.2	6.6	7.8	9.6	11.2	12.9	14.5	16.0

2. लम्बाई :– जन्म के समय शिशु की लम्बाई 51 सेमी. होती है। जन्म के समय बालक बालिकाओं से लम्बे होते हैं। शैशवावस्था तक बालक–बालिकाओं से लम्बाई में अधिक होते हैं। शैशवावस्था के विभिन्न वर्षों में बालक एवं बालिकाओं की लम्बाई को निम्न तालिका से समझा जा सकता है–

शैशवावस्था में बालक और बालिकाओं की औसत लम्बाई

आयु	जन्म के समय	3 माह	6 माह	9 माह	1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष	4 वर्ष	5 वर्ष	6 वर्ष
बालक की औसत लम्बाई (सेमी. में)	51.5	62.5	64.9	69.5	73.9	81.6	88.8	96.0	102.1	108.5
बालिकाओं की औसत लम्बाई (सेमी. में)	51.0	60.9	64.4	66.7	72.5	80.1	87.2	94.5	101.4	107.4

3. सिर एवं मस्तिष्क :– नवजात शिशु का सिर उसके शरीर की तुलना में बड़ा होता है। जन्म के समय सिर की लम्बाई शरीर की एक चौथाई होती है। जन्म के समय शिशु का भार 350 ग्राम तक पाया गया है। शैशवावस्था में मस्तिष्क की वृद्धि सर्वाधिक होती है।

4. हड्डियाँ :– जन्म के समय शिशु की हड्डियाँ छोटी होती हैं और इनकी संख्या 270 होती है। नवजात शिशु की हड्डियाँ छोटी, मुलायम तथा लचीली होती हैं। हड्डियाँ शिशुओं में कैल्शियम व अन्य खनिजों के पाये जाने के कारण धीरे–धीरे मजबूत होती है। बालकों की तुलना में बालिकाओं में अस्थिकरण जल्दी होता है।

5. दाँत :– जन्म के समय शिशुओं में दाँत नहीं पाये जाते हैं। छठे या सातवें महीने में शिशुओं में दूध के दाँत निकलने लगते हैं। एक वर्ष की आयु तक लगभग सभी शिशुओं में दूध के सभी दाँत निकल आते हैं।

6. स्नायु विकास :– स्नायु मण्डल तथा स्नायुकेन्द्रों का विकास भी 3 वर्ष की अवधि तक तीव्र गति से होता है।

7. माँसपेशियाँ :– नवजात शिशुओं में शरीर के कुल भार का 23ः माँसपेशियों का भार होता है। उम्र के साथ–साथ माँसपेशियों का भार बढ़ता जाता है।

8. अन्य अंग :– शिशु के हाथ और पैर का विकास तीव्र गति से होता है। जन्म के समय शिशु के हृदय की धड़कन अनियमित होती है। वह कभी धीमी तथा कभी तेज होती है। जैसे–जैसे हृदय बड़ा होता जाता है वैसे–वैसे धड़कन में स्थिरता आ जाती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः— नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व—मूल्यांकन करें।

2. जन्म पूर्व काल के तीनों भागों के नाम लिखिए।

____

____

____

3. शैशवावस्था में शारीरिक विकास के अन्तर्गत जन्म के समय शिशुओं का भार कितना होता है।

____

____

____

4.4 बाल्यावस्था में शारीरिक विकास

बाल्यावस्था की अवधि 6—12 वर्ष तक होती है। 6—9 वर्ष की आयु तक शारीरिक विकास अत्यन्त तेजी के साथ होता है। इसके पश्चात् शारीरिक विकास की गति मन्द हो जाती है। बाल्यावस्था में होने वाले शारीरिक विकास के समय होने वाले परिवर्तनां का वर्णन निम्नवत् है —

1. **भार :—** बाल्यावस्था में बालिकाओं की भार की अपेक्षा बालकों के भार में अधिक वृद्धि होती है। 9—10 वर्ष तक बालकों का भार बालिकाओं से अधिक होता है। उसके पश्चात् बालिकाओं का भार बालकों से अधिक होना प्रारम्भ हो जाता है।

बाल्यावस्था में बालक और बालिकाओं का औसत भार

आयु	6 वर्ष	7 वर्ष	8 वर्ष	9 वर्ष	10 वर्ष	11 वर्ष	12 वर्ष
बालकों का औसत भार (कि.ग्रा. में)	16.3	18.0	19.7	21.5	23.5	25.9	28.5
बालिकाओं का औसत भार (कि.ग्रा. में)	16.0	17.0	19.4	21.3	23.6	26.4	29.8

2. **लम्बाई :—** 6 वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक शरीर की लम्बाई 5—7 सेमी0 प्रतिवर्ष बढ़ती है। बाल्यावस्था के शुरूआत में बालकों की लम्बाई बालिकाओं से 1 सेमी. अधिक होती है। इसके पश्चात् बालिकाओं की लम्बाई बालकों से 1 सेमी0 अधिक हो जाती है।

बाल्यावस्था में बालक और बालिकाओं का औसत लम्बाई

आयु	6 वर्ष	7वर्ष	8 वर्ष	9 वर्ष	10 वर्ष	11 वर्ष	12 वर्ष
बालकों की औसत लम्बाई (सेमी0 में)	108.5	113.9	119.3	123.7	128.4	133.4	38.3
बालिकाओं की औसत लम्बाई (सेमी0 में)	107.4	112.8	118.2	122.9	128.4	133.6	139.2

3. **सिर एवं मस्तिष्क :–** बाल्यावस्था के समाप्ति पर सिर एवं उसके आकार में स्थिरता आ जाती है। इस अवस्था के समाप्ति पर मस्तिष्क के भार की वृद्धि रूक जाती है। इस समय मस्तिष्क का पूर्ण विकास हो जाता है।

4. **हड्डियाँ :–** इस अवस्था में हड्डियों में अस्थिकरण के कारण दृढ़ता आ जाती है। बाल्यावस्था में शरीर के अन्दर 300 तक हड्डियाँ पायी जाती हैं।

5. **दाँत :–** शिशुओं में पाये जाने वाले दूध के दाँत बाल्यावस्था के शुरूआत में गिरने लगते हैं। बाल्यावस्था के अन्त तक बालक एवं बालिकाओं के सभी स्थाई दाँत निकल आते हैं। बालकों की तुलना में बालिकाओं में स्थाई दाँत जल्दी निकल आते हैं।

6. **अन्य अंग :–** बाल्यावस्था में माँसपेशियों का विकास बहुत धीमे गति से होता है। 12 वर्ष की आयु में ह्रदय की धड़कन 1 मिनट में 85 बार होती है। इस अवस्था में बालक के कन्धे चौड़े, कूल्हे– पतले एवं पैर सीधे व लम्बे होते हैं जब कि बालिकाओं के कन्धे पतले, कूल्हे चौड़े और पैर अन्दर की तरफ झुके होते हैं। 11 या 12 वर्ष की आयु में बालकों और बालिकाओं के यौनांगों का विकास तीव्र गति से होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

4. बाल्यावस्था में शारीरिक विकास की अवस्था में बालकों में हड्डियों की संख्या कितनी होती है?

____

____

____

4.5 किशोरावस्था में शारीरिक विकास

किशोरावस्था में शारीरिक विकास निम्नलिखित प्रकार से होता है–

1. **भार :–** किशोरावस्था में बालकों का भार बालिकाओं से अधिक बढ़ता है। इस अवस्था के अन्त में बालकों का भार बालिकाओं की अपेक्षा 25 पौण्ड अधिक होता है।

किशोरावस्था में बालक और बालिकाओं का औसत भार

आयु	12 वर्ष	13 वर्ष	14 वर्ष	15 वर्ष	16 वर्ष	17 वर्ष	18 वर्ष
बालकों का औसत भार (कि.ग्रा. में)	28.5	32.1	35.7	39.6	43.2	45.7	47.3
बालिकाओं का औसत भार (कि.ग्रा. में)	29.8	33.3	36.8	39.8	41.1	42.2	43.1

2. **लम्बाई :–** इस अवस्था में शारीरिक लम्बाई, बालक–और बालिकाओं दोनों में तीव्र गति से बढ़ती है। बालकों की लम्बाई 18 वर्ष या उससे अधिक उम्र तक बढ़ती है जब कि बालिकाएँ 16 वर्ष तक अपनी अधिकतम लम्बाई को प्राप्त कर लेती है।

किशोरावस्था में बालक और बालिकाओं की औसत लम्बाई

आयु	12 वर्ष	13 वर्ष	14 वर्ष	15 वर्ष	16 वर्ष	17 वर्ष	18 वर्ष
बालकों की औसत लम्बाई(सेमी0 में)	138.3	144.6	150.1	155.5	159.9	161.4	161.8
बालिकाओं की औसत लम्बाई(सेमी0 में)	139.2	143.9	147.5	149.6	157.0	151.5	151.6

3. **सिर एवं मस्तिष्क :–** किशोरावस्था में सिर और मस्तिष्क का विकास निरन्तर होता रहता है। किशोरावस्था आते–आते सिर का पूर्ण विकास हो जाता है। इस अवस्था में मस्तिष्क का भार 1200–1400 ग्राम तक हो जाता है।

4. **हड्डियाँ:–** किशोरावस्था में हड्डियों में लचीलापन समाप्त हो जाता है तथा उसमें दृढ़ता आ जाती है।

5. **दाँत :–** व्यक्ति में कुल स्थाई दाँतों की संख्या 32 होती है। 17–18 वर्ष तक 28 दाँत निकल चुके होते हैं। केवल चार दाँत निकलने शेष होते हैं जो 25 वर्ष की आयु तक निकल आते हैं।

6. **अन्य अंग :–** इस अवस्था के अन्त तक किशोरों के हृदय के धड़कन की दर 1 मिनट में 72 बार होती है। इस अवस्था में माँसपेशियों का विकास तीव्र गति से होता है। इस अवस्था में बालकों के कन्धे चौड़े और बालिकाओं के वक्षस्थलों तथा स्तनों के आकार में वृद्धि होती है। बालकों में स्वप्नदोश एवं बालिकाओं में मासिक स्राव प्रारम्भ हो जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी:– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

5. किशोरावस्था में शारीरिक विकास के समय बालक बालिकाओं में परिलक्षित होने वाले किसी एक लक्षण को लिखिए।

____

____

____

4.6 शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

शैशवावस्था, बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था में शारीरिक विकास को अनेक कारक प्रभावित करते हैं। शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारकों का वर्णन निम्नवत् है –

1. **आनुवंशिकता :–** शारीरिक विकास मुख्यतया आनुवंशिकता द्वारा प्रभावित होता है। स्वस्थ्य माता–पिता की संतान स्वस्थ्य तथा कमजोर एवं व्याधियों से ग्रसित माता–पिता की संतान कमजोर एवं व्याधियों से ग्रसित होती है।

2. **वातावरण :–** बालक का शारीरिक विकास वातावरण के द्वारा भी प्रभावित होता है। स्वच्छ वातावरण एवं पौष्टिक खान–पान जब बालकों को मिलता है तब उनका शारीरिक विकास उत्तम होता है तथा इसके विपरीत प्रदूषित वातावरण बालकों के शारीरिक विकास को अवरूद्ध कर देते हैं। अतः हम कह सकते हैं जिन बालकों का रहन–सहन व खान–पान स्वच्छ एवं अच्छा होगा उनका शारीरिक विकास भी अच्छा होगा।

3. **संतुलित आहार :–** बालक के उचित शारीरिक विकास के लिए पौष्टिक और संतुलित आहार की आवश्यकता होती है। जिन बच्चों के माता–पिता आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होते हैं, वे अपने बालकों को पौष्टिक आहर उपलब्ध कराते हैं। ऐसी परिस्थिति में उन बच्चों का शारीरिक विकास अच्छा होता है। जबकि इसके विपरीत जिन बालकों के माता–पिता निर्धन होते हैं, वे अपने बच्चों को पौष्टिक आहार उपलब्ध नहीं करा पाते। इस प्रकार के बच्चों का शारीरिक विकास अवरुद्ध हो जाता है।

4. **दिनचर्या :–** बालक के शारीरिक विकास के लिए नियमित दिनचर्या का कड़ाई से पालन करना चाहिए। बालक का समय से उठना, समय से नहाना, समय से दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होना, समय से खाना, समय से पढ़ना, समय से खेलना, समय से घूमना, समय से सोना इत्यादि का निश्चित समय होना चाहिए। अनुशासित जीवन यापन से बालक का शारीरिक विकास समुचित ढंग से पूर्णता को प्राप्त करता है।

5. **निद्रा एवं विश्राम :–** शारीरिक विकास के लिए निद्रा एवं विश्राम की अत्यन्त आवश्यकता होती है। बालक अपने विभिन्न क्रियाकलापों के द्वारा थक जाते हैं। थकान के कारण उसका शारीरिक विकास प्रभावित होता है। इसके लिए शिशुओं को 12 घण्टे की गहरी नींद आवश्यक है। बालकों को 10 घण्टे तथा किशोरों को 8 घण्टे तक सोना चाहिए। निद्रा से शरीर की थकान दूर होती है और बालक के अन्दर ताजगी तथा स्फूर्ति विकसित हो जाती है।

6. **प्रेम :–** बालक के शारीरिक विकास के लिए प्रेम एवं अपने पन की आवश्यकता होती है। जिन बालकों को अपने प्रियजनों का प्यार नहीं मिलता वे तनाव से ग्रसित

होकर दुखी हो जाते हैं और उनका शारीरिक विकास प्रभावित होता है। जिन बालकों के प्रियजन की मृत्यु हो जाती है, वे अपने आप को अकेला एवं तिरस्कृत महसूस करते हैं जिससे उनका शारीरिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।

7. **सुरक्षा :–** बालकों के शारीरिक विकास के लिए उनके अन्दर सुरक्षा की भावना का बोध होना चाहिए। असुरक्षा से ग्रसित बालकों के अन्दर भय के कारण आत्मविश्वास की कमी हो जाती है। इसके कारण भी बालक का शारीरिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।

8. **खेल एवं व्यायाम :–** बालक के शारीरिक विकास के लिए खेल एवं व्यायाम भी आवश्यक है। खेल एवं व्यायाम से बालक के शरीर से प्रदूषित वर्ज्य प्रदार्थ पसीने के रूप में बाहर निकल जाते हैं तथा त्वचा के रोम छिद्र खुल जाते हैं, रक्त का संचरण उचित ढंग से होने लगता है जिससे मॉसपेशियाँ सुडौल एंव सशक्त हो जाती है। नियमित व्यायाम से पाचन शक्ति भी ठीक रहती है और रात में नींद भी अच्छे ढंग से आती है।

9. **अन्य कारक :–** उपरोक्त कारकों के अतिरिक्त बालक के शारीरिक विकास को अन्य कारक भी प्रभावित करते हैं जो निम्नलिखित हैं–

(i) दुर्घटना के कारण

(ii) बीमारी के कारण

(iii) परिवार की खराब आर्थिक स्थिति के कारण

(iv) परिवार के सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण

(v) सामाजिक कुरीतियों के कारण

(vi) प्रदूषित जलवायु के कारण

उपरोक्त कारकों के द्वारा भी बालक का शारीरिक विकास अवरूद्ध होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

6. शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों के नाम लिखिए।

____

____

____

4.7 शारीरिक विकास का शैक्षिक महत्व

बालक के शारीरिक विकास का शिक्षा पर प्रभाव निम्नवत है –

1. स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ्य मस्तिष्क का वास होता है। अर्थात जब बालक निरोगी होगा तो वह उचित ढंग से ज्ञान प्राप्त कर सकेगा।
2. शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालकों में सीखने–सिखाने की प्रवृति तीव्र होती है।
3. शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालक थकान का अनुभव नहीं करते हैं।
4. शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालक अधिक समय तक पढ़ाई में ध्यान लगा सकते हैं।
5. शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालक पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भी रुचिपूर्ण ढंग से प्रतिभाग करते हैं।
6. शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालकों का दृष्टिकोण स्नेहपूर्ण एवं सहानुभूति पूर्ण होता है।

निष्कर्षस्वरूप हम कह सकते हैं कि शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालक ही अपने सर्वांगीण विकास के साथ–साथ राष्ट्र के प्रगति में भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

7. शारीरिक विकास के दो शैक्षिक महत्वों को लिखिए।

____

____

____

4.8 संवेगात्मक विकास

समाज के प्रत्येक प्राणी में संवेगात्मक भाव जैसे प्रेम, भय, क्रोध, दया, भाईचारा, सुख–दुख, कामवासना की प्रवृत्ति का भाव सभी प्राणियों में निहित होता है। व्यक्ति के जीवन में परिस्थितिजन्य संवेगात्मक भाव उत्पन्न होता है। व्यक्ति के किसी कार्य से जब उसका समाज में सम्मान बढ़ता है तब उसे सुख की अनुभूति प्राप्त होती है। परन्तु जब व्यक्ति इसके विपरीत कोई गलत कृत्य करता है तब उसके अन्दर भय व्याप्त हो जाता है और वह दुख की अनुभूति करता है। कभी–कभी व्यक्ति को इच्छा के विरुद्ध कार्य करना पड़ता है जिसके कारण व्यक्ति उग्र होकर आक्रामकता का भाव प्रदर्शित करता है। संवेगात्मक परिस्थिति में व्यक्ति का शारीरिक तथा मानसिक पक्ष परिवर्तित होता है। संवेगात्मक स्थिति को मानसिक उपद्रव की भी संज्ञा दी जाती है। संवेगों के कारण ही

व्यक्ति प्रशंसनीय एवं निन्दनीय कार्य को करने के लिए उत्तरदायी होता है। संवेगों का विकास जन्म के बाद धीरे–धीरे होता है। संवेगों पर आधारित विकास को ही संवेगात्मक विकास की संज्ञा दी जाती है।

4.8.1 संवेग का अर्थ

संवेग का अंग्रेजी रूपान्तरण Emotion है। इस शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के Emovere से हुई है जिसका अभिप्राय उत्तेजित होना है। संवेग का अर्थ आन्तरिक व्यवहारों को बाहर की ओर प्रकट करने से है।

4.8.2 संवेग की परिभाषाएँ

संवेग की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत् हैं –

1. **वुडवर्थ –** ''संवेग, व्यक्ति की उत्तेजित दशा है।''

"Emotion is moved or stirred-up state of the individual." **-Woodworth**

2. **ड्रेवर –** ''संवेग, प्राणी की एक जटिल दशा है, जिसमें शारीरिक परिवर्तन, प्रबल भावना के कारण उत्तेजित दशा और निश्चित प्रकार का व्यवहार करने की प्रवृत्ति निहित रहती है।''

"Emotion is a complex state of the organism, involving bodily changes, a state of excitement marked by strong feeling and an impulse towards a definite form of behaviour." **-Drever**

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

8. संवेग को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

4.9 शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास

विद्वानों का मत है सभी संवेग जन्मजात नहीं होते हैं और उनका विकास धीरे–धीरे होता रहता है। शैशवावस्था में शिशु के अन्दर केवल उत्तेजनाएँ परिलक्षित होती हैं। शिशु जैसे–जैसे बड़ा होता है उनके अन्दर डर, खुशी, क्रोध इत्यादि से सम्बन्धित संवेगों का विकास होता है।

शिशुओं में पायी जाने वाली संवेगात्मक विकास से सम्बन्धित विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

1. शिशु जन्म लेने के पश्चात अपनी उत्तेजनाओं के माध्यम से रोकर, पैर–हाथ फेंककर, चिल्लाकर अपने संवेगात्मक व्यवहार को प्रदर्शित करते हैं।
2. शिशुओं की उत्तेजनाएँ स्थायी नहीं होती, आवश्यकता की पूर्ति होने पर संवेगात्मक गति कम हो जाती है। जैसे यदि शिशु रो रहा है उस समय माँ के स्तनपान कराते ही बच्चा रोना बन्द कर देता है और हँसने लगता है।
3. जैसे–जैसे शिशु का विकास होता जाता है संवेगात्मक व्यवहार में स्थिरता आने लगती है।
4. शिशुओं के संवेगात्मक व्यवहार में 3 माह पूर्व कोई स्पष्टता नहीं होती है। 3 माह के पश्चात् उनके हाव–भाव से संवेग स्पष्ट होने लगते है। संवेग का कारण क्या है यह 5 माह के शिशु के व्यवहार को देखकर समझा जा सकता है कि शिशु के अन्दर यह व्यवहार भूख लगने के कारण है या किसी अन्य कारण से।
5. शिशुओं के अन्दर तीन वर्ष की आयु से प्रेम इत्यादि का भावनाएँ विकसित होने लगती है। 3 वर्ष की आयु में शिशु अपने दोस्तों के प्रति प्रेम सम्बन्धी व्यवहार को करने लगते हैं और वे साथ खेलते व हँसते हैं।
6. 2 वर्ष के शिशुओं के अन्दर डर सम्बन्धी संवेगों का विकास नहीं होता। धीरे– ध ीरे ये शिशुओं में विकसित होते रहते हैं। 5 वर्ष की उम्र तक शिशु अपने डर को नियन्त्रित नहीं कर पाते।
7. 5 वर्ष के पश्चात् शिशुओं में मातृ–पितृ प्रेम तथा विरोध की भावना का विकास होता है। बालकों का माता के प्रति और बालिकाओं का पिता के प्रति लगाव परिलक्षित होने लगता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

9. शैशवावस्था में शिशु के अन्दर क्या परिलक्षित होता है?

____

____

____

4.10 बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास

बाल्यावस्था में होने वाले संवेगात्मक विकास से सम्बन्धित विशेषताओं एवं गुणों का वर्णन निम्नवत् है–

1. **संवेगों की उग्रता में कमी :—** बाल्यावस्था में बालक के अन्दर संवेगात्मक विकास से सम्बन्धित संवेगों की उग्रता में कमी आने लगती है। बाल्यावस्था में बालक के अन्दर संवेगों को दमन करने की क्षमता का विकास हो जाता है, जिसके कारण बालक अपने क्रोध व डर पर नियंत्रण प्राप्त कर लेते हैं।

2. **जिज्ञासा की प्रबलता :—** इस अवस्था में बालक के अन्दर किसी नवीन वस्तु को देखकर उसके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की प्रबल जिज्ञासा जाग्रत होती है।

3. **ईर्ष्या का विकास :—** इस अवस्था के बालक एवं बालिकाओं के अन्दर ईर्ष्या की भावना का विकास तेजी से होने लगता है। ये अपने घर में या विद्यालय में अपने प्रियजनों एवं मित्रों के वस्तुओं को देखकर ईर्ष्या करने लगते हैं। ईर्ष्या के कारण बालक एवं बालिकाएँ घर एवं स्कूल में अपने मित्रों इत्यादि के सम्बन्ध में व्यंग करते हैं, उनकी बुराई करते हैं और उनके ऊपर गलत दोषारोपण भी करते हैं। इस प्रवृत्ति से बालकों के संवेगात्मक विकास पर गलत असर पड़ता है।

4. **क्रोध की प्रबलता :—** बालक एवं बालिकाओं में इस अवस्था में उनकी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर क्रोध प्रबल हो जाता है बालक क्रोधित होकर आक्रामक हो जाते हैं। क्रोध के कारण वे चिल्लाने लगते हैं, झगड़ा करते हैं, उदास हो जाते हैं, खाना—पीना छोड़ देते हैं, विद्यालय से पलायन कर जाते हैं। इस प्रकार की प्रवृत्ति भी बालक के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करती हैं।

5. **स्नेहपूर्ण व्यवहार का प्रकटीकरण :—** इस अवस्था में बालक और बालिकाओं के अन्दर अपने मित्रों के प्रति स्नेह भाव की प्रधानता होती है। इस प्रकार के माहौल से बालक और बालिकाओं का संवेगात्मक विकास बहुत ही अच्छे ढंग से होता है।

6. **उल्लास की प्रचुरता :—** इस अवस्था के बालकों को जब उनकी इच्छाओं के अनुरूप, कपड़ा, खेल—कूद के समान, घूमने की छूट, भ्रमण इत्यादि पर जाने के अवसर उपलब्ध होते हैं तब वे अत्यधिक हर्षित व उत्साहित होते है। उनका जीवन उल्लास से परिपूर्ण होता है, इस प्रकार के वातावरण के सृजन से उनके अन्दर संवेगात्मक विकास की गति अत्यधिक होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

10. बाल्यावस्था के सांवेगिक विकास से जुड़ी किसी एक विशेषता को लिखिए।

____

____

____

4.11 किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास

विकास में तीव्रता किशोरावस्था में सबसे अधिक होती है। किशोरावस्था के अन्तर्गत पायी जाने वाली संवेगात्मक विकास की विशेषताओं का वर्णन निम्नवत् है –

1. **भावना का विकास–** इस अवस्था के बालक एवं बालिकाएँ जब अपने भावनाओं को वश में नहीं कर पाते है तब वे बुरी संगत में आकर गलत मार्ग का अनुसरण कर लेते हैं।

2. **स्वाभिमान की भावना –** इस आयु वर्ग के बालकों के अन्दर भावनात्मकता अधिक पायी जाती है। छोटी–छोटी बातों से उन्हें मानसिक आघात पहुँचता है जिसे वे अपने स्वाभिमान से जोड़कर देखते हैं। वे इसे अपना अपमान समझते हैं जिसके कारण उनके अन्दर घर–परिवार तथा विद्यालयों से भागने की प्रवृत्ति का विकास होता है। इस अवस्था में बालक अपमान भाव से ग्रसित होने पर आत्महत्या भी कर लेता है।

3. **व्यवहार में असमानता –** किशोरावस्था के बालक और बालिकाओं में संवेगों की अधिकता पायी जाती है। संवेगों की अधिकता के कारण उनके व्यवहार काफी सीमा तक एक दूसरे से भिन्न होते हैं। इस दशा में बालक कभी खुशी का कभी दुख का, कभी हताशा का तो कभी चिड़चिड़ापन का व्यवहार प्रकट करते हैं।

4. **विरोधी प्रवृत्ति –** इस अवस्था के बालक–बालिकाएँ स्वतन्त्र होकर अपनी इच्छानुसार कार्य को सम्पादित करना चाहते हैं। यदि उन्हें अपनी इच्छानुसार कार्य करने से रोका जाता है या उनके कार्य में अवरोध उत्पन्न किया जाता है तो वे विद्रोही हो जाते हैं। इस विद्रोह की अवस्था में वे सामाजिक मान्यताओं की परवाह किए वगैर समाज विरोधी व्यवहार करते हैं। वे अपने माता–पिता, गुरूओं और बड़ों का सम्मान नहीं करते तथा उनकी बातों का पालन भी नहीं करते हैं। वे अपने इस व्यवहार से इस बात की चिन्ता भी नहीं करते कि इसका परिणाम क्या होगा।

5. **कामोत्तेजना की भावना –** काम भावना के कारण बालक और बालिकाओं में प्रेम संवेग बढ़ जाते हैं। वे एक दूसरे के प्रति आकर्षित होकर स्व प्रेम, समलिंगीय प्रेम एवं विषमलिंगीय प्रेम के द्वारा काम प्रवृत्ति के संवेगों को प्रकट करते हैं।

6. **वीर पूजा –** इस अवस्था में बालक और बालिकाओं में वीर पूजा की अधिक प्रधानता होती है। बालक कहानी, उपन्यास, सिनेमा, नायक–नायिकाओं के गुणों से आकर्षित होकर उनके आदर्शों का चयन कर उस दिशा में कदम बढ़ाते हैं। वे अपने से किसी को आदर्श मानकर उनके आदर्शों के अनुरूप अपने जीवन को जीने का प्रयास करते हैं।

7. **समाज विरोधी कार्यों को करने की प्रवृत्ति –** इस अवस्था के बालक एवं बालिकाएँ अपनी इच्छा एवं आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होने के कारण परिस्थिति के साथ अपना उचित अनुकूलन नहीं कर पाते हैं। परिस्थिति के साथ अनुकूलन न हो पाने के कारण उनके अन्दर हीनता एवं निराशावादी भावना का विकास होता है। इस भावना से ग्रसित होने के कारण उनकी प्रवृत्ति अपराध की तरफ बढ़ जाती है और वे समाज तथा राष्ट्र विरोधी कार्यों को करने लगते हैं।

8. **चिन्तित व्यवहार के कारण –** किशोरावस्था में बालक एवं बालिकाएँ अनेक कारणों से चिन्तित रहते हैं वे अपने व्यक्तित्व, रंग–रूप, स्वास्थ्य, प्रतिष्ठा, सामाजिक–आर्थिक स्थिति, शैक्षिक उन्नति तथा भविष्य को लेकर सदैव चिन्तित रहते हैं। चिन्ता के कारण किशोरों के व्यवहार में आक्रामकता आ जाती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

11. किशोरावस्था के सांवेगिक विकास से जुड़ी एक विशेषता को लिखिए।

____

____

____

4.12 संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारकों का वर्णन निम्नवत् किया जा रहा है –

1. **स्वास्थ्य :—** स्वस्थ बालकों के अन्दर सांवेगिक व्यवहार में स्थिरता पाई जाती है जब कि इसके विपरित रोग ग्रस्त बालकों के संवेगिक व्यवहार अस्थिर होते हैं।

2. **थकान :—** बालक जब अधिक थक जाता है तो उनका सांवेगिक व्यवहार प्रभावित होता है। थकान बालक के अन्दर अवांछनिय संवेगात्मक व्यवहार को बढ़ाता है जिसके कारण उनके अन्दर क्रोध, नाराज होने की प्रवृत्ति, चिड़चिड़ापन, झल्लाहट, उदासी आदि की अधिकता परिलक्षित होती है।

3. **पारिवारिक परिवेश :—** जब परिवार का वातावरण सुखमय, शान्त, आकर्षक, स्नेहपूर्ण, सुरक्षात्मक एवं मिलनसार होता है तब ऐसी स्थिति में बालक का सांवेगिक विकास अच्छा होता है। परन्तु जब बालक का पारिवारिक वातावरण इसके विपरित होता है तब उनके अन्दर झगड़ा, कलह एवं विलासिता की भावना का विकास होता है। जिसके कारण उनका सांवेगिक विकास असंतुलित हो जाता है।

4. **परिवार के सदस्यों का व्यवहार :—** इस अवस्था के बालकों के प्रति माता—पिता का उपेक्षात्मक व्यवहार, अधिक रोक—टोक करना, रोगों के विषय में बातचीत करना, बच्चों के प्रति आवश्यकता से अधिक सजग रहना, बच्चों के इच्छानुसार कार्य करने से मना करना इत्यादि कारण भी बालकों के सांवेगिक विकास में अवांछनीय कारक के रूप में कार्य करते हैं जिससे बालकों का सांवेगिक विकास प्रभावित होता है।

5. **सामाजिक मान्यता :—** कभी—कभी इस अवस्था के बालक कुछ ऐसा कार्य करना चाहता है जिसकी सामाजिक मान्यता प्राप्त नहीं होती है। इस परिस्थिति के कारण भी बालक का सांवेगिक विकास प्रभावित होता है और जिसके कारण बालक उग्र हो जाते हैं।

6. **मानसिक योग्यता :—** कुछ बालकों में उच्च एवं कुछ बालकों में निम्न मानसिक योग्यताएॅ पायी जाती है। उच्च मानसिक योग्यता वाले बालक अधिक बुद्विमान होते हैं जबकि निम्न मानसिक योग्यता वाले बालक कम बुद्विमान होते हैं। उच्च मानसिक योग्यता वाले बालकों का सांवेगिक विकास, निम्न मानसिक योग्यता वाले बालकों से अधिक होता है।

7. **आर्थिक स्तर :—** बालक के आर्थिक स्थिति का भी उसके सांवेगिक स्थिरता पर प्रभाव पड़ता है। आर्थिक रूप से सम्पन्न बालकों के संवेगों में संतुलन एवं स्थिरता पायी जाती है जबकि आर्थिक रूप से विपन्न बालकों के संवेगों में संतुलन एवं स्थिरता कम पायी जाती है।

8. **विद्यालय :—** विद्यालय का वातावरण भी बालकों के सांवेगिक विकास को प्रभावित करता है। बालक विद्यालय में जो प्रतिक्रियाएँ करता है उसका सीधा

सम्बन्ध उसके सांवेगिक क्रियाओं से जुड़ा होता है। यदि बालक की रुचि के अनुकूल विद्यालयों में शिक्षण एवं पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन कराया जाता है तब बालक उसमें रुचि दिखाकर प्रतिभाग करते हैं और उनका सांवेगिक विकास उत्पन्न होता है। जबकि इसके विपरीत परिस्थितियाँ होने पर उनका सांवेगिक विकास प्रभावित होता है जिसके कारण उनके अन्दर क्रोध, झल्लाहट, ईर्ष्या एवं घृणा के भाव का विकास होता है।

9. **शिक्षक :–** शिक्षक अपने व्यवहार से बालक का उचित सांवेगिक विकास कर सकता है। शिक्षक अपने आचरण से एवं अपनी योग्यता से बालकों की योग्यता को पहचान कर उनके समक्ष अच्छे और खराब उदाहरण प्रस्तुत करके उन्हें साहसी या कायर, क्रोधी या सहनशील, आक्रामक या शान्तिप्रिय बना सकते हैं। शिक्षक बालकों के अन्दर शीलगुणों का विकास कर उन्हें आदर्श नागरिक बना सकते हैं। शिक्षक बालकों में अच्छे आदतों का अनुसरण करने की क्षमता का विकास कर सकते हैं। शिक्षक ही बालकों के अन्दर संवेगों को नियंत्रित करने की समझ विकसित कर सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

5. सांवेगिक विकास को प्रभावित करने वाले एक कारक को लिखिए।

____

____

____

4.13 सारांश

जन्म से पूर्व शारीरिक विकास के तीन महत्वपूर्ण पक्षों डिब्बावस्था, पिण्डावस्था, भ्रूणावस्था के दौरान शिशु के शारीरिक रचना का विकास गर्भ के अन्दर होता है। इसके साथ ही शैशवावस्था एवं बाल्यावस्था में होने वाले शारीरिक विकास तथा उसे प्रभावित करने वाले कारकों के अध्ययन से स्पष्ट है कि शारीरिक विकास उत्तम होने पर ही बालक का मानसिक विकास अच्छी तरह से हो सकता है। उचित पर्यावरण तथा अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न करने पर ही शारीरिक रूप से स्वस्थ शिशुओं, बालकों एवं किशोरों का उत्तम विकास किया जा सकता है। संवेग किसी शिशु की उत्तेजित अवस्था है। बालकों के विकास में संवेगों की महत्वपूर्ण भूमिका है। कुछ संवेग जन्म से ही पाये जाते हैं और कुछ आचरण के द्वारा अर्जित किये जाते हैं। बाल्यावस्था में बालकों के अन्दर लगभग सभी प्रकार के संवेगों का विकास हो जाता है। विभिन्न

प्रकार के संवेगों का प्रकटीकरण उम्र के बढ़ने के साथ परिलक्षित होती है। शिक्षकों को संवेगों का ज्ञान होना चाहिए जिससे वे अपने बालकों में वांछनिय संवेगों को बढ़ा सके तथा अवांछनिय संवेगों को दूर करने हेतु मार्गदर्शन प्रदान कर सके।

4.14 अभ्यास कार्य

1. बालक के शारीरिक विकास की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. बालक के शारीरिक विकास का सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. बालक के शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों एवं शैक्षिक महत्व की विवेचना कीजिए।
4. संवेगात्मक विकास के अर्थ को स्पष्ट करते हुए शैशवावस्था से किशोरावस्था तक के सांवेगिक विकास का वर्णन कीजिए।
5. सांवेगिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

4.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Craig, J. Grace (1983) : Human Development, Prentice Hall; INC Englewood Cliffs, New Jersey.

Sntrock, J.W. (2007) : Child Development Eleventh Edition, Tata Mc-Graw Hill, New Delhi.

Wolman, B.B. (Ed.) (1982) : Hanbook of Development Psychology, Prentice Hall, : Englewood cliffs, New Jersey.

गुप्ता एस. पी. एवं गुप्ता अलका (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

सारस्वत मालती (2005) : मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन लखनऊ।

सिंह अरूण कुमार शिक्षा (2008) : मनोविज्ञान, बी. बी. प्रिंटर्स पटना।

सिंह कर्ण (2008) : अभिगमकर्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, गोविन्द प्रकाशन लखीमपुर–खीरी।

4.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (i) विकास (ii) अभिवृद्धि (iii) परिपक्वता
2. (i) डिम्बावस्था (ii) पिण्डावस्था (iii) भ्रूणावस्था
3. बालक का भार 7.15 पौण्ड तथा बालिकाओं का भार 7.13 पौण्ड होता है।
4. 300

5. इस अवस्था में बालकों के कन्धे चौड़े और बालिकाओं के वक्षस्थलों तथा स्तनों के आकार में वृद्धि होती है। बालकों में स्वप्नदोष एवं बालिकाओं में मासिक स्राव प्रारम्भ हो जाता है।

6. आनुवंशिकता, वातावरण, संतुलित आहार, दिनचर्या, निद्रा एवं विश्राम, प्रेम, सुरक्षा एवं खेल तथा व्यायाम शारीरिक विकास को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं।

7. (i) स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ्य मस्तिष्क का वास होता है। अर्थात जब बालक निरोगी होगा तो वह उचित ढंग से ज्ञान को प्राप्त कर सकेगा।

   (ii) शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालकों में सीखने–सिखाने की प्रकृति तीव्र होती है।

8. वुडवर्थ – ''संवेग व्यक्ति की उत्तेजित दशा है।''

9. उत्तेजनाएँ

10. इस अवस्था में बालक के अन्दर किसी नवीन वस्तु को देखकर उसके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की प्रबल जिज्ञासा जाग्रत होती है।

11. इस अवस्था के बालक एवं बालिकायें जब अपने भावनाओं को वश में नहीं कर पाते हैं तब वे बुरी संगत में आकर गलत मार्ग का अनुसरण कर लेते हैं।

12. स्वस्थ बालकों के अन्दर सांवेगिक व्यवहार में स्थिरता पाई जाती है जब कि इसके विपरित रोग ग्रस्त बालकों के सांवेगिक व्यवहार अस्थिर होते हैं।

इकाई – 5 संज्ञानात्मक विकास एवं भाषा विकास

इकाई की रूपरेखा–

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 संज्ञानात्मक विकास का अर्थ एवं परिभाषाएँ
5.4 पियाजे के संज्ञानात्मक सिद्धान्त में प्रयुक्त महत्वपूर्ण सम्प्रत्यय
5.5 पियाजे के संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त
5.6 ब्रूनर के संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त
5.7 भाषा विकास का अर्थ
5.8 शैशवावस्था में भाषा विकास
5.9 बाल्यावस्था में भाषा विकास
5.10 किशोरावस्था में भाषा विकास
5.11 भाषा विकास को प्रभावित करने वाले कारक
5.12 सारांश
5.13 अभ्यास कार्य
5.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें
5.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.1 प्रस्तावना

शिशुओं में मानसिक विकास से आशय 'समझ' से है। जैसे–जैसे बालक की आयु में वृद्धि होती जाती है उनके अन्दर सोचने, समझने एवं चिन्तन करने की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। इन सबका सीधा सम्बन्ध बुद्धि से होता है। बुद्धि का सम्बन्ध मस्तिष्क से होता है। मानसिक विकास का सम्बन्ध व्यक्ति की मानसिक क्षमताओं से होता है। सभी प्रकार की मानसिक क्रियाएँ संज्ञानात्मक विकास के अन्तर्गत आती है। संज्ञानात्मक विकास का सम्बन्ध बालकों के बौद्धिक स्तर से होता है। प्रस्तुत इकाई में संज्ञानात्मक विकास के अर्थ, प्रकृति, अवस्थाओं, बालकों में सम्प्रत्यय निर्माण एवं संज्ञानात्मक विकास के सम्बन्ध में जिन पियाजे एवं ब्रुनर के सिद्धान्त का वर्णन किया गया है। मनुष्य इस ब्रह्माण्ड पर पाये जाने वाला सबसे बुद्धिमान प्राणी हैं। इस जगत के सभी जीवधारी किसी न किसी भाषा का प्रयोग करके अपनी बातों को सम्प्रेषित करते हैं। चूँकि मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। वह अपने विचारों का आदान–प्रदान भाषा के माध्यम से करता है।

देश, अवस्था काल के अनुसार हर जगह अलग–अलग भाषा बोली जाती है। भाषा जैसी भी हो, जिस प्रकार से भी बोली जाय, उसका एक मात्र उद्देश्य विचारों के प्रकटीकरण से होता है। मनुष्य अपनी वाक इन्द्रियों के द्वारा अपनी भाषा का प्रयोग करता है। व्यक्ति अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं और अपने विचारों को भाषा के माध्यम से ही सम्प्रेषित करते हैं। प्रस्तुत इकाई में संज्ञानात्मक विकास तथा भाषा विकास का विस्तृत अध्ययन किया गया है

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

(i) संज्ञानात्मक विकास के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।

(ii) संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्तों का वर्णन कर सकेंगे।

(iii) संज्ञानात्मक विकास के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(iv) संज्ञानात्मक विकास के शैक्षिक निहितार्थ की व्याख्या कर सकेंगे।

(v) भाषा के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।

(vi) भाषा विकास के क्रम से अवगत हो सकेंगे।

(vii) शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में होने वाले भाषा विकास के क्रमिक परिवर्तनों को समझ सकेंगे।

(viii) भाषा विकास को प्रभावित करने वाले कारकों के सम्बन्ध में अपने विचार अभिव्यक्त कर सकेंगे।

5.3 संज्ञानात्मक विकास का अर्थ एवं परिभाषाएँ

संज्ञानात्मक विकास से आशय संज्ञानात्मक विकास की योग्यताओं से है। संज्ञानात्मक विकास व्यक्ति के विकास का महत्वपूर्ण पक्ष है। संज्ञान का अर्थ है 'जानना' या 'समझना'। संज्ञान में संवेदन, प्रत्यक्षण, प्रतिमा, धारणा, प्रत्याहान, समस्या–समाधान, चिन्तन, तर्क इत्यादि मानसिक क्रियाएँ पायी जाती है।

रेबर के अनुसार – ''अधिकांश मनोवैज्ञानिकों के अनुसार संज्ञान का अर्थ ऐसे मानसिक व्यवहारों से है, जिनका स्वरूप अमूर्त होता है और जिनमें प्रतीकीकरण, सूझ, प्रत्याशा, जटिल नियम, उपयोग, प्रतिमा, विश्वास, अभिप्राय, समस्या–समाधान तथा अन्य शामिल होते हैं।''

संज्ञानात्मक विकास के अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जाता है कि बालक किस प्रकार तथ्यों को ग्रहण कर उस पर प्रतिक्रिया देता है। संज्ञानात्मक **fodkl d {ks= e जीन पियाजे** के सिद्धान्त का अतुलनीय योगदान माना जाता

है। जीन पियाजे ने बालकों के चिन्तन तथा तर्क शक्ति के विकास के जैविक तथा संरचनात्मक कारकों पर प्रकाश डालकर संज्ञानात्क विकास की विस्तृत विवेचना की है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

1. संज्ञान में कौन सी मानसिक क्रियाएँ पायी जाती है?

____

____

____

5.4 पियाजे के संज्ञानात्मक सिद्धान्त में प्रयुक्त महत्वपूर्ण सम्प्रत्यय

पियाजे पियाजे पियाजे पियाजे पियाजे ने अपने सिद्धान्त में कई सम्प्रत्ययों का प्रयोग किया है। कुछ प्रमुख सम्प्रत्ययों का विवेचन निम्नवत किया जा रहा है–

1. **अनुकूलनः–** बालकों के अन्दर वातावरण के साथ समायोजन करने की जन्मजात प्रवृत्ति पायी जाती है। इसे पियाजे ने अनुकूलन की संज्ञा दी। पियाजे ने इसे दो उपसमूहों में वर्गीकृत किया है –

(i) आत्मसात्करण

(ii) समायोजन

2. **साम्यधारण :–** इस प्रक्रिया के अन्तर्गत बालक आत्मसात्करण तथा समायोजन के बीच एक प्रकार का संतुलन स्थापित करता है। साम्यधारण प्रक्रिया को आत्मनियंत्रण की प्रक्रिया भी कहते हैं। पियाजे महोदय के अनुसार कभी–कभी बालक के समक्ष ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती है जिसका अनुभव उसे पूर्व में प्राप्त नहीं हुआ होता है। बालक के अन्दर से संज्ञानात्मक असंतुलन को समाप्त करने के लिए बालक आत्मसात्करण एवं समायोजन की प्रक्रिया को प्रारम्भ करता है।

3. **संरक्षण :–** संरक्षण से आशय वातावरण में परिवर्तन तथा स्थिरता दोनों की पहचान करना तथा उसे समझने से है। वस्तु के रंग–रूप में परिवर्तन से उसके तत्व में परिवर्तन नहीं होता है।

4. **संज्ञानात्मक संरचना :–** पियाजे के अनुसार बालक के मानसिक क्षमताओं के सेट को संज्ञानात्मक संरचना के नाम से इंगित किया जाता है। संज्ञानात्मक संरचना भिन्न–भिन्न पायी जाती है।

5. **मानसिक प्रचालन :–** मानसिक प्रचालन का अर्थ संज्ञानात्मक संरचना की सक्रियता से सम्बन्धित होता है। जब बालक किसी समस्या के समाधान के लिए चिन्तन करता है तब ऐसी स्थिति में मानसिक प्रचालन समस्या के समाधान के लिए सक्रिय हो जाती है।

6. **स्कीम्स :–** स्कीम्स मानसिक संक्रियाओं का अभिव्यक्त रूप है। व्यवहारों के संगठित पैटर्न जिसे आसानी से दोहराया जा सकता है स्कीम्स के नाम से जाना जाता है।

7. **स्कीमा :–** पियाजे के अनुसार स्कीमा शब्द से आशय एक ऐसी मानसिक संरचना से होता है जिसका सामान्यीकरण किया जा सकता है। अतः हम कह सकते है कि स्कीमा मानसिक प्रचालन तथा संज्ञानात्मक संरचना से सम्बन्धित प्रत्यय है।

8. **विकेन्द्रण :–** इस प्रकार के सम्प्रत्यय का सम्बन्ध यथार्थ चिन्तन से होता है। विकेन्द्रण से आशय यह कि कोई बालक किसी समस्या के सम्बन्ध में विचार–विमर्श करता है। प्रारम्भिक अवस्था में बालक आत्मकेन्द्रण ढंग से विचार करता है और उम्र बढ़ने के साथ ही वह बाद में विकेन्द्रण ढंग से चिन्तन करने लगता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

2. पियाजे के सिद्धान्त में प्रयुक्त सम्प्रत्ययों के नाम लिखिए।

5.5 पियाजे के संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त

जिन पियाजे ने बालकों के संज्ञानात्मक विकास के अध्ययन के लिए चार अवस्था अथवा सिद्धान्त का अविष्कार किया। इन चारों सिद्धान्तों का वर्णन निम्नवत किया जा रहा है –

1. **संवेदी पेशीय अवस्था :–** किसी भी बालक के संज्ञानात्मक विकास की यह पहली अवस्था है जो जन्म से लेकर दो वर्ष की आयु तक चलती रहती है। इस अवस्था के बालकों के अन्दर वस्तुओं को पकड़ने, किसी भी चीज को मुँह में डालने, किसी भी वस्तु को इधर–उधर हटाने जैसी क्रियाओं को करने लगता है। इस अवस्था में बालक के अन्दर वस्तु में विभेद करने की क्षमता विकसित होने लगती है। इस अवस्था में बालक के सामने यदि कोई वस्तु रखी जाय और फिर उसे उसके सामने से हटा लिया

जाय तब ऐसी परिथिति में भी उस वस्तु का सम्प्रत्यय बालक के मस्तिष्क में बने रहने के कारण, उस वस्तु की प्रतिमा उसके मस्तिष्क में बनी रहती है। बच्चे इस उम्र में ध्वनि और प्रकाश की रोशनी पड़ने पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने लगते हैं।

2. पूर्व संक्रियात्मक अवस्था :– संज्ञानात्मक विकास की यह दूसरी अवस्था है। यह अवस्था 2 से 7 साल तक चलती रहती है। इस अवस्था को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है–

1. पूर्व प्रत्ययात्मक काल 2. अन्तर्दर्शी अवधि

1. पूर्व प्रत्ययात्मक काल :– यह अवस्था बच्चों में दो से चार साल तक चलती रहती है। इस अवस्था तक बालकों के अन्दर सूचकता विकसित हो जाती है। जीन पियाजे ने दो प्रकार की सूचकता का वर्णन अपने अध्ययन में किया है – (i) संकेत (ii) चिन्ह

पियाजे ने संकेत तथा चिन्ह को पूर्व संक्रियात्मक चिन्तन के महत्वपूर्ण साधन की संज्ञा दी है।

जब कोई बालक अपने खिलौने को देखता एवं उसके आवाज को बराबर सुनता है तब ऐसी स्थिति में यदि बालक के सामने खिलौना प्रस्तुत न किया जाय और केवल उस खिलौने के आवाज को बजा दिया जाय तो बालक खिलौने की आवाज से ही अपने अन्दर खिलौने की आकृति को महसूस करने लगता है अर्थात खिलौने का प्रतिबिम्ब उसके मस्तिष्क में बन जाता है। इस अवस्था में बालक एक या दो शब्द बोलना सीख लेता है। भाषा, चिन्ह का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है।

2. अन्तर्दर्शी अवधि :– यह अवस्था 4 से 7 साल तक चलती रहती है। इस अवधि के बालकों के अन्दर चिन्तन एवं तर्क करने की क्षमता पहले से अधिक सशक्त होती है। मानसिक क्रियाओं के कारण बालकों में जोड़, घटाना, गुणा एवं भाग करने की क्षमता का विकास इस अवस्था में हो जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी शीशे के गिलास को पानी से भर दिया जाय एवं उतना ही पानी कटोरे में भर कर रखा जाय तो शीशे के गिलास और कटोरे के आकार–प्रकार में अन्तर न कर पाने के कारण बालक से पूछा जाय कि पानी की मात्रा किसमें अधिक है तब ऐसी स्थिति में बालक कटोरे में पानी की मात्रा अधिक है ऐसा सम्बोधित करेगा। इस अवस्था में बालक कारण और परिणाम में विभेद न कर पाने के कारण ऐसा उत्तर देता है।

3. मूर्त संक्रियात्मक अवस्था :– यह अवस्था 7 से 12 साल की आयु तक चलती रहती है। इस आयु वर्ग के बालकों में तार्किक चिन्तन की योग्यता का विकास तीव्र गति से होता है।

बालकों में आयु के अनुसार होने वाले सम्प्रत्यय के विकास को निम्नानुसार समझा जा सकता है –

(i) 6 साल के बालकों में – संख्या के सम्प्रत्यय का विकास

(ii) 7 साल के बालकों में – मात्रा के सम्प्रत्यय का विकास

(iii) 9 साल के बालकों में – वजन के सम्प्रत्यय का विकास

इस उम्र के बालकों में वर्गीकरण करने तथा आकार–प्रकार में अन्तर करने की योग्यता का विकास हो जाता है। इस उम्र के बालकों में आत्म केन्द्रित चिन्तन करने की प्रवृत्ति का विकास कम हो जाता है और वे वाह्य वस्तुओं को महत्व देने लगते हैं। इस अवस्था में बालक स्थूल समस्या का समाधान तार्किक संक्रियाओं के द्वारा करने में सक्षम हो जाते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

3. अन्तर्दर्शी अवस्था बालकों में किस आयु तक पायी जाती है?

____

____

____

4. संख्या के सम्प्रत्यय का विकास बालकों में किस उम्र में पाया जाता है?

____

____

____

1. **औपचारिक संक्रिया की अवस्था :–** यह अवस्था 11 वर्श से 15 वर्ष तक चलती रहती है। इस अवस्था में चिन्तन अधिक प्रभावशाली होते हैं। अमूर्त तथ्यों के सम्बन्ध में बालक के अन्दर तार्किक चिन्तन करने की क्षमता का विकास हो जाता है। इस अवस्था में बालक शब्दों एवं संकेतों के आधार पर तार्किक चिन्तन करता है। इस अवस्था के बालकों के अन्दर निम्न क्षमताओं का विकास हो जाता है –

(i) परिकल्पना बनाने की क्षमता का विकास।

(ii) व्याख्या करने की क्षमता का विकास।

(iii) निष्कर्ष निकालने की क्षमता का विकास।

बालक तर्क की दोनों विधियों आगमन एवं निगमन के प्रयोग की योग्यता का विकास कर लेता है। इस अवस्था में बालक का चिन्तन पूर्णतया क्रमबद्ध होता

है। किसी भी समस्या का तार्किक समाधान बालक क्रमबद्ध ढंग से खोज लेता है।

5.6 ब्रूनर के संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त

संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन जे. एस. ब्रूनर द्वारा सन् 1964, 1966 में किया गया। पियाजे द्वारा प्रतिपादित ज्ञानात्मक सिद्धान्त के विकल्प के रूप में ब्रूनर के सिद्धान्त को मान्यता मिली है। ब्रुनर ने अपने सिद्धान्त में ज्ञानात्मक व्यवहार का गहनता के साथ अध्ययन करके ज्ञानात्मक विकास की विशेषताओं को वर्गीकृत किया है। ब्रुनर के अनुसार शिशु अपनी प्रतिक्रियाओं को मानसिक रूप से तीन प्रकार से अभिव्यक्त करता है।

(i) सक्रियता की अवस्था (ii) दृश्य प्रतिमा की अवस्था (iii) सांकेतिक अवस्था

1. **सक्रियता की अवस्था :–** इस अवस्था में बालक अपने पर्यावरण को एवं उसमें पाये जाने वाले वस्तुओं को अपनी गतिविधियों के द्वारा समझने एवं पहचानने का प्रयत्न करता है। इस अवस्था में बालकों की प्रतिक्रिया पर्यावरणीय वस्तुओं के आधार पर होती है। इस अवस्था में प्रतिमानों एवं भाषा का ज्ञानात्मक विकास में योगदान नहीं के बराबर होता है। बालक संवेदना के आधार पर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। इस अवस्था में बालक वस्तुओं को छूकर, पकड़कर, चखकर, काटकर, हाँथ–पाँव चलाकर समझने का प्रयास करता है।

2. **दृश्य प्रतिमा की अवस्था :–** इस अवस्था में मस्तिष्क में बने प्रतिमानों के आधार पर सूचनाएँ बालक तक सम्प्रेषित होती है। बालक प्रतिमा या छाया देखकर अपने गर्दन या आँखों को इधर–उधर घुमाने लगता है। बच्चा विभिन्न माध्यमों से उत्पन्न चमक, विभिन्न माध्यमों से उत्पन्न शोर, गति इत्यादि से प्रभावित होकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। इस अवस्था में क्रियायुक्त अवधारणा का विकास होता है। ब्रूनर की दृश्य प्रतिमा अवस्था जीन पियाजे के संक्रियात्मक अवस्था के समान होती है।

3. **सांकेतिक अवस्था:–** इस अवस्था का प्रारम्भ बिना पहचान वाले जन्मजात प्रतीकात्मक क्रिया से प्रारम्भ होता है जो कि बाद में विभिन्न व्यवस्थाओं में परिवर्तित हो जाता है। प्रतिकात्मक क्रिया विधि, क्रिया और अवधारणा के प्रतिनिधित्व को दर्शाती है इस अवस्था में बालक की क्रियात्मकता और प्रत्यक्ष रूप से समझने की क्षमता का प्रतिस्थापन संकेत के माध्यम से प्रभावी होता है। प्रयोगों के आधार पर मनोवैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष दिया है कि संकेतो के आधार पर जब बालक कोई बात सीखता या समझता है तो उसकी ज्ञानात्मक कार्य क्षमता का तीव्रता से विकास होता है। संकेत के माध्यम से सूचनाओं तथा

ज्ञान को याद करना तथा दूसरों तक सम्प्रेषित करना बहुत सरल हो जाता है। संकेतों के द्वारा सूचनाओं को एकत्रित करके तथा विश्लेषण करके व्यक्ति पहले की सीखी हुयी बातों को अभिव्यक्त करने में तथा परिकल्पनाओं को बनाने में सक्षम हो जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी:– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

5. संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन जे. एस. ब्रूनर द्वारा किस सन् में किया गया।

____

____

____

6. ब्रूनर के अनुसार शिशु द्वारा अभिव्यक्ति की जाने वाली तीनों अवस्थाओं के नाम लिखिए।

____

____

____

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि बालक तीनों अवस्थाओं में ज्ञानात्मक चिन्तन ही करता है। इसको निम्नानुसार भी समझा जा सकता है –

बालक के अन्दर चिन्तन का विकास तीन स्तर से होता है। बालक के अन्दर क्रियात्मक, दृश्य प्रतिमा तथा संकेतों का प्रयोग करके अपने चिन्तन के स्तर को ऊँचा उठा सकते हैं। अर्थात् तीनों परिस्थितियों में बालक के अन्दर चिन्तन का समुचित विकास होता है। उपरोक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कह सकते हैं कि ज्ञानात्मक विकास के क्रमिक स्तर पर उम्र और अनुभव के बढ़ने के साथ संकेतात्मक प्रणाली अधिक सशक्त एवं उपयोगी हो जाती है।

5.7 भाषा विकास का अर्थ

बौद्धिक विकास की सर्वोत्तम कड़ी भाषा विकास होती है। बालक सर्वप्रथम बोलना परिवार से प्रारम्भ करता है। नवजात शिशु को अपनी बातों को लोगों तक भाषा के माध्यम से न पहुँचा पाने के कारण वह अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं को सम्प्रेषित नहीं कर पाता है। नवजात की भाषायीय समस्या समय के साथ–साथ कम होने लगती है। व्यक्ति में भाषा विकास से आशय अपने विचारों, भावों, इच्छाओं, आवश्यकताओं को दूसरे तक सम्प्रेषित करना तथा उनके द्वारा व्यक्त की गई प्रतिक्रियाओं को ग्रहण करने से है।

कार्ल सी गैरिसन के अनुसार "स्कूल जाने से पूर्व बालकों में भाषा ज्ञान का विकास उनके बौद्धिक विकास की सबसे अच्छी कसौटी है।

"भाषा का विकास भी विकास के अन्य पहलुओं के लाक्षणिक सिद्धान्तों के अनुसार होता है। यह विकास परिपक्वता तथा अधिगम दोनों के परिणाम स्वरूप होती है। इसके लिए नयी अनुक्रियाएँ सीखनी होती है और पहले से सीखी हुई अनुक्रियाओं का परिष्कार भी करना होता है।''

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. भाषा विकास के सम्बन्ध कार्ल सी गैरिसन के विचार को लिखिए।

____

____

____

5.8 शैशवावस्था में भाषा विकास

शैशवावस्था मानव के विकास की अवस्थाओं में सबसे कम अवधि की अवस्था है। इस अवस्था में सीखने और समझने की गति अत्यधिक होती है। शिशु अपने प्रारम्भिक चार–पाँच वर्षों की आयु में ही अपना उत्कृष्ट विकास करते हैं। भाषा को क्रमबद्ध रूप से निम्नानुसार वर्णित कर सकते हैं।

रूदनः– रूदन द्वारा बालक अपनी आवश्यकताओं की सूचना दूसरों को अर्थात अपने माता–पिता को देता है। रूदन शिशुओं के अन्दर स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। प्रारम्भ के क्षणों में रूदन संकटकारी होता है। इस प्रकार शिशुओं द्वारा व्यक्त की गई क्रियाएँ अनियमित तथा अनियत्रित होती है। रूदन बालक की पहली भाषा होती है इसके माध्यम से वे पीड़ा, थकान तथा भूख लगने इत्यादि की भावना को दूसरों तक सम्प्रेषित करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. बालक की पहली भाषा क्या होती है?

____

____

____

1. **बलबलाना**:– रूदन के अन्तर्गत शिशुओं की स्पष्ट आवाज सुनाई देती है। यह ध्वनि शिशुओं में पाँचवे महीने के पश्चात स्पष्ट होने लगती है। बलबलाने की क्रिया शिशुओं के अन्दर एक वर्ष की आयु से पायी जाती है। शिशुओं के बलबलाने के कारण प्रथम वर्ष की आयु में स्वर सुनाई देने लगते हैं। इस आयु वर्ग तक के शिशुओं में दाँत निकल आते हैं। एक वर्ष के शिशुओं की भाषा को समझना कठिन होता है केवल अनुमान से ही उसे समझा जा सकता है।

2. **इशारे से सम्बोधन**:– हाव–भाव व इशारे से शिशु अपनी बातों को दूसरे को समझानें का प्रयास करता है। इस अवस्था में शिशु गर्दन को हिला कर हाँ या ना में अपने उत्तर को देने की कोशिश करता है।

3. **बोलने की प्रवृत्ति**:– शैशवावस्था में भाषा विकास की यह चौथी अवस्था है। बोलने की प्रवृत्ति का विकास शिशुओं में एक से डेढ़ वर्ष के बीच प्रारम्भ होता है। प्रारम्भिक अवस्था में बालक अनुपयुक्त शब्दों को बोलता है। परन्तु बाद में साहचर्य के नियमों के कारण अनुपयुक्त शब्द भी उपयुक्त हो जाते हैं।

4. **भाषा ध्वनि की पहचान**:– शैशवावस्था में शिशु शब्दों को सीखने समझने से पहले भाषा की ध्वनियों में अन्तर करना सीख लेते हैं। वे आहट इत्यादि से बातों को पहचानने का प्रयास करते हैं।

5. **प्रथम शब्द का उच्चारण**:– 8–.10 माह की अवस्था में शिशु पहला शब्द बोलने का प्रयास करता है। शिशु इस अवस्था में सबसे पहले अपने परिवार के सदस्यों को शब्दों के माध्यम से बुलाना प्रारम्भ करता है। जैसे – पापा, ममा, दादा इत्यादि।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. शिशु पहला शब्द बोलने का प्रयास कब करता है?

____

____

____

1. **शब्द युग्म का उच्चारण**:– 18–24 माह के शिशु शब्दों के साहचर्य के द्वारा शब्द युग्म शब्दों को बोलना प्रारम्भ कर देते हैं। शब्दों के साथ शिशु अपने सिर इत्यादि की मुद्राओं के माध्यम से भी बोलते हैं।

5.9 बाल्यावस्था में भाषा का विकास

विकास की दूसरी अवस्था बाल्यावस्था है। बाल्यावस्था में बालक व्यक्तिगत तथा सामाजिक व्यवहारों को लोगों के सम्पर्क में रहकर उनके विचारों को सुनने के

माध्यम से सीखता है। बालक की सही शिक्षा इसी अवस्था में प्रारम्भ होती है। बाल्यावस्था में भाषा सीखने की गति अत्यधिक होती है। बालकों के शब्द भण्डार में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। बालकों की अपेक्षा बालिकाओं में भाषा विकास दर तीव्र होती है। बालिकाएँ, बालकों की अपेक्षा अपनी बात को अधिक प्रभावपूर्ण ढ़ंग से व्यक्त करती हैं।

सीशोर ने – 10 से 14 वर्ष के 117 बालकों पर चित्रों की सहायता से प्रयोग किया। सीशोर ने प्राप्त परिणामों को सारणीबद्ध किया है जो निम्नवत् है।

सीशोर के अनुसार भाषा विकास

आयु वर्ष में	शब्द
4	5,600
5	9,600
6	14,700
7	21,200
8	26,300
10	34,300

उपरोक्त सारणी को देखने से स्पष्ट है कि बालक के एक वाक्य में कई शब्द होते हैं। इस अवस्था में बालक बोलने में मिश्रित वाक्यों का प्रयोग करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. सीशोर के अनुसार 8 वर्ष की आयु में बालक कितने शब्दों को सीख लेता है।

____

____

____

5.10 किशोरावस्था में भाषा विकास

किशोरावस्था में तीव्रता के साथ शारीरिक परिवर्तन होने से ऐसे संवेग उत्पन्न होते हैं जो भाषा विकास को प्रभावित करते हैं। किशोरावस्था में बालकों को कहानियाँ व उपन्यास पढ़ने का शौक होता है। इस प्रकार के पुस्तकों को पढ़ने से बालक में कल्पना शक्ति का विकास होता है। इस अवस्था में बालक कवि, कहानीकार, नाटककार, अभिनेता बनकर तथा चित्रों इत्यादि के माध्यम से अपनी भावनाओं का प्रकटीकरण करते हैं।

किशोरावस्था में प्रायः बालक अपनी प्रेयसी को प्रेम–पत्र इत्यादि लिखते हैं और इस पत्र के अन्दर अच्छे–अच्छे शब्दों का चयन करते हैं। इस पत्र की भाषा में भावुकता का पुट अधिक होता है। शैशवावस्था से किशोरावस्था तक के सफर में बालक वातावरण के सम्पर्क में आकर कई नवीन वस्तुओं को देखता, समझता और उसे क्रियान्वित करने के लिए प्रयत्नशील होता है। किशोरावस्था में बालक अपनी रुचि, अभिरुचि के अनुसार कार्य करने के परिणामस्वरूप उनके अन्दर भाषा का विकास तीव्रगति से होता है। किशोरों के पास शब्द कोष का भण्डार होता है। किशोर भाषा का प्रदर्शन बोलने के माध्यम से एवं लिख कर करता है। किशोरावस्था में बालक कभी–कभी अपने सहपाठियों के बीच कोड भाषा के माध्यम से भी बात–चीत करते हैं। ये कोड प्रतीकात्मक होते हैं। भाषा ही बालकों में सम्प्रत्यय के विकास के लिए उत्तरदायी है। सम्प्रत्यय विकास के द्वारा बालक भावी जीवन की योजनाएँ बनाता है। चिन्तन का भी प्रभाव भाषा के विकास पर पड़ता है। तर्क एवं चिन्तन आदि के द्वारा बालक विचार–विमर्श करके भाषा के विकास को गति देता है। आदत एवं बुद्धि का भी प्रभाव भाषा के विकास में सहायक है और इनके प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। बालक समस्यात्मक स्थिति उत्पन्न होने पर समस्या को सर्वप्रथम समझता है फिर उसके समाधान के लिए समुचित भाषा का प्रयोग करता है।

5.11 भाषा विकास को प्रभावित करने वाले कारक

भाषा विकास को प्रभावित करने वाले कारक निम्नवत् हैं –

1. भाषा का विकास बुद्धि पर निर्भर करता है। भाषा की दक्षता उन बालकों में अधिक पायी जाती हैं जिनकी बुद्धि का विकास अच्छा होता है। जिन बालकों की IQ कम होती है, उनके अन्दर भाषा का विकास कम होता है। जब कि जिन बालकों की IQ अधिक होती है, वे भाषा का प्रयोग अच्छे ढ़ंग से करते हैं।
2. मस्तिष्क की संरचना एवं कार्यशैली भी भाषा विकास को प्रभावित करती है। भाषा को बोलने, समझने, लिखने तथा कोड के माध्यम से अभिव्यक्त करने के लिए स्नायुतन्त्र तथा वाकतन्त्र की आवश्यकता होती है।
3. भाषा के विकास पर वातावरण का भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है। बालक जिस समाज, जिस स्थान पर रहता है वहाँ के नागरिकों के आचरण, विचारों एवं व्यवहारों का सीधा प्रभाव बालक के भाषा विकास को प्रभावित करते हैं। निम्न श्रेणी के परिवार में या संसाधनविहीन परिवार के बालकों में भाषा विकास कम होता है क्योंकि उन्हें लोगों के मध्य आने–जाने का अवसर कम मिलता है। परिवार में सदस्योंा की कम संख्या भी बालकों के भाषा विकास को प्रभावित करती है।

4. स्कूल और अध्यापक बालकों के भाषा विकास को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। स्कूल ही बालक के सर्वोत्तम विकास का सर्वश्रेष्ठ स्थल है। बालक यहाँ शिक्षकों, मित्रों, अतिथियों के मध्य उठ बैठकर तथा कक्षा–शिक्षण के माध्यम से अपने भाषा के विकास को अधिक सुदृढ़ करता है। चूँकि विद्यालय में पठन–पाठन होता है शिक्षार्थी की हर गतिविधियों पर शिक्षक की नजर होती है। यदि बालक भाषा सम्बन्धी त्रुटि करता है तो शिक्षक तत्काल उसे सही बात की जानकारी उपलब्ध कराते हैं।

5. वकालत, व्यापार एवं अध्यापन भाषा विकास के लिए अधिक उपयुक्त व्यवसाय है। इस प्रकार के व्यवसाय के चयन के माध्यम से भी भाषा को विकसित किया जा सकता है।

6. कुछ परिवार ऐसे होते हैं जो बालकों को मित्रों के साथ जाने से रोकते हैं। यदि बालक मित्रों के संगत में जायेंगें तो विचारों का आदान–प्रदान होगा और बालक एक दूसरे से लाभान्वित होकर भाषा को विकसित कर सकते हैं।

7. कभी–कभी व्यक्ति बात–चीत करने में एक से अधिक भाषा का प्रयोग करता है। एक से अधिक भाषा का प्रयोग करने से भाषा का उचित विकास नहीं होता। अतः हम कह सकते हैं एक से अधिक भाषा का प्रयोग करने वाले बालकों की अपेक्षा एक भाषा का प्रयोग करने वाले बालकों में भाषा का विकास अधिक होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. भाषा विकास को प्रभावित करने वाले एक कारक को लिखिए।

____

____

____

5.12 सारांश

संज्ञान का अर्थ है समझना व जानना। संज्ञान में संवेदन, प्रत्यक्षण, प्रतिमा,धारणा, चिन्तन, तर्क एवं समस्या–समाधान जैसी मानसिक क्रियाएँ पायी जाती है। पियाजे ने अपने सिद्धान्त में अनुकूलन, साम्यधारण, संरक्षण, संज्ञानात्मक, संरचना, मानसिक प्रचालन, स्कीम्स, स्कीमा, विकेन्द्रण तथा संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त के अन्तर्गत संवेदी पेशीय अवस्था, पूर्व सक्रियात्मक अवस्था, मूर्त सक्रियात्मक अवस्था तथा औपचारिक

संक्रिया की अवस्था के विषय में चर्चा की गई है। इसके साथ ही ब्रुनर के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त के अन्तर्गत सक्रियता की अवस्था, दृश्य प्रतिमा की अवस्था तथा सांकेतिक अवस्था का भी विवेचन किया गया है। इसके साथ ही भाषा के माध्यम से भी विचारों का आदान–प्रदान किया जाता है। समाज में जीवन–यापन करने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है। शैशवावस्था से लेकर किशोरावस्था तद्पश्चात प्रौढ़ावस्था तक भाषा विकास का माध्यम अलग–अलग होता है। एक नवजात शिशु केवल कुछ ध्वनियों के माध्यम से अपने विचारों की अभिव्यक्ति करता है। जब कि एक किशोर का भाषा पर नियंत्रण एवं अधिकार होता है। बालक का सामाजिक स्वरूप जैसे–जैसे बढ़ता जाता है वैसे–वैसे बालक का भाषा विकास उन्नत एवं सशक्त होता जाता है। भाषा विकास को बुद्धि, जैवकीय कारक, वातावरणीय कारक, सामाजिक–आर्थिक स्थिति, स्कूल एवं व्यवसाय इत्यादि प्रभावित करते हैं। विद्यालय में अध्यापक को बालकों के समक्ष संयमित भाषा का प्रयोग कर उन्हें भाषा के विकास हेतु अभिप्रेरित करना चाहिए। साथ ही शिक्षक को इस प्रकार की सहायक शिक्षण सामग्री के माध्यम से शिक्षण कार्य करना चाहिए जिससे बालकों के अन्दर उन्नत ढ़ंग से भाषा को विकसित किया जा सकें।

5.13 अभ्यास कार्य

1. संज्ञानात्मक विकास के अर्थ को स्पष्ट करते हुए पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।
2. ब्रुनर के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।
3. पियाजे के सिद्धान्त में प्रयुक्त प्रमुख सम्प्रत्ययों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. भाषा विकास को स्पष्ट कीजिए तथा शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में होने वाले भाषा विकास की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. भाषा विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

5.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. Hurlock, EB. (1981) : Development Psychology, A Life Span Approach Fifth Edition, Mc Graw Hill, New Delhi
2. Santrock, J.W. (2007) : Child Development, Eleventh Education, Mc Graw Hill, New Delhi
3. गुप्ता, एस,पी, एवं गुप्ता अलका (2002) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
4. पाठक, पी.डी. (2010): शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा – 2

5. भटनागर, सुरेश (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ

6. सिंह कर्ण (2011–12) : अधिगमकर्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, गोबिन्द प्रकाशन, लखीमपुर–खीरी।

7. सिंह, ए.के. (1994) : शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन, पटना।

5.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. संवेदन, प्रत्यक्षण, प्रतिमा, धारणा, प्रयाह्वान, समस्या–समाधान, चिन्तन, तर्क आदि मानसिक क्रियाएँ पायी जाती है।

2. अनुकूलन, साम्यधारण, संरक्षण, संज्ञानात्मक संरचना, मानसिक प्रचालन, स्कीम्स, स्कीमा एवं विकेन्द्रण।

3. 4–7 साल।

4. 6 साल के बालकों में।

5. 1964, 1966 में।

6. संक्रियता की अवस्था, दृश्य प्रतिमा की अवस्था एवं सांकेतिक अवस्था।

7. **कार्ल सी गैरिसन** के अनुसार "स्कूल जाने से पूर्व बालकों में भाषा ज्ञान का विकास उनके बौद्धिक विकास की सबसे अच्छी कसौटी है।"

8. रूदन।

9. 8–10 माह की अवस्था में।

10. 26,300 शब्दों को।

11. मस्तिष्क की संरचना एवं कार्यशैली भी भाषा विकास को प्रभावित करती है। भाषा को बोलने, समझने, लिखने तथा कोड के माध्यम से अभिव्यक्त करने के लिए स्नायुतन्त्र तथा वाकतन्त्र की आवश्यकता होती है।

इकाई – 6 सामाजिक एवं नैतिक विकास

इकाई की रूपरेखा –

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 सामाजिक विकास का अर्थ एवं परिभाषाएँ
6.4 शैशवावस्था में सामाजिक विकास
6.5 बाल्यावस्था में सामाजिक विकास
6.6 किशोरावस्था में सामाजिक विकास
6.7 सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक
6.8 नैतिक विकास
6.9 पियाजे का नैतिक विकास का सिद्धान्त
6.10 कोहलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धान्त
6.11 नैतिक विकास की अवस्थाएँ
6.12 नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक
6.13 सारांश
6.14 अभ्यास प्रश्न
6.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें
6.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.1 प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य अपने जीवनकाल की सभी गतिविधियाँ समाज के बीच में रहकर ही पूर्ण करता है। शिशुओं के अन्दर सामाजिकता नहीं के बराबर पायी जाती है लेकिन बालक जैसे–जैसे बड़ा होता है उसके भीतर धीर–धीरे सामाजिकता का विकास होता है। समाज में रहने वाले व्यक्ति को सामाजिक नियमों, मान्यताओं एवं परम्पराओं का पालन करते हुए अपना अच्छा आचरण प्रस्तुत करना होता है। समाज के द्वारा बनाए गये नियमों का पालन करने वाले व्यक्तियों में अच्छे सामाजिक गुण पाये जाते है जबकि समाज के नियमों के विरूद्ध कार्य करने वाला व्यक्ति असामाजिक होता है। जन्म के बाद से ही शिशु का शारीरिक एवं मानसिक विकास होता रहता है। परिवार एवं समाज के मध्य रहने से उसका सामाजीकरण होता है और वह उसके अनुरूप अपने को समायोजित करने के लिए उचित व्यवहार करता है। बालक जिस सामाजिक परिवेश में रहता है वह सर्वप्रथम वहाँ की

परम्पराओं, मान्यताओं, रीति–रिवाजों, बन्धनों, नियमों, इत्यादि को आत्मसात करने में रुचि नही रखता है। परन्तु समय के साथ वह सामाजिक मान्यताओं को अपनें जीवन में आत्मसात करते हुए उनके प्रति आदर व सम्मान प्रकट करता है। बालक सामाजिक नैतिक मानदण्डों को आत्मसात करता है। वह सामाजिक नियमों और बन्धनों को मानते हुए कैसे अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और आवश्यकताओं को नियन्त्रित कर सकता है इसका अध्ययन नैतिक विकास के अन्तर्गत करते हैं। प्रस्तुत इकाई में बालक के सामाजिक एवं नैतिक विकास के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा की गई है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- सामाजिक विकास के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- सामाजिक विकास की विभिन्न अवस्थाओं के सम्बन्ध में विवेचना कर सकेंगे।
- सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों के सम्बन्ध में चर्चा कर सकेंगे।
- सामाजिक विकास के शैक्षिक महत्व की विवेचना कर सकेंगे।
- नैतिक विकास के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों की चर्चा कर सकेंगे।

6.3 सामाजिक विकास का अर्थ एवं परिभाषाएँ

बच्चा जन्म के समय अबोध होता है। बच्चे को प्रकृति में पायी जाने वाली किसी भी वस्तु का कोई ज्ञान नही होता है। नवजात शिशु सामाजिक प्राणी नही होता है। जैसे–जैसे बालक का शारीरिक व मानसिक विकास होता है उसके अन्दर सामाजिकता के गुण विकसित होने लगते है। बालक का सामाजिक विकास उम्र के साथ–साथ बढ़ता रहता है। सामाजिक विकास की प्रक्रिया परिवर्तनशील होती है। समाज के द्वारा बनाये गये नियमों के अनुकूल जब बालक व्यवहार करने लगता है तब उसका सामाजिक विकास उचित ढ़ग से होता है। बालक परिवार, पास–पड़ोस, मित्रों, सामाजिक संस्थाओं और स्वयं के व्यवहार से प्रभावित होकर सामाजिकता का निर्माण करता है तथा उसके साथ ही अपना सामाजिक विकास करता है।

सामाजिक विकास के सन्दर्भ में कुछ विद्वानों का मत निम्नवत् है–

1. **इ.बी. हरलाक के अनुसार–** ''सामाजिक विकास से तात्पर्य सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार करने की योग्यता को प्राप्त करना है।''

"Social development means acquisition of the ability to behave in accordance with social expections."

- E.B. Hurlock

2. सॉरे व टेलफोर्ड के अनुसार– '' सामाजीकरण की प्रक्रिया दूसरे व्यक्तियों के साथ शिशु के प्रथम सम्पर्क से आरम्भ होती है और आजीवन चलती रहती है।''

" The process of socialization begins with the infant's first contact with other people and continues throughout life. **- Sawrey and Telford**

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

1. सामाजिक विकास की परिभाषा लिखिए।

____

____

____

6.4 शैशवावस्था में सामाजिक विकास

शैशवावस्था में शिशु के अन्दर होने वाले सामाजिक विकास का वर्णन निम्नवत है–

1. प्रथम माह में शिशु ध्वनि में अन्तर नहीं कर पाता है कि यह ध्वनि किसकी है। परन्तु शिशु प्रकाश और ध्वनि के प्रति प्रतिक्रिया अवश्य प्रकट करता है। शिशु अवस्था में वह रोने व नेत्रों को घुमाकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।
2. दूसरे महीने में शिशु आवाज को पहचान कर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। जब कोई व्यक्ति शिशु के आगे किसी भी प्रकार कि क्रिया करता है तब शिशु आवाज सुनकर सिर हिला कर या मुस्कुरा कर अपनी प्रतिक्रिया को प्रकट करता है।
3. तीसरे महीने में शिशु अपनी माता को पहचाने लगता है। माँ कि आवाज सुनकर वह प्रतिक्रिया व्यक्त करने लगता है। यदि माँ उसके सामने से ओझल हो जाती है तब वह रोने लगता है और मॉ के सामने आ जाने पर वह रोना बन्द कर देता है।
4. चौथे माह में शिशु किसी के पास आने पर हॅस कर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। अक्सर परिवार के सदस्य शिशु के सामने जाकर उसके साथ खेलते है। खेलने पर शिशु खुश होकर हॅसने लगता है तथा अकेला हो जाने पर जोर–जोर से रोने लगता है।
5. पॉच माह के शिशु के अन्दर प्रेम व क्रोध को समझने की भावना का विकास हो जाता है। जब कोई व्यक्ति शिशु के साथ प्रेम पूर्वक व्यवहार करके खेलता है तब वह हॅसने लगता है। डांटने पर शिशु डर कर सहम जाता है।

6. छठे माह में शिशु परिचित व अपरिचित में विभेद करने लगता है। अपरिचित व्यक्तियों को देखकर वह डर जाता है।

7. नवें महीने में शिशु दूसरे व्यक्तियों के शब्दों उनके व्यवहार तथा उनके द्वारा किए जा रहे कार्यों का अनुकरण करने का प्रयास तेजी से करने लगता है।

8. एक वर्ष का शिशु परिवार के सदस्यों के साथ आपस में प्रतिक्रिया करने लगता है। किसी कार्य को यदि बड़े मना करते है कि यह नहीं करना है तो वह मान जाता है।

9. दो वर्ष का शिशु परिवार के सदस्यों के साथ उनके काम में सहयोग करने लगता है। वह बड़ो को कार्य करते देखता है और उनका अनुसरण करके उनके साथ मिलकर कार्य करने लगता है। इस आदत के विकास के कारण वह परिवार का सक्रिय सदस्य बन जाता है।

10. तीन वर्ष के शिशु के अन्दर अन्य बालकों के साथ खेलने की प्रवृत्ति का विकास होता है। वे अपने खिलौनों का आदान–प्रदान करते है। इस प्रकार उनके अन्दर परस्पर सहयोग की भावना का विकास होता है और इस प्रकार वह दूसरे बच्चों के साथ सामाजिक सम्बन्ध बनाने का प्रयास करता है।

11. पॉच वर्ष की अवस्था में बालक के अन्दर सदाचार एवं नैतिकता के गुणों का विकास माता–पिता के आचरण का अनुकरण करने के कारण विकसित होता है। वह जिस परिवेश में रहता है उनके नियमों, प्रतिमानों को वह आत्मसात करने का प्रयास करता है।

12. छठे वर्ष में शिशु स्कूल जाने लगता है तथा वह स्कूल में औपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है। विद्यालय में शिशु मित्र बनाते हैं। शिशु विभिन्न प्रकार के सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते हैं और वे अपने को परिस्थिति के अनुसार समायोजित करने की क्षमता का विकास करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

1. शैशवावस्था में सामाजिक विकास की एक विशेषता को लिखिए।

6.5 बाल्यावस्था में सामाजिक विकास

बाल्यावस्था में बालक के अन्दर होने वाले सामाजिक विकास का विवरण निम्नवत् है–

1. बाल्यावस्था में बालक और बालिकाएं स्कूल एवं पास–पड़ोस में रहने वाले हम उम्र के बच्चों के साथ मित्रता करते हैं। वे अपने अनुसार अपनी पसन्द, आदत, अभिवृत्ति, विचारों के अनुसार मित्रों का चुनाव करके मित्र बनाते हैं।
2. इस अवस्था में बालक एवं बालिकाएँ किसी टोली या समूह के सदस्य बन जाते हैं। समूह या टोली में रहने के कारण वे एक दूसरे से आकर्षित होकर ही आचरण को प्रदर्शित करते हैं। समूह के द्वारा ही विभिन्न प्रकार के खेलों, परिधानों की पसन्द, उचित एवं अनुचित आदर्शों का निर्धारण करते हैं और उसी के अनुरूप कार्य करते हैं।
3. समूह में रहने के कारण उनके अन्दर सामाजिक गुणों का विकास होता है। समूह में रहने से बालक एवं बालिकाओं में भाई–चारा, सदाचार, विनम्रता, उत्तरदायित्व, सहयोग, सहनशीलता, सद्भावना, आत्मनियन्त्रण, न्यायप्रियता आदि सामाजिक गुणों का विकास होने लगता हैं।
4. इस अवस्था में बालक एवं बालिकाओं की रुचियों में स्पष्ट भिन्नता पायी जाती है। बालक एवं बालिकाएँ अपनी रुचि एवं इच्छानुसार कार्य करना पसन्द करते हैं।
5. इस अवस्था के बालक घर से बाहर समूह में रहना ज्यादा पसन्द करते हैं और उनका व्यवहार विनम्र होता है।
6. इस अवस्था में बालक अपने द्वारा किए गये कार्यों की स्वीकृत पाने तथा प्रशंसा पाने की तीव्र इच्छा रखते हैं।
7. इस अवस्था के बालक एवं बालिकाओं को यदि परिवार, स्कूल, समाज में स्नेह या प्रशंसा की प्राप्ति नहीं होती है तो वे समाज विरोधी कार्यों को करने के लिए गलत मार्ग का अनुसरण कर उदण्ड और अक्रामक हो जाते हैं।
8. इस वर्ग के बालक एवं बालिकाएं रचानात्मक कार्य को पूरा करने के लिए उत्साहित होते हैं और उससे उन्हें आनन्द की अनुभूति होती है। इस अवस्था में बालक घर के बाहर रचनात्मक कार्यों में सहयोग प्रदान कर तथा अपने गुणों का प्रदर्शन कर प्रशंसा प्राप्त करना चाहते हैं।

उपरोक्त विशेषताओं के विवेचन से स्पष्ट है कि इस अवस्था में बालक एवं बालिकाओं का सामाजिक दायरा अत्यधिक विस्तृत हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप उनके सामाजिकता के विस्तार का क्षेत्र बढ़ जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

1. बाल्यवस्था में सामाजिक विकास की एक विशेषता को लिखिए।

____

____

____

6.6 किशोरावस्था में सामाजिक विकास

किशोरावस्था में बालक एवं बालिकाओं का सामाजिक क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो जाता है। किशोरावस्था में बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक परिवर्तनो के साथ–साथ उनके अन्दर परिवारिक वातावरण एवं सामाजिक वातावरण के प्रभावों के कारण सामाजिक विकास की गति तीव्र होती है। बालक एवं बालिकाऍ इस अवस्था में सभी कार्यो को अपनी इच्छा एवं आवश्यकतानुसार पूर्ण करने के लिए सामाजिक वातावरण में अपने को समायोजित करते है। किशोरावस्था में बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक विकास के विशेषताओं का वर्णन निम्नवत् है–

1. मित्र बनाने की प्रवृत्ति का विकास

इस अवस्था के बालक एवं बालिकाओं के अन्दर मित्रता करने की भावना का विकास अत्यन्त तीव्र गति से होता है। प्रारम्भिक अवस्था में वे समलिंगीय मित्र बनाते है परन्तु बाद में वे विषमलिंगीय मित्र को बनाने में रूचि रखते हैं। बालक और बालिकाओं का आकर्षण एक–दूसरे के प्रति बढ़ने लगता है। वे एक दूसरे को आकर्षित करने के लिए अच्छे वस्त्र पहनते है और सज–संवर कर सामने आते है। इस उम्र में किशोरों के अन्दर एक दूसरे से मिलने की आतुरता बढ़ जाती है।

2. समूहों को निर्मित करना

इस उम्र के बालक एवं बालिकाओं की प्रवृत्ति समूह बनाकर रहने की होती है। ये अपने सभी कार्यो को समूह में रहकर ही करना पसन्द करते हैं। समूहों में रहने का उद्देश्य एक साथ मिलकर मनोरंजन करने से हैं। ये पिकनिक, नाटक, नृत्य,

संगीत, इत्यादि गतिविधियों में प्रतिभाग करने के लिए समूह का निर्माण करते हैं। लिंग के अनुसार समूह प्रायः अलग–अलग होते हैं।

3. समूह के प्रति लगाव

इस उम्र के बालक एवं बालिकाओं के अन्दर अपने समूह के प्रति एक प्रकार का अन्धा समर्पण होता है। वे एक दूसरे की भावनाओं का सम्मान करते हुए किसी भी कार्य को एक–दूसरों की सहमति से पूर्ण करते हैं। इसके कारण समूह के सभी सदस्य समूह द्वारा स्वीकृत परिधान, व्यवहार एवं आचरण को आदर्श मानते हुए उसे आत्मसात कर लेते है।

4. सामाजिक गुणों को विकसित करना

इस आयु के बालक एवं बालिकाओं में समूह में रहने के कारण सामाजिक गुणों का विकास तीव्र गति से होता है। समूह के सदस्य होने के कारण इनके अन्दर नेतृत्व, सहानुभूति, सद्भावना, एवं आत्मीयता इत्यादि सामाजिक गुणों का विकास बालको के अन्दर विकसित होता है। इन गुणों के कारण उनके अन्दर रूचियॉ एवं आदत विकसित होती हैं। ये सभी गुण बालक एवं बालिकाओं को आदर्श नागरिक बनाने के लिए परम आवश्यक है।

5. सामाजिक परिपक्वन की भावना का विकास

इस उम्र के बालक एवं बालिकाऍ अपने को वयस्क व्यक्ति समझने लगते हैं। वयस्क व्यक्ति के समान ही आचरण एवं व्यवहार करने लगते हैं। वे ऐसा व्यवहार प्रस्तुत करना चाहते हैं जिससे उन्हें सामजिक मान्यता मिले और वे इसके साथ ही अपेक्षा करते हैं कि समाज में उन्हें उत्कृष्ट स्थान प्राप्त हो। वे अपने कार्य एवं व्यवहार के कारण सम्मान पाने की कामना करते हैं।

6. विद्रोही प्रवृत्ति का विकास

इस अवस्था के बालकों में स्वतन्त्रता के साथ जीवन–यापन करने की इच्छा होती है। माता–पिता एवं अन्य सगे–सम्बन्धियों द्वारा उन्हें टीका–टिप्पणी पसन्द नहीं आती है। बात–बात पर किसी कार्य को करने से मना करना कि आप को ऐसा नहीं करना है, वहाँ नहीं जाना है, उसके साथ नहीं रहना है इत्यादि के कारण उनके अन्दर विद्रोह की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। अपने कार्य की स्वतन्त्रता में खलल उनको पसन्द नहीं आता जिसके कारण वे आक्रामक एवं विद्रोही होकर सही–गलत में अन्तर किए बिना गलत मार्ग का अनुसरण कर लेते हैं।

7. भविष्य की चिन्ता

इस अवस्था के बालक एवं बालिकाओं के अन्दर व्यवसाय चयन की चिन्ता होती है। वे ऐसा व्यवसाय चाहते हैं जिसमें धन, मान–सम्मान, पद एवं प्रतिष्ठा हो यदि इनकों इच्छानुकूल व्यवसाय मिल जाता है तो उनका सामाजिक विकास अच्छा होता है जब कि इसके विपरीत असफलता प्राप्त होने पर उनका सामाजिक विकास प्रभावित होता है।

उपरोक्त के आलोक में हम कह सकते हैं कि किशोरावस्था में सामाजिक विकास तीव्र गति से होता है। सामाजिक विकास के कारण बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन परिलक्षित होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

1. किशोरावस्था में सामाजिक विकास की एक विशेषता को लिखिए।

____

____

____

6.7 सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक निम्नवत् है–

1. **आनुवंशिकता :–** बालक एवं बालिकाओं का सामाजिक विकास वंशानुक्रम के द्वारा प्रभावित होता है। शारीरिक एवं मानसिक विकास के समान ही बालक के सामाजिक विकास पर वंशानुक्रम का भी प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वंशानुक्रम के कारण पितृत्व व मातृत्व गुण बालकों में एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में स्थानान्तरित होते हैं जैसे – परोपकार, दया, सहयोग इत्यादि।

2. **शारीरिक एवं मानसिक विकास :–** शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ बालकों का सामाजिक विकास उत्कृष्ट होता है। जब कि शारीरिक एवं मानसिक रूप से अस्वस्थ बालकों का सामाजिक विकास उचित प्रकार से नहीं होता है

जिसके कारण वे अपने आप को परिस्थिति के अनुसार समायोजित नहीं कर पाते और अपने कार्यों में कठिनाई का अनुभव महसूस करने लगते हैं।

3. **संवेगात्मक विकास :–** बालक का संवेगात्मक व्यवहार भी सामाजिक विकास को प्रभावित करता हैं। प्रसन्नचित, स्नेही, मिलनसार, व्यवहार कुशल बालक अपने इन गुणों के कारण लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते है और सामने वाले व्यक्ति से सहयोग और सहानभूति प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं जबकि ठीक इसके विपरीत आचरण करने वाले बालक लोगों से सहयोगपूर्ण आचरण प्राप्त नही कर पाते हैं। जिसके कारण उनके अन्दर अनेक प्रकार की सामाजिक बुराईयां उत्पन्न हो जाती हैं।

4. **पारिवारिक वातावरण :–** बालक के सामाजिक विकास में परिवार का भी महत्वपूर्ण योगदान है। बालक शिष्ट गुण, सदाचार, आदर करना, सहयोग करना, सत्य बोलना, सद्मार्ग पर चलना जैसे गुणों का विकास अपने माता–पिता एवं बुजुर्गों के आचरण से प्राप्त करते हैं। बालक अपने माता–पिता के गुणों को ही अपने जीवन में आत्मसात् करके व्यवहार करते हैं।

5. **आर्थिक स्थिति :–** परिवार की आर्थिक स्थिति भी बालक के सामाजिक विकास को प्रभावित करता है। सम्पन्न परिवार के बालकों की शिक्षा–दीक्षा, पालन–पोषण, खान–पान, उच्च स्तर का होने के कारण उनका सर्वांगीण विकास होता है और वे वातावरण के साथ अपना अच्छा समायोजन स्थापित कर लेते हैं। जबकि जिन बालकों के परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती उनका सामाजिक विकास प्रभावित होता है।

6. **विद्यालयी परिवेश :–** विद्यालय का वातावरण भी बालकों के सामाजिक विकास पर प्रभाव डालते हैं। शान्त एवं आकर्षक वातावरण में शिक्षा प्राप्त करने से बालकों के अन्दर एक अलग प्रकार की उर्जा का संचार होता है। बालक विद्यालय में अपने सहपाठियों, शिक्षकों एवं व्यक्तियों से विचार विमर्श कर सद्गुणों को सीखता हैं। विद्यालयों में पाठ्यसहगामी क्रियाओं में प्रतिभाग करने से भी उनके अन्दर सहयोग, सदाचार, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा आदि गुण विकसित होते हैं। बालक किसी भी कार्य को आत्मीयता और सहयोग के माध् यम से पूर्ण करते हैं जिससे उनके अन्दर सामाजिक गुणों का विकास होता है।

7. **शिक्षक का व्यवहार :–** शिक्षक के व्यवहार का प्रभाव बालकों के ऊपर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। इसलिए शिक्षक को शिष्ट, मर्यादित, विषय विशेषज्ञ, सत्यनिष्ठ, कर्तव्यनिष्ठ, सदाचार आदि के गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए। बालक विद्यालय में शिक्षक के गुणों का अनुसरण करके सीखते

हैं। शिक्षक के गुणों का भी बालक विद्यालय में सामाजिक विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

8. **समाज :–** समाज भी बालक के सामाजिक विकास को प्रभावित करने के लिए उत्तरदायी होते हैं। समाज की अपनी एक व्यवस्था, मान्यताएँ, मूल्य व आदर्श होते हैं। समाज में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक व्यवस्थाओं के अनुरूप अपने को समायोजित करने का प्रयास करता है और उन मान्यताओं एवं नियमों के अनुसार ही कार्य करता है। इसका सीधा प्रभाव बालक के ऊपर पड़ता है। जिससे उनका सम्यक विकास होता है।

9. **अन्य कारक :–** बालक के सामाजिक विकास को समाज की संस्कृति, के साथ–साथ प्रचार के माध्यम जैसे – मेला, कैम्प, दूरदर्शन, रेडियो, चलचित्र, कम्प्यूटर, समाचार, पत्र एवं पत्रिकाएँ भी प्रभावित करती हैं। इस सब के द्वारा भी बालक का सामाजिक विकास होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

1. सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले एक कारण को लिखिए।

____

____

____

6.8 नैतिक विकास

मनुष्य एक बुद्धिमान प्राणी है। मनुष्य अपने बुद्धि और विवेक द्वारा ही सर्वोपरी है। मनुष्य जहॉ वास करता है वहा उसका एक सामाजिक परिवेश होता है। समाज में रहने के कारण उसे समाज द्वारा बनाए गये नियमों, मान्यताओं, बन्धनों, परम्पराओं, रीति–रिवाजों को मानने की बाध्यता होती है। ये सारे बन्धन समाज द्वारा मनुष्य के अन्दर आरोपित किए जाते है। समाज मनुष्य के जीवन–यापन के लिए ऐसे वातावरण को सृजित करता है जिसमें रहकर व्यक्ति मानव मूल्यों के विकास के लिए इन मान्यताओं को मानकर ही आगे बढ़ता है। यही गुण या मूल्य समाज के आदर्श माने जाते है। समाजीकरण की वह प्रक्रिया जिसके द्वारा व्यक्ति समाज में विकसित, पल्लवित, प्रफुल्लित होता है और वह सामाजिक मान्यताओं और आचरणों को अपने अन्दर आत्मसात करता है। व्यक्ति समाज

के द्वारा बनाए गये नियमों पर चलकर सीखता है कि व्यक्तिगत इच्छाओं और सामाजिक कर्तव्यों एवं दायित्वों के द्वन्द्व को किस प्रकार से नियंत्रित किया जाय, नैतिक विकास कहलाती है। नैतिक चरित्र का विकास शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। बालकों के नैतिक चरित्र से आशय उन्हें समाज के मान्य व्यवहारों से अवगत कराना है। बालकों के नैतिक विकास पर उसके सामाजिक सांवेगिक विकास का प्रभाव पड़ता है। बौद्धिक विकास का नैतिक विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। जैसे–जैसे बालकों का बौद्धिक विकास सुदृढ़ होता जाता है वैसे–वैसे उनके नैतिक मूल्यों एवं नैतिक निर्णयों में परिवर्तन होता रहता है। नैतिक विकास के सम्बन्ध में पियाजे तथ कोहलवर्ग ने अलग–अलग सिद्धान्त प्रस्तुत किए है।

6.9 पियाजे का नैतिक विकास का सिद्धान्त

पियाजे ने बच्चों के साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं, के विश्लेषण के आधार पर बालकों के नैतिक विकास का अध्ययन किया। पियाजे ने नैतिक विकास की चार अवस्थाओं का वर्णन किया जो निम्नवत् है–

1. **अनियमित :–** पियाजे बालक के जन्म से लेकर 5 वर्ष तक कि अवस्था को अनियमित अवस्था माना है। इस उम्र का बच्चा न नैतिक होता है और न ही अनैतिक। इस उम्र के बालकों का व्यवहार और आचरण नैतिक स्तर से नियंत्रित नहीं होता है। बालक के अन्दर उत्पन्न होने वाले दुख और सुख के व्यवहार से नैतिकता नियंत्रित होती है।

2. **विषमजातीय अधिकार :–** इस अवस्था में नैतिक विकास प्रौढ़ो के शासन के कारण बालकों में विकसित होता है। नैतिक विकास का नियंत्रण वाह्य अधिकार होता है। इस प्रकार का विकास पुरस्कार एवं दण्ड द्वारा नियंत्रित होता है। 5–8 वर्ष के बच्चों में यह अवस्था परिलक्षित होती है।

3. **विषमजातीय परस्परता :–** इस अवस्था के बच्चों में नैतिकता का विकास अपने सहपाठियों के सहयोग से विकसित होता है और वह परस्परता पर निर्भर होता है। इस अवस्था के अन्तर्गत इस बात पर विचार किया जाता है कि कोई ऐसा कार्य न किया जाय जो स्वयं के लिए अक्रामक और अनुपयुक्त हो।

4. **स्वायत्तशासी :–** पियाजे इसे समान अवस्था के नाम से सम्बोधित करते है। जब परस्परता की मांग बराबर होती है तब स्वासित बराबर होते हैं। इस अवस्था में व्यक्ति अपने व्यवहार के लिए पूरी तरह स्वयं उत्तरदायी होता है। नैतिक विकास के सभी स्तर, विभिन्न प्रकार के आयु स्तर से सम्बद्ध होते हैं।

इस सिद्धान्त के अनुसार सभी बालकों के लिए निश्चित अवस्थाए निर्धारित नहीं की गई है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

6. पियाजे के नैतिक विकास के चार अवस्थाओं के नाम लिखिए।

____

____

____

जीन पियाजे (1993) के नैतिकता के विकास की चार अवस्थाओं का विवेचन राम पाल सिंह ने निम्न प्रकार से किया है–

1. अनोमी अवस्था (Anomy)

शैशवावस्था के अन्तर्गत शिशु के जन्म लेने से 5 वर्ष तक की अवस्था को जिन पियाजे ने अनोमी अवस्था की संज्ञा दी। 5 वर्ष के बच्चे में नैतिकता का विकास नही होता है। इस अवस्था में वह न ही नैतिक होता है और न ही अनैतिक। इस अवस्था में बच्चा अपनी समस्त गतिविधियों/कार्य को स्वयं के दुख एवं सुख के आधार पर संचालित करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

7. अनोमी अवस्था किस उम्र तक पायी जाती है।

____

____

____

1. विषमजातीय अधिकार (Heteronomy Authority)

बालकों में यह अवस्था 5 से 8 वर्ष वक चलती रहती है। बालकों के अन्दर नैतिकता को वाहय दबाव व अधिकारों से नियंत्रित किया जाता है। दण्ड और पुरस्कार बालकों के अन्दर दबाव को उत्पन्न करने के प्रमुख साधन है।

2. विषमजातीय परस्परता (Heteronomy Reciprocity)

यह अवस्था बालकों में 9–13 वर्ष की आयु तक पायी जाती है। नैतिकता की यह तीसरी अवस्था कहलाती है। इस उम्र में बालक समूह के अन्य सदस्यों या मित्रों व्यवहार, हाव–भाव व प्रतिक्रियाओं को देखकर नैतिक व्यवहार को प्रदर्शित करता है। इस अवस्था में कोई व्यवहार यदि अपने लिए अनैतिक है तो यह आवश्यक नही कि वह दूसरों के लिए भी अनैतिक होगा।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

8. विषमजातीय परस्परता किस आयु तक पायी जाती है?

____

____

____

1. स्वायत्तशासी (Autonomy)

किशोरावस्था में बालकों के अन्दर नैतिकता का विकास इसी अवस्था से प्रारम्भ होता है। बालक अपने बुद्धि, विवेक, चिन्तन, तर्क, भावनाओं, परिस्थितियों के आधार पर निर्णय लेता है कि कौन सा कार्य नैतिक है और कौन सा अनैतिक। इस आयु के बालकों में नैतिक और अनैतिक में विभेद करने की क्षमता का विकास पूर्णतया विकसित हो जाता है।

6.10 कोहलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धान्त

कोहलबर्ग ने नैतिकता के सिद्धान्त का प्रतिपादन सन् 1969 में किया था। कोहलबर्ग ने अपने ही सिद्धान्त में संशोधन सन् 1981 तथा सन् 1984 में किया था। लॉरेन्स कोहलबर्ग का मत है कि बालक के नैतिक विकास के क्रम को समझने के लिए उसके तर्क और चिन्तन के स्वरूप का अध्ययन कर उसका विश्लेषण करना आवश्यक है। बालक जब कोई प्रतिक्रिया व्यक्त करता है तब उसके आधार पर उसकी नैतिकता का सही आकलन नहीं किया जा सकता है। बालकों में प्रायः ऐसा देखा गया है कि बालक जो कार्य करता है वह किसी डर या दबाव या प्रलोभन के कारण करता है। बालकों का नैतिक चिन्तन उसके स्वयं के निर्णय पर आधारित नही होती है। इसके विपरीत कोहलबर्ग बालकों के नैतिकता के विकास को समझने के लिए उनके सम्मुख दुविधा पर आधारित समस्यात्मक परिस्थितियों को उत्पन्न करता है और यह देखने

का प्रयास करता है कि बालक इस परिस्थिति में क्या सोचता है तथा वह किसी निष्कर्ष या निर्णय पर पहुँचने के लिए किस तर्क या चिन्तन के द्वारा, उचित व्यवहार के लिए निर्णय लेता है। कोहलबर्ग ने अपने अध्ययन से सिद्व किया कि बालकों के अन्दर नैतिकता का विकास किसी परिस्थितिजन्य कारणों से विकसित नहीं होती अपितु उसके स्वयं के तर्क करने की क्षमता के कारण विकसित होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

9. कोहलवर्ग ने नैतिकता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किस सन् में किया था।

____

____

____

6.11 नैतिक विकास की अवस्थाएँ

कोहलबर्ग ने अध्ययन की सुविधा कि दृष्टि से नैतिक विकास के क्रम को 6 अवस्थाओं में वगीकृत किया है। कोहलबर्ग ने इन 6 अवस्थाओं में से दो अवस्थाओं को एक साथ समाहित करते हुए उन्हे तीन स्तरों में विभक्त किया। ये तीन स्तर निम्नवत् है–

(i) पूर्व पारम्परिक. (प्रीकन्वेंशनल)

(ii) पारम्परिक. (कन्वेंशनल)

(iii) उत्तर पारम्परिक. (पोस्ट कन्वेंशनल)

1. पूर्व पारम्परिक स्तर

बालक जब किसी वाह्य कारक या किसी घटना के आधार पर किसी व्यवहार को नैतिक या अनैतिक मानता है। तब इस प्रकार के नैतिक तर्क या विचार प्रीकन्वेंशनल स्तर के नैतिकता से सम्बन्धित होते है। इसके अन्तर्गत दो अवस्थाए आती है–

(i) आज्ञा एवं दण्ड की अवस्था

(ii) घमण्ड की अवस्था

बालकों को जब किसी कार्य को पूर्ण करने के कारण दण्ड नही मिलता है तो वह भौतिक व्यवहार के अर्न्तगत आता है जब कि जिस कार्य को करने के लिए उसे दण्ड मिलता है वह उसे अनैतिक कार्य मानता है।

(i) **आज्ञा एवं दण्ड की अवस्था :—** इस अवस्था में बालक का चिन्तन स्तर दण्ड या डर के कारण प्रभावित होता है। बालक का पालन–पोषण परिवार के अन्दर किया जाता है जब बालक किसी आज्ञा का उल्लंघन करता है तो परिवार के सदस्यों द्वारा उसे दण्ड दिया जाता है। दण्ड मिलने के कारण बालक के अन्दर आत्मबोध होता है कि यदि उसके द्वारा किसी आज्ञा का उल्लंघन किया जायेगा तो उसे दण्ड मिलेगा। अतः उसके मन में विचार आता है कि दण्ड से बचने के लिए आज्ञाकारी होना आवश्यक है। बालकों को जब किसी कार्य को पूर्ण करने के कारण दण्ड नहीं मिलता है तो वह नैतिक व्यवहार के अन्तर्गत आता है जब कि जिस कार्य को करने के लिए उसे दण्ड मिलता है वह उसे अनैतिक कार्य मानता है।

(ii) **अन्तरवैयक्तिक अनुरूपता की अवस्था :—** इस अवस्था में बालक के उम्र बढ़ने के कारण उसके चिन्तन एवं विचार करने के स्वरूप में परिवर्तन हो जाता है। बालक अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति के लिए विचार करने लगते है। कभी–कभी वे अपनी इच्छाओं की पूर्ति झूठ बोलकर या चोरी करके पूर्ण करता है। झूठ बोलकर या चोरी करके इच्छापूर्ति को बालक इस अवस्था में उचित मानते है।

(iii) **प्रशंसा या 'अच्छा लड़का–लड़की' की अवस्था :—** बालकों के अन्दर नैतिक विकास की तीसरी अवस्था प्रशंसा पर आधारित होता है। बालक जब कोई ऐसा कार्य करता है जिसकी स्वीकृत परिवार व समाज के सभी वर्गो से प्राप्त हो, तो वह उस कार्य को प्रशंसा प्राप्त करने के लिए करता है। इस अवस्था के बालकों के अन्दर कौन सा कार्य प्रशंसनीय और कौन सा निन्दनीय है उसमें अन्तर करने की प्रवृत्ति का विकास हो जाता है। बालक इस अवस्था में उन्ही व्यवहारों और कार्यो को अच्छा मानता है जिनकी प्रशंसा पाठशाला, परिवार एवं समाज में प्राप्त हो।

(iv) **विधिक अवधारणा :—** बालक के नैतिक विकास की यह चौथी अवस्था है। बालक इस अवस्था में समाज को इसलिए महत्वपूर्ण मानता है क्योंकि उसके द्वारा किए गये कार्यो को समाज के द्वारा स्वीकृत मिलती है और उसके लिए उसे प्रशंसा प्राप्त होती है। इस अवस्था में बालक यह विचार करता और सोचता है कि उसे केवल वही कार्य करना चाहिए, जिसकी स्वीकृत समाज से प्राप्त हो। समाज के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए बालक समाजपयोगी एवं प्रशंसनीय कार्यो को अपना कर्त्यव्य समझकर पूर्ण करते है। उनके अन्दर इस बात का भी बोध होता है कि जिस कार्य को करने की स्वीकृत समाज प्रदान नहीं करता वह अनैतिक कार्य है।

(v) सामाजिक समझौते की अवस्था :– इस अवस्था तक पहुँचने में व्यक्ति के नैतिक विकास की दिशा अत्यधिक परिवर्तनशील होती है। इस अवस्था के व्यक्तियों के नैतिक चिन्तन का स्तर काफी ऊँचा होता है। इस अवस्था में व्यक्ति के अन्दर नैतिक एवं अनैतिक में अन्तर करने प्रवृत्ति परिपक्वन के कारण विकसित होती है। इस अवस्था में व्यक्ति यह मानने लगता है कि व्यक्ति को अपने जीवन के सुचारु संचालन के लिए समाज द्वारा बनाए गये मान्यताओं और नियमों का पालन एक समझौते के तहत करना है। इस अवस्था में वह ऐसा मानने लगता है, समाज के द्वारा बनाएँ गये नियमों से व्यक्ति के जीवन एवं उसके अधिकारों की रक्षा होती है। व्यक्ति के द्वारा किए गये वे सभी कार्य जिनकी स्वीकृत समाज से प्राप्त होती है नैतिक माने जाते हे और उसके विपरीत होने पर सभी कार्य अनैतिक माने जाते है।

(vi) सार्वभौमिक नीतिशास्त्रीय अवस्था:– व्यक्ति के नैतिक विकास की अन्तिम अवस्था विवेक की अवस्था होती है। व्यक्ति इस अवस्था में अच्छे–बुरे, गलत–सही, उचित–अनुचित, मर्यादित–अमर्यादित, उपयुक्त–अनुपयुक्त के सम्बन्ध में अपने व्यक्तिगत विचार प्रस्तुत करने में समर्थ हो जाता है। इस अवस्था में व्यक्ति अपने विवेक के माध यम से ही अधिकांश निर्णय लेने लगता है। व्यक्ति उन्ही तथ्यों एवं बातो को स्वीकृत प्रदान करता है जिसे करने के लिए उसका विवेक उसे अनुमति प्रदान करता है।

6.12 नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक

मनुष्य अपने जीवन काल में विभिन्न अवस्थाओं शैशवावस्था से प्रौढ़ावस्था तक के सफर में अनेक प्रकार की क्रियाओ को पूर्ण करते हुए आगे बढ़ता है। व्यक्ति का नैतिक विकास भी कई कारणों से प्रभावित होता है, जिसका प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर स्पष्ट दिखाई देता है। व्यक्ति के नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारकों की चर्चा निम्नवत् की जा रही है–

1. व्यक्ति का शारीरिक स्वास्थ्य बालकों के नैतिक विकास को प्रभावित करता है। शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालकों का मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा होता है। शारीरिक रूप से स्वस्थ्य होन के कारण बालक अच्छी तरह से विचार–मन्थन एवं चिन्तन करते है। इस प्रकार स्वस्थ्य बालक अच्छे विचारों को ठीक प्रकार से और शीघ्रता के साथ ग्रहण करते है। शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालकों का नैतिक विकास अच्छी तरह से होता है।

2. **परिवारिक वातावरण :–** बालकों के अन्दर नैतिकता का समुचित विकास परिवार के द्वारा ही विकसित होता है। अच्छा–बुरा, उचित–अनुचित, सदगुणों का विकास माता–पिता से ही बालकों में स्थानान्तरित होता है। यदि बालक को

परिवार में प्रेम एवं स्नेह मिलता हैं, तो उनका नैतिक विकास बेहतर होता है। जबकि विपरित परिस्थिति में उनका नैतिक विकास प्रभावित होता है और वे अनैतिक कार्यो की तरफ अग्रसित हो जाते है।

3. **नैतिकता पर समूह का प्रभाव :–** बालक या व्यक्ति के नैतिक व्यवहार को समूह में रहने वाले अन्य सदस्य और उनके साथी भी प्रभावित करते है। बालक यदि किसी कार्य को कर रहा है तो वह नैतिक है अथवा अनैतिक इसकी स्वीकृत समूह के सदस्यों एवं उनके मित्रों के विचार पर केन्द्रित होता है। समूह जिस कार्य को करने की स्वीकृत प्रदान करता है व्यक्ति उसे ही नैतिक मानकर पूर्ण करता है।

4. **धर्म का प्रभाव :–** समाज में वास करने वाले सभी नागरिक किसी न किसी धर्म का अनुसरण करते है। धर्म से ही हमें नैतिकता की प्राप्ति होती है। धर्म व्यक्ति को सद्मार्ग पर चलने, सत्य बोलने तथा उचित आचरण करने की शिक्षा प्रदान करता है। अतः हम कह सकते है कि व्यक्ति के नैतिक विकास पर धर्म का भी प्रभाव पड़ता है।

5. **मानसिक क्रियाए :–** व्यक्ति के नैतिक विकास को मानसिक क्रियाएँ भी प्रभावित करती है। मूर्ख व्यक्ति और बुद्धिमान व्यक्ति के नैतिक आदर्श और मूल्यों में अन्तर उनकी बुद्धि और मानसिक योग्यता के कारण प्रभावित होती है। बालक अपनी मानसिक योग्यता एवं क्षमता के कारण परिस्थिति एवं समाज को समझकर सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप अपने को परिवर्तित करते हुए अपना नैतिक विकास करते है।

6. **सूचना के स्रोतः–** पत्र–पत्रिकाएँ, पुस्तक, दूरदर्शन, सिनेमा, विज्ञापन एवं इण्टरनेट आदि साधन व्यक्ति के नैतिक व्यवहार को प्रभावित करते है। महापुरूषों के व्यक्तित्व को पढ़ने, कक्षा में चलचित्र के माध्यम से पाठ्यक्रम को देखने, समाचार, पत्र–पत्रिकाओं में सम्पादकीय को पढ़ने एवं ज्ञानवर्धन बातों को सुनने से भी बालकों के नैतिक विकास में परिवर्तन होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

10. नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले किसी एक कारक को लिखिए।

____

____

____

6.13 सारांश

मनुष्य एक बुद्धिमान और सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति के विकास में सामाजिक एवं भौतिक गुणों का महत्वपूर्ण योगदान है। बालक के भौतिक विकास पर उसके सामाजिक एवं संवेगिक विकास का प्रभाव पड़ता है। प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में बालकों के सामाजिक विकास के दौरान कौन से परिवर्तन परिलक्षित होते है तथा बालकों के विकास क्रम को कौन–कौन से कारक प्रभावित करते है इसका सारगर्भित विवेचन किया गया है। सामाजिक अपेक्षाओं के अनुसार व्यवहार करने की प्रवृत्ति के द्वारा ही व्यक्ति का समाजिक विकास अच्छी तरह से हो सकता है। पियाजे के नैतिक विकास के अन्तर्गत अनोमी, विषम जातीय अधिकार, विषम जातीय परस्परता, स्वायन्तशासी इत्यादि के प्रभाव का व अध्ययन किया गया है। कोहलवर्ग के नैतिक विकास सिद्धान्त के 6 अवस्थाओं को भी वर्णन इस इकाई में किया गया है। इसके साथ ही नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों की भी स्पष्ट विवेचना इस इकाई में की गई है।

6.14 अभ्यास के प्रश्न

1. बालक के सामाजिक विकास के अर्थ को स्पष्ट करते हुए बालक के सामाजिक विकास की विशेषताओं का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. बालक के सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कीजिए।
3. नैतिक विकास के अर्थ को स्पष्ट करते हुए जीन पियाजे की चार अवस्थाओं की विवेचना कीजिए।
4. कोहलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।
5. नैतिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

6.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. गुप्ता एस.पी. (2002) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. पाठक पी.डी. (2010) : शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा –2
3. भटनागर सुरेश (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
4. सिंह अरूण (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, वी.वी. प्रिंटर्स, पटना

5. सिंह कर्ण (2011) : अधिगमकर्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, गोविन्द प्रकाशन, लखीमपुर–खीरी

6. सेवानी अशोक एवं सिंह उमा (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा – 7

6.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. **इ.बी. हरलाक के अनुसार–** ''सामाजिक विकास से तात्पर्य सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार करने की योग्यता को प्राप्त करना है।''

2. प्रथम माह में शिशु ध्वनि में अन्तर नहीं कर पाता है कि यह ध्वनि किसकी है। परन्तु शिशु प्रकाश और ध्वनि के प्रति प्रतिक्रिया अवश्य प्रकट करता है। शिशु अवस्था में वह रोने व नेत्रों को घुमाकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

3. बाल्यावस्था में बालक और बालिकाएँ स्कूल में या पास–पड़ोस में रहने वाले हम उम्र के बच्चों के साथ मित्रता की प्रवृत्ति का विकास करते है। वे अपने अनुसार अपनी पसन्द ,आदत, अभिवृत्ति, विचारों के अनुसार मित्रों का चुनाव करते है।

4. **समूहों को निर्मित करना :–** इस उम्र के बालक एवं बालिकाओं की प्रवृत्ति समूह बनाकर रहने की होती है। ये अपने सभी कार्यो को समूह में रहकर ही करना पसन्द करते है। समूहों में रहने का उद्देश्य एक साथ मिलकर मनोरंजन करने से है। ये पिकनिक, नाटक, नृत्य, संगीत, इत्यादि गतिविधियों में प्रतिभाग करने के लिए समूह का निर्माण करते है। लिंग के अनुसार समूह प्रायः अलग–अलग होते है।

5. **आर्थिक स्थिति :–** परिवार की आर्थिक स्थिति भी बालक के सामाजिक विकास को प्रभावित करता है। सम्पन्न परिवार के बालकों की शिक्षा–दीक्षा, पालन–पोषण, खान–पान, उच्च स्तर का होने के कारण उनका सर्वांगीण विकास होता है और वे वातावरण के साथ अपना अच्छा समायोजन स्थापित कर लेते हैं। जबकि जिन बालकों के परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती उनका सामाजिक विकास प्रभावित होता है।

6. पियाजे के नैतिक विकास के चार अवस्थाओं के नाम निम्नवत् है–

(i) अनियमित (ii) विषमजातीय अधिकार

(iii) विषमजातीय परस्परता (iv) स्वायत्तशासी

7. अनोमी अवस्था :– जन्म से 5 वर्ष तक।

8. विषमजातीय परस्परता :— 9—13 वर्ष की आयु तक यह अवस्था पायी जाती है।

.9. सन् 1969 ।

10. **नैतिकता पर समूह का प्रभाव :—** बालक या व्यक्ति के नैतिक व्यवहार को समूह में रहने वाले अन्य सदस्य और उनके साथी भी प्रभावित करते है। बालक यदि किसी कार्य को कर रहा है तो वह नैतिक है अथवा अनैतिक इसकी स्वीकृत समूह के सदस्यों एवं उनके मित्रों के विचार पर केन्द्रित होता है। समूह जिस कार्य को करने की स्वीकृत प्रदान करता है व्यक्ति उसे ही नैतिक मानकर पूर्ण करता है।

खण्ड : तीन

बुद्धि, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता

इकाई - 7 5
बुद्धि : सम्प्रत्यय, सिद्धान्त एवं मापन

इकाई - 8 31
व्यक्तित्व : सम्प्रत्यय, सिद्धान्त एवं मापन

इकाई - 9 59
सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो० एम० पी० दुबे	कुलपति, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो० एस०पी० गुप्ता	पूर्व निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो० के०एस०मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो० अखिलेश चौबे	पूर्व आचार्य, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो० विद्या अग्रवाल	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो० प्रतिभा उपाध्याय	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डा० गिरीश कुमार द्विवेदी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो० के०एस०मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो०उषा मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समन्वयक

डॉ० रंजना श्रीवास्तव	प्रवक्ता, शिक्षा विद्याशाखा, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

डॉ० राजेश कुमार पाण्डेय	कुलसचिव, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

ISBN-UP-978-93-83328-00-0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक ; कुलसचिव, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रक : **d0lh0fifVx ,.M ,ykbM oDl] ipoVh] eFkjk&281003-**

B.Ed.E-01 : शैशवकाल और उसका विकास

खण्ड–एक शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

इकाई–1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई–2 शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियॉ

इकाई–3 वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएं

खण्ड–दो शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

इकाई–4 शारीरिक और संवेगात्मक विकास

इकाई–5 संज्ञानात्मक विकास एवं भाषा विकास

इकाई–6 सामाजिक एवं नैतिक विकास

खण्ड–तीन बुद्धि, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता

इकाई–7 बुद्धि सम्प्रत्यय सिद्धान्त एवं मापन

इकाई–8 व्यक्तित्व सम्प्रत्यय एवं मापन

इकाई–9 सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

खण्ड–चार अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

इकाई–10 अभिप्रेरणा, तर्क एवं समस्या समाधान

इकाई–11 स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई–12 तनाव, कुण्ठा और द्वन्द्व

खण्ड–पॉच विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

इकाई–13 विशिष्ट बालक

इकाई–14 मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान तथा समायोजन

इकाई–15 समूह मनोविज्ञान

खण्ड – तीन : बुद्धि, व्यक्तित्व और, सृजनात्मकता

खण्ड परिचय

व्यक्ति का व्यक्तित्व कई प्रकार के संज्ञानात्मक एवं भावात्मक गुणों का समन्वित स्वरूप होता है। किसी भी व्यक्ति की कुशलता का आकलन उसकी वृद्धि तथा उसके व्यक्तित्व के द्वारा ही सम्भव होता है। बुद्धि एवं व्यक्ति के मापन के लिए पहले कोई वैज्ञानिक विधि उपलब्ध नहीं थी परन्तु वर्तमान समय में इसके मापन के लिए विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण उपलब्ध हैं। प्रायः ऐसा देखा गया है। बालकों की वृद्धि एवं व्यक्तित्व में वैयक्तिक विभिन्नताएं पायी जाती हैं। प्रस्तुत खण्ड के अन्तर्गत बुद्धि, व्यक्तित्व, व्यक्तित्व का मापन एवं सृजनात्मकता का निम्नांकित तीन इकाइयों में विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है।

इकाई – 7 बुद्धि के द्वारा ही बालक जटिल से जटिल कार्य को समझ कर उसे सीखने का प्रयास करता है। बुद्धि के अध्ययन को कार्यात्मक पक्ष, संरचनात्मक पक्ष एवं क्रियात्मक पक्ष में बॉटकर अध्ययन किया जा सकता है। प्रस्तुत इकाई में बुद्धि के प्रत्यय प्रकार, सिद्धान्त एवं मापन का अध्ययन किया गया है।

इकाई – 8. व्यक्तित्व व्यक्ति के सम्पूर्ण गुणों का संगठन है और वह उन्हीं के द्वारा वातावरण से अपना समायोजन स्थापित करता है। विकास की अवस्था के साथ ही बालक के व्यक्तित्व के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिकों शोधों के परिणामस्वरूप अनेकों प्रकार के परीक्षणों की खोज की है। इन परीक्षणों के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि व्यक्ति का व्यक्तित्व किस प्रकार का है। प्रस्तुत इकाई में व्यक्तित्व के अर्थ, प्रकार, सिद्धान्त, महत्व एवं व्यक्तित्व के मापन हेतु उपयोग में लाये जाने वाले विभिन्न परीक्षणों के विषय में विस्तृत चर्चा की गई है।

इकाई – 9 वर्तमान युग तकनीकी का युग है। आज विकास के लिए सभी क्षेत्रों में वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग हो रहा है। तथा बराबर नये–नये शोध कार्य किये जा रहे है। इस प्रकार के शोध कार्य में शोधकर्ताओं का श्रम एवं उनकी सृजनशीलता का बहुमूल्य योगदान है। प्रत्येक बालक की अलग–अलग योग्यताएँ एवं क्षमताएँ होती हैं। ठीक उसी प्रकार बालकों की अलग–अलग रूचि एवं अभिरूचि भी हो सकती है। रूचि एवं अभिरूचि के आधार पर ही बालक किसी भी क्षेत्र में सृजनात्मक हो सकता है। प्रस्तुत इकाई में सृजनात्मकता की अवधारणा एवं उनका मापन करने वाली विधियों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

इकाई – 7 : बुद्धि : सम्प्रत्यय सिद्धान्त एवं मापन

इकाई की रूपरेखा –

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 बुद्धि का सम्प्रत्यय

7.4 बुद्धि की परिभाषाएँ

7.4.1 समायोजन पर आधारित बुद्धि की परिभाषाएँ

7.4.2 अधिगम योग्यता पर आधारित बुद्धि की परिभाषाएँ

7.4.3 अमूर्त चिन्तन पर आधारित बुद्धि की परिभाषाएँ

7.4.4 बुद्धि की व्यापक परिभाषाएँ

7.5 बुद्धि की विशेषताएँ

7.6 बुद्धि के प्रकार

7.6.1 अमूर्त बुद्धि

7.6.2 सामाजिक बुद्धि

7.6.3 मूर्त बुद्धि

7.7 बुद्धि के सिद्धान्त

7.7.1 बुद्धि का एक–कारक सिद्धान्त

7.7.2 बुद्धि का द्वि–कारक सिद्धान्त

7.7.3 बुद्धि का बहु–कारक सिद्धान्त

7.7.4 बुद्धि का समूह–कारक सिद्धान्त

7.7.5 बुद्धि का पदानुक्रमिक सिद्धान्त

7.7.6 बुद्धि संरचना का सिद्धान्त

7.8 बुद्धि का मापन

7.8.1 यूरोपीय परिप्रेक्ष्य में बुद्धि परीक्षणों का संक्षिप्त इतिहास

7.8.2 भारतीय परिप्रेक्ष्य में बुद्धि परीक्षणों का संक्षिप्त इतिहास

7.9 मानसिक आयु व बुद्धि लब्धि

7.9.1 बुद्धि लब्धि का अर्थ

7.9.2 बुद्धि लब्धि का वर्गीकरण

7.10 बुद्धि परीक्षणों के प्रकार

7.10.1 वैयक्तिक बुद्धि परीक्षण

7.10.2 सामूहिक बुद्धि परीक्षण

7.10.3 शाब्दिक बुद्धि परीक्षण

7.10.4 अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण

7.11 बुद्धि परीक्षणों का महत्व

7.12 सारांश

7.13 अभ्यास कार्य

7.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.1 प्रस्तावना

बुद्धि के अभाव में मनुष्य पशु के समान होता है अर्थात् बिना बुद्धि के मनुष्य जड़वत होता है। प्रायः बुद्धि एवं मानसिक योग्यता शब्द एक दूसरे के पूरक माने जाते है। प्रायः प्रचलन की भाषा में बुद्धि शब्द का प्रयोग करते हुए सभी को देखा जाता है। सृष्टि में निवास करने वाले सभी जीवधारियों के शारीरिक संरचना में अन्तर पाया जाता है जो कई कारणों से प्रकट होती है। बच्चों की मानसिक क्रियाओं पर उनकी बुद्धि का प्रभाव पड़ता है। बच्चों के मानसिक विकास के लिए उसकी मानसिक क्षमता तथा बौद्धिक स्तर को जानना आवश्यक है। भूमण्डल पर निवास करने वाले जीवधारियों की शारीरिक संरचना में भिन्नता पायी जाती है। अतः व्यक्तियों की योग्यता एवं क्षमता में समानता की अपेक्षा करना उपयुक्त नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति या बालक में बौद्धिक दृष्टि से अन्तर पाया जाता है। अतः इस अध्याय के अन्तर्गत बुद्धि के अर्थ, प्रकृति तथा मापन का विस्तृत अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। बुद्धि में अध्ययन के उद्देश्य से बुद्धि को तीन वर्गों में विभक्त किया जा रहा है–

(i) कार्यात्मक पक्ष – बुद्धि क्या है एवं इसका क्या अर्थ है?

(ii) संरचनात्मक पक्ष – बुद्धि की संरचना, बुद्धि के सिद्धान्त तथा बुद्धि को प्रभावित करने वाले कारक

(iii) क्रियात्मक पक्ष – बुद्धि मापन का इतिहास एवं बुद्धि परीक्षण।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि :

- बुद्धि के विषय में वर्णन कर सकेंगे।
- बुद्धि एवं ज्ञान में अन्तर कर सकेंगे।
- बुद्धि के विभिन्न प्रकार एवं सिद्धान्तों को भली–भाँति समझ सकेंगे।
- बुद्धि मापन के विभिन्न परीक्षणों के उपयोग से अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकेंगे।

7.3 बुद्धि का सम्प्रत्यय

बुद्धि शब्द का सम्प्रत्यय मन मस्तिष्क में आते ही व्यक्ति विचारों में खो जाता है। बुद्धि के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कई वर्षों से मनोवैज्ञानिक प्रयत्नशील रहे परन्तु बुद्धि के प्रत्यय को स्पष्ट नहीं किया जा सका। बुद्धि क्या है? इस पर निरन्तर शोधकार्य मनोवैज्ञानिकों के द्वारा किए गये। शोध के परिणाम स्वरूप मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि के सम्प्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न प्रकार की परिभाषाओं को प्रस्तुत किया। विभिन्न प्रकार की परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर बुद्धि के अर्थ को समझाने में मनोवैज्ञानिकों को सफलता प्राप्त हुई। मनोवैज्ञानिकों द्वारा बुद्धि के विषय में व्यक्त गए किए गए विचारों की यदि विवेचना की जाये तो जो परिणाम परिलक्षित होते हैं उनके अनुसार बुद्धि हमारे द्वारा जो कार्य किए जा रहे हैं उसके माध्यम से व्यक्त होती है। इस प्रकार व्यक्ति के द्वारा किए गये क्रियाओं एवं बौद्धिक व्यवहारों के आधार पर हम बुद्धि का अनुमान लगाते हैं। अतः बुद्धि के सन्दर्भ में हम कह सकते हैं कि 'बुद्धि वह है जो बुद्धिमान व्यक्ति करता है'। इस प्रकार के वर्णनों से बुद्धि का अर्थ समझने में सरल हो सकता है लेकिन इससे बुद्धि के सम्प्रत्यय को स्पष्टता नहीं मिल पाती है। मनोवैज्ञानिकों ने लगातार बुद्धि के प्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए लगातार अनेकों प्रकार के शोधकार्य किए लेकिन इन शोध कार्यो से भी बुद्धि के सही अर्थ को स्पष्ट नहीं किया जा सका। बुद्धि शब्द का उच्चारण करते ही उसके प्रत्यय के विषय में एक बोध होने लगता है कि यह ज्ञान, बोध, योग्यता, समझ एवं मस्तिष्क से जुड़ा कोई प्रत्यय है। अतः हम कह सकते है कि बुद्धि का अनुभव व्यक्ति के द्वारा

किए गये व्यवहार के आधार पर ही किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिक फ्रीमैन ने बुद्धि की अनेक परिभाषाओं का विश्लेषण एवं विवेचन किया और इसे कई वर्गों में विभक्त कर इसके अर्थ को स्पष्ट करने का सराहनीय प्रयास किया है।

7.4 बुद्धि की परिभाषाएँ

बुद्धि क्या है? इस पर निरन्तर एवं बराबर शोध कार्य मनोवैज्ञानिको के द्वारा किये गये। शोध के परिणाम स्वरूप मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि के सम्प्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न परिभाषाओं को प्रस्तुत किया। परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर बुद्धि के अर्थ को समझने में सफलता प्राप्त हुई।

7.4.1 समायोजन पर आधारित बुद्धि की परिभाषाएँ

स्टर्न के अनुसार – ''बुद्धि नई परिस्थितियों के अनुरूप अपने चिन्तन को समायोजित करने की सामान्य योग्यता है।''

'Intelligence is a general adaptation to new conditions and problems of life.'

- Stern

बर्ट के अनुसार – ''बुद्धि अपेक्षाकृत नई तथा भिन्न परिस्थितियों में समुचित रूप से समायोजन करने की योग्यता है।''

"Intelligence is the innate capacity to adapt relatively to new situation."

-Burt

क्रूज के अनुसार – ''बुद्धि नई तथा विभिन्न परिस्थितियों में समुचित रूप से समायोजन करने की योग्यता है।''

"Intelligence is the ability to adjust adequately to new and different situations."

-Cruz

7.4.2 अधिगम योग्यता पर आधारित बुद्धि की परिभाषाएँ

बकिंघम के अनुसार – 'बुद्धि अधिगम की योग्यता है।''

"Intelligence is the ability to learn."

-Bukinghan

डियरबोर्न के शब्दों में – ''बुद्धि अधिगम करने की क्षमता या अनुभवों से लाभ प्राप्त करने की योग्यता है।''

"Intelligence is the capacity to learn or to profit by experience."

-Dearborm

7.4.3 अमूर्त चिन्तन पर आधारित बुद्धि की परिभाषाएँ

बिने के अनुसार– ''बुद्धि उचित ढंग से तर्क करने, उचित ढंग से निर्णय करने तथा आत्म विश्लेषक होने की क्षमता है।''

"Intelligence may be characterized as inventiveness dependant upon comprehension and marked by purposefulness and corrective judgment."

-Binne

7.4.4 बुद्धि की व्यापक परिभाषाएँ

वैश्लर के अनुसार – ''बुद्धि किसी व्यक्ति के द्वारा उद्देश्य पूर्ण ढंग से कार्य करने, तार्किक चिन्तन करने तथा वातावरण के साथ प्रभावपूर्ण ढंग से क्रिया करने की सामूहिक योग्यता है।''

"Intelligence is the aggregate or global capacity of the individual to act purposefully, to think rationally and to deal effectively with his environment."

-D. Wechsler

स्टोडार्ड – ने बुद्धि को और अधिक व्यापक अर्थों में लिया है। उनके अनुसार बुद्धि कठिनता, अमूर्तता, जटिलता, मितव्ययियिता लक्ष्य की अनुकूलता सामाजिक मूल्य व नवीनता की उत्पत्ति से युक्त क्रियाओं को करने एवं उनकी शक्ति को केन्द्रित करने तथा संवेगात्मक दबावों का प्रतिरोध करने की आवश्यकता वाली परिस्थितियों में इन क्रियाओं को बनाए रखने की योग्यता है।''

"Intelligence is the ability to undertake activities that are characterized by difficulty, complexity, abstractness, economy, adaptiveness to a goal, social value and the emergence of originals and to maintain such activities under conditions that demand a concentration of energy and resistance to emotional forces."

-G. D. Stoddard

7.5 बुद्धि की विशेषताएँ

बुद्धि की विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर बुद्धि की निम्नलिखित विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं :–

(अ) बुद्धि अनुवांशिक एवं जन्मजात होती है।

(ब) बुद्धि से ही व्यक्ति समस्याओं का समाधान करते हुए किसी भी परिस्थिति के सापेक्ष अपने व्यवहार का संगठन एवं उसमें परिमार्जन करता है।

(स) बुद्धि सीखने की क्षमता है।

(द) बुद्धि के द्वारा ही पूर्व अनुभवों के आधार पर अपने योग्यता में अभिवर्धन किया जा सकता है।

(य) विभिन्न प्रकार की योग्यताओं का संगठन ही बुद्धि है।

(र) अप्रत्यक्ष प्रत्यय के विषय में समझ बुद्धि के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है।

(ल) बुद्धि में आत्म निरीक्षण की शक्ति समाहित होती है।

(व) बुद्धि समस्या को समझने के उपरान्त उसके समाधार के लिए मस्तिष्क को निर्णय लेने हेतु अभिप्रेरित करती है।

(श) बुद्धि और ज्ञान में अन्तर होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. बुद्धि की प्रमुख विशेषताओं को लिखिए।

____

____

______________________--

7.6 बुद्धि के प्रकार

क– अमूर्त बुद्धि

ख– सामाजिक बुद्धि

ग– मूर्त बुद्धि

7.6.1 अमूर्त बुद्धि

इस बुद्धि वाले व्यक्ति विचारो, कल्पनाओं एवं मानसिक प्रतिबिम्बों के आधार पर किसी भी प्रकार की समस्याओं का समाधान बहुत ही सरलता के साथ कर लेते हैं। इस प्रकार की बुद्धि से व्यक्ति शब्द, प्रतीक एवं अमूर्त वस्तुओं के आधार पर अच्छी तरह से विषय के सम्बन्ध में चिन्तन करते हैं। इन व्यक्तियों की शैक्षिक उपलब्धि अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक होती है। दार्शनिकों, कलाकारों, एवं कहानीकारों में इस प्रकार की बुद्धि अधिक पायी जाती है। लिखने, पढ़ने तथा तार्किक चिन्तन इत्यादि के लिए अमूर्त बुद्धि की आवश्यकता अधिक होती है।

7.6.2 सामाजिक बुद्धि

सामाजिक बुद्धि वाले व्यक्तियों में सबको आकर्षित करने एवं अपने को सबकी नजर में लोकप्रिय बनाने की क्षमता अधिक होती है। इस प्रकार की बुद्धि का सम्बन्ध सामाजिक अनुकूलन की योग्यता से है। सामाजिक बुद्धि वाले व्यक्ति अपने को समाज के अनुकूल व्यवस्थित एवं प्रतिस्थापित कर सकने की योग्यता रखते है। सामाजिक कार्यकर्ताओं, राजनीतिज्ञों एवं व्यवसायियों में इस प्रकार की बुद्धि बहुतायत पायी जाती है।

7.6.3 मूर्त बुद्धि

मूर्त बुद्धि का सम्बन्ध उस मानसिक क्षमता से होता है जिसके द्वारा व्यक्ति मूर्त वस्तुओं के बारे में विचार–विमर्श करता है, तथा इसके पश्चात् अपनी इच्छा एवं विषय की आवश्यकतानुसार उनमें बदलाव लाकर उन्हें उपयोग में लाने योग्य बनाता है। मूर्त बुद्धि को व्यावहारिक बुद्धि के नाम से भी जाना जाता है। जिस व्यक्ति में इस प्रकार की बुद्धि होती है, वे हस्तकलाओं में निपुण होते हैं और वे आगे चलकर इंजीनियर एवं कुशल कारीगर बनने में सफल होते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. मूर्त बुद्धि को स्पष्ट कीजिए

सही उत्तर चुनिए–

2. किस बुद्धि वाले व्यक्ति दार्शनिक होते हैं?

(a) अमूर्त बुद्धि वाले

(b) मूर्त बुद्धि वाले

(c) सामाजिक बुद्धि वाले

7.7 बुद्धि के सिद्धान्त

बुद्धि के प्रत्यय को समझने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अनेकों प्रकार के शोध किए हैं। बुद्धि क्या है। बुद्धि किससे संगठित है, बुद्धि किन–किन तत्वों से मिलकर बनी है। इस प्रकार की समस्या के समाधान के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अनेकों प्रकार के सिद्धान्त की खोज की। मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि की संरचना एवं कार्यप्रणाली को समझने के लिए विभिन्न प्रकार के विश्लेषणात्मक अध्ययन किए हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से बुद्धि के सिद्धान्तों का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से है :–

1. बुद्धि का एक–कारक सिद्धान्त
2. बुद्धि का द्वि–कारक सिद्धान्त
3. बुद्धि का बहु–कारक सिद्धान्त
4. बुद्धि का समूह–कारक सिद्धान्त
5. बुद्धि का पदानुक्रमिक सिद्धान्त

6. बुद्धि संरचना का सिद्धान्त

7.7.1 बुद्धि का एक–कारक सिद्धान्त

बुद्धि का एक–कारक सिद्धान्त अत्यन्त प्राचीनतम सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के प्रबल सर्मथकों में बिने, टरमैन तथा स्टर्न आदि मनोवैज्ञानिकों के नाम प्रसिद्ध है। इस सिद्धान्त के अनुसार बुद्धि एक अविभाज्य इकाई है। बुद्धि द्वारा ही सम्पूर्ण मानसिक क्रियाएँ नियन्त्रित होती हैं। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने इस सिद्धान्त को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि एक प्रकार की योग्यता के आधार पर सभी प्रकार के कार्य सम्पादित नहीं किए जा सकते हैं।

7.7.2 बुद्धि का द्वि–कारक सिद्धान्त

1904 ई0 में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मनोवैज्ञानिक स्पीयरमैन द्वारा किया गया था। स्पीयरमैन के अनुसार बुद्धि दो कारकों के योग से मिलकर बनी होती है –

सामान्य योग्यता कारक – इसे 'उ' कारक के नाम से भी इंगित किया जाता है। सामान्य योग्यता कारक मनुष्य में जन्मजात से पायी जाती है और यह सभी व्यक्तियों में भिन्न–भिन्न मात्रा में विद्यमान होती है। सभी प्रकार की मानसिक क्रियाओं में सामान्य योग्यता कारक की आवश्यकता होती है। मनुष्य अपने जीवन में इस योग्यता का प्रयोग सर्वाधिक करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. बुद्धि के एक–कारक सिद्धान्त के समर्थकों के नाम लिखिए।

____

____

____

2. द्वि–कारक सिद्धान्त के जनक कौन थे ?

____

____

____

(i) विशिष्ट योग्यता कारक – स्पीयरमैन महोदय ने विशिष्ट योग्यता कारक को 'S' से प्रदर्शित किया है। एस–कारक विशिष्ट योग्यताओं का एक समूह होता है। एस–कारक एक अर्जित योग्यता होती है। प्रत्येक व्यक्ति में विशिष्ट योग्यताएँ अलग–अलग होती हैं।

सभी व्यक्तियों में केवल एक सामान्य कारक एवं कई विशिष्ट कारक विद्यमान होते हैं। मनुष्यों में पाये जाने वाले सभी विशिष्ट कारक सामान्य कारक से सम्बन्धित होते हैं। अतः परिणाम स्वरूप कहा जा सकता है कि सामान्य कारक एवं विशिष्ट कारक में जितना उच्च सहसम्बन्ध होगा मनुष्य उस विशिष्ट कारक के क्षेत्र में उतनी अधिक सफलता प्राप्त कर सकेगा। जी–कारक एवं एस–कारक दोनों मिलकर ही किसी मानसिक कार्य को सफलतापूर्वक पूर्ण करने की क्षमता प्रदान करते हैं।

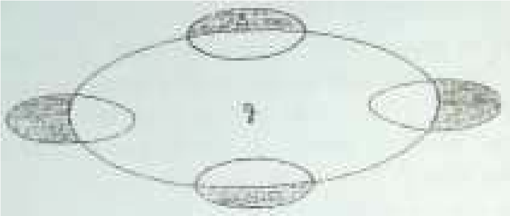

स्पीयरमैन के द्वि–कारक सिद्धान्त का रेखाचित्रीय निरूपण

सामान्य कारक तथा विशिष्ट कारक में विभेद

7.7.3 बुद्धि का बहु–कारक सिद्धान्त

बहु–कारक सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रो0 ई.एल. थार्नडाइक ने किया था। थार्नडाइक के इस सिद्धान्त के अनुसार बुद्धि असंख्य स्वतंत्र तत्वों अथवा कारकों से मिलकर बनी होती है। प्रत्येक स्वतंत्र कारक एक विशिष्ट मानसिक योग्यता का प्रतिनिधित्व करता है तथा ये कारक एक–दूसरे से स्वतंत्र भी होते हैं।

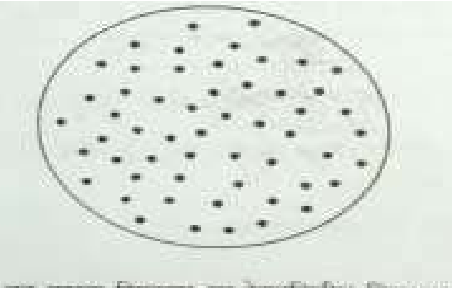

बहु-कारक सिद्धान्त का रेखाचित्रीय निरूपण

थार्नडाइक के अनुसार– ''मस्तिष्क का गुण स्नायुतन्तुओं की मात्रा पर निर्भर करता है''

According to Thorndike-" The quality of intellect depends upon the quantity of connections of neural connectors."

उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट हैं कि मस्तिष्क और स्नायु भंडार के अच्छे सम्बन्ध पर ही बुद्धि का अच्छा होना निर्भर करता है।

7.7.4 थर्स्टन का समूह–कारक सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को डॉ0 एच.एल. थर्स्टन ने 1938 में प्रतिपादित किया था। स्पीयरमैन का द्वि–कारक सिद्धान्त तथा थार्नडाइक का बहु–कारक सिद्धान्त बुद्धि सम्बन्ध के विशय में दो विपरीत विचार को वर्णित करते हैं। इन दोनों सिद्धान्तों के मध्य का सिद्धान्त समूह कारक सिद्धान्त कहलाता है। थर्स्टन महोदय ने अपने अध्ययन के माध्यम से बताया कि बुद्धि में अनेक प्रकार के तत्व विद्यमान होते है। आपने यह भी स्पष्ट किया कि बुद्धि को कई वर्गों/भागों में विभक्त किया जा सकता है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत बुद्धि का वर्णन कई कारकों के आधार पर किया जाता है। थर्स्टन के अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि बुद्धि न तो विशेषकर सामान्य कारक से निर्धारित होती है तथा न ही कई विशिष्ट कारकों के योग से बनी होती है। थर्स्टन ने अपने सिद्धान्त में मुख्य क्षमताओं का वर्णन किया है जो मूलतः छः थीं। इन योग्यताओं को उन्होंने प्राथमिक मानसिक योग्यताओं के नाम से इंगित किया। थर्स्टन महोदय ने समूह कारक सिद्धान्त के अन्तर्गत मुख्य रूप से सात प्रधान क्षमताओं का वर्णन किया है जिसके आधार पर उन्होंने प्रधान मानसिक क्षमताओं का परीक्षण बनाया था। ये प्रधान मानसिक क्षमताएँ निम्नवत हैं–

1. आंशिक कारक – N
2. शाब्दिक कारक – V
3. स्थानिक कारक – S
4. वाक्पटुता कारक – W
5. तार्किक कारक – R
6. स्मृति कारक – M
7. प्रत्यक्षीकरण की योग्यता – P

थर्सटन ने इन्हें प्राथमिक मानसिक योग्यता कहा है क्योंकि प्रत्येक जटिल मानसिक कार्य में इन छहों कारक की कुछ न कुछ आवश्यकता पड़ती है। आपका मत है कि इन समस्त मूल योग्यताओं में अलग – अलग मात्रा में परस्पर सह सम्बन्ध होता है।

आपके अनुसार दो मूल कारकों में जितना अधिक सहसम्बन्ध होगा उनके बीच अधिगम का स्थानान्तरण उतना ही अधिक होगा।

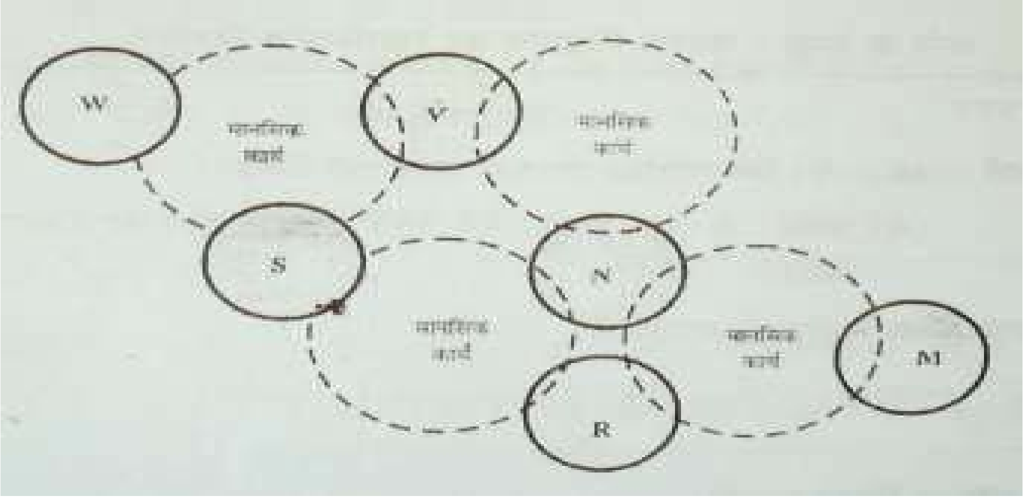

समूह कारक सिद्धान्त का रेखाचित्रीय निरूपण

7.7.5 बुद्धि का पदानुक्रमिक सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन बर्ट और वर्नर ने किया था। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन स्पीयरमैन के उ-कारक सिद्धान्त के तत्वों, थर्स्टन के समूह कारक सिद्धान्त के तत्वों एवं बहुकारक सिद्धान्त के तत्वों के संयुग्मन से बुद्धि के एक नवीन सिद्धान्त का अविश्कार हुआ जो पदानुक्रमिक सिद्धान्त के नाम से प्रचलित हुआ।

पदानुक्रमिक सिद्धान्त में बुद्धि की तुलना एक पिरामिड से की गई है। जिसमें बुद्धि के भिन्न–भिन्न कारकों को एक पदानुक्रम के रूप में व्यवस्थित किया गया है।

1. पदानुक्रम के सबसे ऊपरी भाग पर स्पीयर मैन के 'उ' कारक को स्थान दिया गया है।

2. पदानुक्रम के दूसरे स्तर पर थर्सटन के समूह कारक के समान दो विस्तृत समूह कारक होते है (1) शाब्दिक शैक्षिक कारक एवं (2) व्यावहारिक यांत्रिक कारक।

3. उपरोक्त वर्णित दोनों कारकों को पुनः शाब्दिक, आंकिक, स्थानिक जैसे छोटे समूह कारकों में विभक्त किया जा सकता है। छोटे समूह कारकों को विशिष्ट मानसिक कार्यों से सम्बन्धित विशिष्ट कारकों के रूप में बाँटा जा सकता है।

वर्नर के पदानुक्रमिक मॉडल का आकार एक वंशवृक्ष के समान है जहाँ उ- कारक सबसे ऊपर तथा ए-कारक सबसे नीचे तथा अन्य संकीर्ण समूह कारकों को इन दोनों के मध्य में स्थान प्रदान किया गया है।

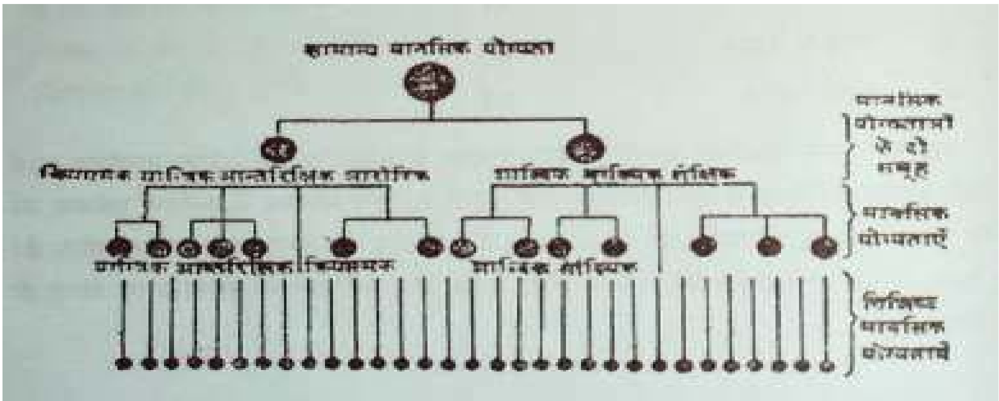

वर्नर के समूह - कारक सिद्धान्त का रेखाचित्रीय निरूपण

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. समूह कारक सिद्धान्त किस सन् में प्रतिपादित हुआ तथा इसके समर्थक कौन थे?

____

____

____

सही उत्तर पर निशान लगाइये–

7. पदानुक्रम सिद्धान्त के अन्तर्गत ए-कारक को कहाँ स्थान प्राप्त है–

a – सबसे ऊपर

b – मध्य में

c – सबसे नीचे

7.7.6 बुद्धि संरचना का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन जे0 पी0 गिलफोर्ड एवं उनके सहयोगियों द्वारा किया गया। बुद्धि के त्रि–विनीय प्रारूप को जे0 पी0 गिलफोर्ड महोदय द्वारा प्रस्तुत किया। इस आविष्कार में बहुकारक सिद्धान्त के प्रबल समर्थकों के समान ही कारक

विश्लेषण की तकनीकी का उपयोग किया गया है। गिलफोर्ड के अनुसार बुद्धि में तीन विमाएँ दृष्टिगोचर होती हैं :–

1. **बुद्धि की पहली विमा** – मानसिक कार्य करते समय बुद्धि की प्रथम विमा में निहित विषय वस्तु के रूप में इस विमा को परिभाषित किया गया है। इसमें चार प्रकार की विषय वस्तु निहित हो सकती है।

(i) **आकृतिक विषय वस्तु** – इसका सम्बन्ध आकृतियों या चित्रों से है।

(ii) **सांकेतिक विषय वस्तु** – इसमें प्रयुक्त विषय वस्तु का सम्बन्ध संकेतों प्रतीकों, चिन्हों, अंको, अक्षरों इत्यादि से होता है।

(iii) **शाब्दिक विषय वस्तु** – इसका सम्बन्ध शाब्दिक अर्थों एवं विचारों से होता है।

(iv) **व्यावहारिक विषय वस्तु** – व्यावहारिक विषय वस्तु का सम्बन्ध व्यक्ति एवं आंतरिक व्यवहार से होता है।

2- **बुद्धि की दूसरी विमा** – बुद्धि की दूसरी विमा के अन्तर्गत मानसिक कार्य को करते समय उसमें निहित संक्रियाएँ आती हैं। इन संक्रियाओं को पांच भागों में वर्गीकृत किया गया है :–

(1) **संज्ञान** – इसका सम्बन्ध खोज, पुनः खोज या पहचान की क्षमता से है।

(2) **स्मृति** – इसका सम्बन्ध सीखे गये ज्ञान को धारण करने से है।

(3) **अभिसारी चिन्तन** – इसके अन्तर्गत व्यक्ति समस्या के समाधान के लिए चिन्तन करता है जो सही व सर्वमान्य हो।

(4) **अपसारी चिन्तन** – इसमें व्यक्ति विभिन्न दिशाओं में सोच – समझकर परिणाम प्राप्त करता है। इसका परिणाम सही, मौलिक तथा नवीन होता है।

(5) **मूल्यांकन** – मूल्यांकन के अन्तर्गत व्यक्ति उपलब्ध संसाधनों एवं सूचनाओं के माध्यम से निर्णय लेने व निष्कर्ष तक पहुँचने की प्रक्रिया है।

3. बुद्धि की तीसरी विमा – विभिन्न प्रकार की विशय वस्तुओं एवं विभिन्न मानसिक संक्रियाओं के करने के परिणामस्वरूप छह प्रकार के बौद्धिक परिणाम या उत्पादन प्राप्त होते हैं। प्राप्त उत्पादों को गिलफोर्ड ने छह भागों में विभेदित किया है :–

(1) इकाई

(2) वर्ग

(3) सम्बन्ध

(4) प्रणाली

(5) रूपान्तरण

(6) निहितार्थ

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. बुद्धि की दूसरी विमा के अन्तर्गत आने वाली पाँच सक्रियाओं के नाम लिखिए।

____

____

____

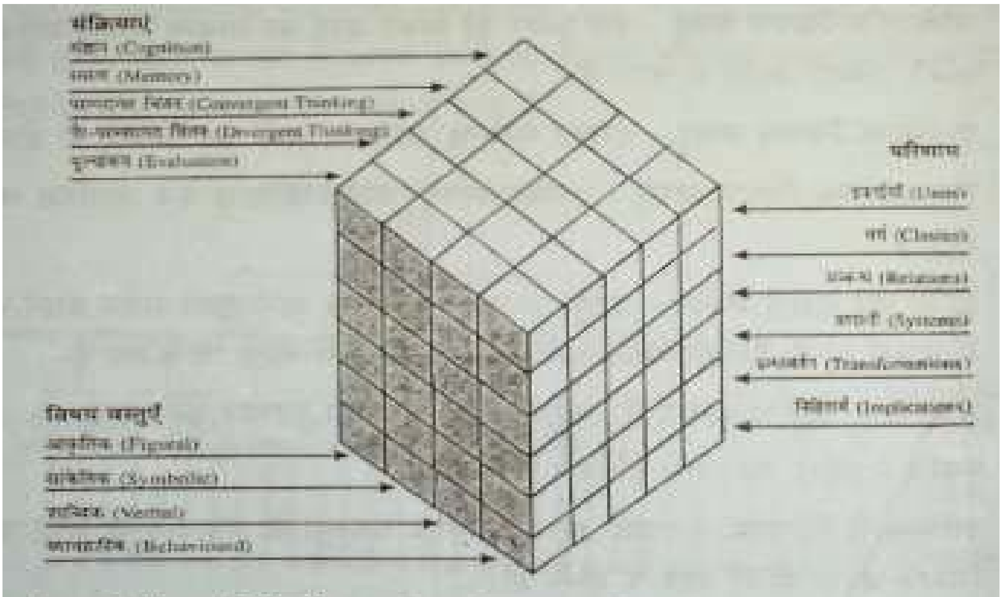

गिलफोर्ड का त्रिविमीय बुद्धि संरचना मॉडल

गिलफोर्ड के त्रिविमीय बुद्धि संरचना मॉडल में चार (4) प्रकार की विषयवस्तु, पाँच (5) प्रकार की मानसिक संक्रियाएँ एवं छः (6) प्रकार के परिणामों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किया कि व्यक्तियों में कुल 120 मानसिक योग्यताएँ सन्निहित हो सकती है जो – 120 भिन्न–भिन्न कार्यों को संचालित एवं सम्पादित करने में मदद कर सकती हैं। ($4\times5\times6=120$)

7.8 बुद्धि का मापन

बुद्धि का मापन भी सभी प्रकार के गुणों, योग्यताओं एवं व्यवहारों के समान किया जा सकता है। बुद्धि को मापने के लिए बुद्धि परीक्षणों का निर्माण यूरोपीय देशों के अलावा भारत में भी किया जा चुका है। प्राचीन काल में भारतीय समाज एवं उसकी व्यवस्थाओं में बुद्धि का मापन यन्त्रों एवं मापनी की सहायता से सम्भव नहीं था परन्तु भारतीय ज्योतिष विज्ञान व्यक्ति के आकार–प्राकर, कद–काठी, मस्तिष्क इत्यादि को देखकर ही इस बात की भविष्यवाणी करते थे कि अमुख बालक तीव्र बुद्धि का है या सामान्य बुद्धि का। बुद्धि के स्वरूप एवं उसकी मात्रा का अध्ययन करने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के परीक्षण एवं प्रयोग किए। बुद्धि परीक्षणों के निर्माण के सम्बन्ध में उसमें इतिहास का संक्षेप में वर्णन किया जा रहा है।

7.8.1 यूरोपीय परिप्रेक्ष्य में बुद्धि परीक्षणों का संक्षिप्त इतिहास

यूरोपीय परिदृश्य में सन् 1879 ई0 में प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक वुण्ट ने सन् 1879 ई0 में बुद्धि को यंत्रो की सहायता से मापना शुरू किया था। इनके कार्यों से प्रभावित होकर फ्रांस के मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड बिने तथा अमेरिका के थार्नडाइक एवं टरमैन महोदय ने बुद्धि परीक्षण के सम्बन्ध में बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किए। इनके अलावा इस क्षेत्र के अन्य मनोवैज्ञानिकों में गाल्टन, कैटेल, पीयरसन इत्यादि ने उल्लेखनीय एवं प्रषंसनीय कार्य किया। इनके द्वारा निर्मित परीक्षणों के माध्यम से मानसिक योग्यता का मापन सम्भव था। उपरोक्त मनोवैज्ञानिकों द्वारा दिए गये परीक्षणों की सहायता से बुद्धि का मापन नहीं किया जा सकता था। बुद्धि को मापने की दिशा में पहला ठोस कदम उठाने वाले मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड बिने थे। अल्फ्रेड बिने ने सन् 1905 ई0 में मनोवैज्ञानिक साइमन की सहायता से भिन्न–भिन्न आयु समूह वाले बालकों की बुद्धि परीक्षा हेतु एक प्रश्नावली का निर्माण किया जिसे बिने साइमन स्केल नाम दिया गया। बिने परीक्षण का द्वितीय संस्करण, पहले की कमियों को पूरा करने का श्रेय गेलार्ड के बाद टरमन (1916) को दिया जाता है। इस संशोधित बुद्धि परीक्षण का नाम स्टैनफोर्ड बिने परीक्षण रखा गया। इसके पश्चात् भी इस परीक्षण में अनेकों प्रयोगों द्वारा निरन्तर सुधार किया जाता रहा। मानसिक परीक्षणों के क्षेत्र में वेश्लर (1939) द्वारा भी बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया गया।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. सर्वप्रथम सन 1879 में किस मनोवैज्ञानिक ने बुद्धि को यंत्रों की सहायता से मापना शुरू किया था?

____

____

____

10. बुद्धि परीक्षण पर कार्य करने वाले दो मनोवैज्ञानिकों के नाम लिखिए।

____

____

____

7.8.2 भारतीय परिप्रेक्ष्य में बुद्धि परीक्षणों का संक्षिप्त इतिहास भारतीय सन्दर्भ में

भारत में बुद्धि परीक्षण के निर्माण की शुरूआत सन् 1922 में हुआ था। विभिन्न प्रकार के बुद्धि परीक्षणों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् वर्णित है।

1. **सी. एच. राइस** द्वारा (1922) बिने परीक्षण का भारतीय रूपान्तरण करके इस क्षेत्र में बहुत ही उल्लेखनीय कार्य किया गया और इस स्केल का नाम हिन्दुस्तानी बिने परफारमेन्स स्केल रखा गया।
2. बम्बई के **वी. वी. कामथ** महोदय को राइस द्वारा निर्मित परीक्षण की त्रुटियों को दूर करने एवं उसमें सुधार करने का श्रेय 1935 ई0 में प्राप्त हुआ। इन्होंने बम्बई कर्नाटक रिवीजन ऑफ बिने – परीक्षण का निर्माण किया।
3. सन् 1936 में **एस. जलोटा** ने बर्ट तथा टरमन के परीक्षणों के आधार पर अंग्रेजी भाषा में एक सामूहिक बुद्धि परीक्षण का निर्माण किया।
4. मनोविज्ञानशाला, उ. प्र. इलाहाबाद ने विभिन्न आयु वर्ग के बालकों के लिए सामूहिक शाब्दिक बुद्धि परीक्षण का निर्माण किया।
5. ''सामान्य मानसिक योग्यता परीक्षण'' का निर्माण सन् 1960 में डॉ. एम. सी. जोशी द्वारा किया गया।

6. ''सामूहिक बुद्धि परीक्षण'' का निर्माण सन् 1961 में मेहता जी के द्वारा किया गया।

7. सन् 1971 में **एस. के. कुलश्रेष्ठ** द्वारा बिने–साइमन परीक्षण का भारतीय अनुकूलन किया गया था।

8. सन् 1987 में **एस. के. पाल** तथा **के. एस. मिश्रा** द्वारा सन् 1887 में सामान्य बुद्धि परीक्षण का निर्माण किया गया।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11- सामान्य मानसिक योग्यता परीक्षण का निर्माण किसने किया।

a- डॉ. एम. सी. जोषी

b- डॉ. मेहता

c- एच. राइस

7.9 मानसिक आयु व बुद्धि लब्धि

सन् 1908 में मानसिक आयु का विचार बिने साइमन ने दिया था। मानसिक आयु का सम्बन्ध उस आयु से है जो बुद्धि या मानसिक परीक्षण से निर्धारित होती है। किसी भी वास्तविक आयु का औसत मानसिक स्तर मानसिक विकास की ओर संकेत करता है।

गेट्स एवं अन्य के अनुसार – '' मानसिक आयु हमें किसी व्यक्ति की बुद्धि परीक्षा के समय बुद्धि परीक्षा द्वारा ज्ञात की जाने वाली सामान्य मानसिक योग्यता के विशय में बताती है।''

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

12. मानसिक आयु को परिभाषित कीजिए–

____

____

____

7.9.1 बुद्धि लब्धि का अर्थ :

बुद्धि लब्धि, बालक की सामान्य योग्यता के विकास की गति को व्यक्त करती है। टरमन महोदय ने बुद्धि को मापने के लिए बुद्धि लब्धि का अविष्कार किया था। बालक की वास्तविक आयु एवं मानसिक आयु ज्ञात होने पर ही बुद्धि लब्धि ज्ञात की जा सकती है।

बुद्धि लब्धि का सूत्र

$$IQ = \frac{M.A.}{C.A.} \times 100$$

I.Q. बुद्धि लब्धि, M.A. – मानसिक आयु C.A. – वास्तविक आयु

उदाहरण के लिए यदि किसी बालक की मानसिक आयु 14 वर्ष है और उसकी वास्तविक आयु 10 वर्ष है तो बुद्धि लब्धि को निम्न प्रकार से ज्ञात किया जा सकता है।

$$IQ = \frac{M.A.}{C.A.} \times 100$$

$$IQ = \frac{14}{10} \times 100$$

7.9.2 बुद्धि लब्धि का वर्गीकरण

बुद्धि लब्धि के वर्गीकरण के आधार पर व्यक्ति की बुद्धि को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया है–

बुद्धि लब्धि	**वर्ग**
140 से अधिक	प्रतिभाशाली
121–140	प्रखर बुद्धि
111–120	तीव्र बुद्धि
91–110	सामान्य बुद्धि
81–90	मन्द बुद्धि
71–80	अल्प बुद्धि
71 से कम	जड़ बुद्धि

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13. बुद्धि लब्धि का सूत्र लिखिए।

____

____

____

14. 140 से अधिक I.Q. वाले बालक होते हैं–

____

____

____

7.10 बुद्धि परीक्षणों के प्रकार

मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि को मापने के लिए अनेक प्रकार के बुद्धि परीक्षणों का निर्माण किया। बुद्धि परीक्षण के निर्माण के लिए मनोवैज्ञानिकों ने प्रशासन, भाषायी तथा चित्रीय माध्यम से समस्याओं के प्रस्तुतीकरण के आधार पर व्यक्त किया है। अतः बुद्धि परीक्षणों को प्रशासनीक दृष्टि एवं प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से अलग–अलग दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है–

(i) प्रशासन की दृष्टि से बुद्धि परीक्षण :– प्रशासन की दृष्टि से बुद्धि परीक्षण को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

(क) व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण

(ख) सामूहिक बुद्धि परीक्षण

(ii) प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से बुद्धि परीक्षण :– प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से बुद्धि परीक्षण को दो भागों में विभक्त किया गया है।

(क) शाब्दिक बुद्धि परीक्षण

(ख) अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण

7.10.1 व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण

एक ऐसा परीक्षण जिसे एक ही समय में एक ही व्यक्ति पर प्रशासित किया जा सकता है, उन्हें वैयक्तिक बुद्धि परीक्षण कहते हैं। इस प्रकार का परीक्षण शाब्दिक एवं अशाब्दिक दोनों हो सकता है। इस विधि के अन्तर्गत परीक्षणकर्ता व्यक्ति को अपने सामने बैठकार बड़ी ही सरलता के साथ परीक्षण को प्रशासित करता है। व्यक्ति बिना किसी अवरोध के उन परीक्षणों पर अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करता है। इस प्रकार के परीक्षण के लिए स्टैनफोर्ड बिने बुद्धि परीक्षण, भाटिया बैटरी बुद्धि परीक्षण, वैश्लर बुद्धि परीक्षण आदि का प्रयोग किया जाता है।

7.10.2 सामूहिक बुद्धि परीक्षण

सामूहिक बुद्धि परीक्षण के अन्तर्गत एक ही समय में एक से अधिक व्यक्तियों की मानसिक योग्यता का मापन सरलता एंव सुगमता के साथ पूर्ण किया जा सकता है। प्रथम विश्वयुद्ध के समय इस प्रकार के बुद्धि परीक्षणों का प्रयोग सैनिकों को भर्ती करने के लिए किया गया था। इसमें दो प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग किया गया। (i) आर्मी अल्फा परीक्षण का प्रयोग शिक्षित व्यक्तियों के लिए (ii) आर्मी बीटा परीक्षण का प्रयोग अशिक्षित व्यक्तियों के लिए किया गया था। इस परीक्षण की मुख्य विशेषता यह है कि कम समय में अधिक से अधिक व्यक्तियों का परीक्षण किया जा सकता है, जिसके कारण धन, श्रम एवं समय की बचत होती है। सामूहिक परीक्षणों के मुख्य उदाहरण के अन्तर्गत ऑटिस, जलोटा, सोहनलाल एवं जोशी के परीक्षण आते हैं।

7.10.3 शाब्दिक बुद्धि परीक्षण

इस परीक्षण के अन्तर्गत शब्दों एवं वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। शाब्दिक बुद्धि परीक्षण का प्रयोग वैयक्तिक एंव सामूहिक दोनों वर्गो में किया जा सकता है। इस प्रकार के परीक्षण का प्रयोग केवल शिक्षित व्यक्तियों पर ही किया जा सकता है। इन

परीक्षणों का प्रशासन छोटे बच्चों एवं अशिक्षित व्यक्तियों पर नहीं किया जा सकता है। मोहसिन एवं जोशी के परीक्षण शाब्दिक परीक्षण के प्रमुख उदाहरण हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

15. भाटिया बैटरी बुद्धि परीक्षण का प्रयोग किस बुद्धि परीक्षण के लिए किया जाता है?

____

____

____

16. सामूहिक बुद्धि परीक्षण के प्रमुख उदाहरण लिखिए।

____

____

____

7.10.4 अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण

जैसा की नाम से ही स्पष्ट है इसे प्रकार के परीक्षण मे शब्द एवं वाक्य (भाषा) का प्रयोग नहीं किया जाता। इस प्रकार का परीक्षण का प्रयोग शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों प्रकार के व्यक्तियों पर प्रशासित किया जा सकता है। इस परीक्षण के निर्माण में ज्यामितीय चित्रों, आरेखों, अमूर्त चित्रों आदि का प्रयोग किया जाता है। अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण का प्रयोग शिक्षित, अशिक्षित, व्यक्तियों के साथ–साथ गूँगे–बहरे व्यक्तियों के ऊपर भी किया जा सकता है। इस प्रकार के परीक्षण का प्रयोग सावधानीपूर्वक एवं कुशल परीक्षणकर्ता के द्वारा ही सम्भव है। इस प्रकार के परीक्षण के निर्माण की प्रक्रिया काफी क्लिष्ट होती है और परीक्षण पर प्रशासन के पश्चात उससे प्राप्त अपेक्षित परिणामों के लिए उपयुक्त परीक्षणकर्ता न होने के कारण परिणाम भी प्रभावित हो सकते हैं। इस प्रकार के परीक्षण के प्रमुख उदाहरण हैं–पास–एलांग–टेस्ट, (Pass Along Test) एवं कोहस ब्लाक डिजाइन (Kohs Block Design) पिक्चर कम्प्लीषन टेस्ट (Picture Completion Test) आदि

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

17. अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण में प्रयोग आने वाले एक–एक परीक्षण का नाम लिखिए।

———————————————————————————

———————————————————————————

———————————————————————————

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

18. आर्मी अल्फा एवं आर्मी बीटा परीक्षण का प्रयोग किस प्रकार के व्यक्तियों पर करने के लिए उपयुक्त है।

7.11 बुद्धि परीक्षणों का महत्व

शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में बुद्धि परीक्षणों का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। बुद्धि परीक्षणों की सहायता से छात्रों को अपनी शिक्षा, रोजगार, अनुसंधान इत्यादि का चुनाव करने में अत्यन्त सुविधा प्राप्त होती है। बौद्धिक परीक्षणों से ही बच्चों, युवाओं इत्यादि का मानसिक मापन करके उन्हें भविष्य के लिए उचित मार्गदर्शन की सहायता प्रदान किये जा सकते हैं। बुद्धि परीक्षणों के कुछ महत्वपूर्ण उपयोग निम्नानुसार वर्णित हैं–

a. बुद्धि परीक्षण से किसी भी व्यक्ति की मानसिक योग्यता के स्तर के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बातें ज्ञात की जा सकती है।

b. परीक्षणोपरान्त बालकों की योग्यता का अनुमान लगाकर उन्हें उनके बुद्धि स्तर के अनुरूप कार्य करने हेतु परामर्श दिया जा सकता है।

c. मानसिक योग्यता के आधार पर एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से किस प्रकार भिन्न है, इन परीक्षणों की सहायता से आसानी से अन्तर ज्ञात किया जा सकता है।

d. बुद्धि परीक्षणों के माध्यम से बालकों की मानसिक योग्यता का परीक्षण करके उन्हें भविष्य में सफलता प्राप्त करने के लिए परामर्श दिया जा सकता है।

e. विशेष प्रकार की शिक्षा या व्यावसायीकरण शिक्षा के लिए सुयोग्य छात्र–छात्राओं का चयन इन परीक्षणों के माध्यम से किया जा सकता है।

f. सामान्य, श्रेष्ठ तथा मानसिक मन्द बालकों के लिए विभिन्न प्रकार के योजनाओं को बनाने में बुद्धि परीक्षण लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं।

g. मानसिक योग्यताओं के आधार पर व्यक्तियों की उच्च बुद्धि, सामान्य या मन्द बुद्धि में विभक्त करने के लिए बुद्धि परीक्षण का प्रयोग किया जा सकता है।

h. शैक्षिक समस्याओं के समाधान तथा मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में बुद्धि परीक्षण उपयोगी हो सकते हैं।

7.12 सारांश

प्रस्तुत अध्याय में बुद्धि से सम्बन्धित समस्त पहलुओं पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। बुद्धि का अध्ययन एक सामान्य योग्यता के रूप में किया जाता है। जो व्यक्ति के संज्ञानात्मक पक्ष में पायी जाती हैं। सभी व्यक्तियों में बुद्धि की मात्रा अलग–अलग होती है। प्रतिभाशाली, सामान्य तथा कमजोर बुद्धि वाले बालक इसके उदाहरण हैं। बुद्धि अधिगम की क्षमता है। बुद्धि के सम्बन्ध में कई प्रकार के सिद्धान्त मनोवैज्ञानिकों के द्वारा दिए गये हैं। गिलफोर्ड ने अपने बुद्धि सिद्धान्त में पाँच प्रकार के मानसिक क्रियाओं का वर्णन किया है। मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि के मापन के सम्बन्ध में बताया कि बुद्धि परीक्षणों के द्वारा बुद्धि लब्धि का मापन किया जा सकता है। अतः इस इकाई के अन्तर्गत बुद्धि के कार्यात्मक, संरचनात्मक एवं क्रियात्मक पक्ष के अध्ययन पर विषेश बल दिया गया है।

7.13 अभ्यास कार्य

(1) बुद्धि के विभिन्न प्रकारों का सविस्तार वर्णन कीजिए।

(2) बुद्धि के संरचना सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।

(3) बुद्धि को परिभाषित कीजिए तथा द्वि–कारक सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।

(4) बुद्धि लब्धि क्या है तथा बुद्धि लब्धि को वर्गीकृत कीजिए।

(5) बुद्धि परीक्षणों के प्रकारों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

(6) बुद्धि परीक्षणों के इतिहास का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

7.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Agarwal, J.C. (1955) : Essentials of Educational Psychology, Vikas Publishing House, Private Limited, New Delhi.

Bhatia, H.R. (1977) : A Text book of Educational Psychology, Macmillian, New Delhi.

Chauhan, S. S. (1988) : Advanced Educational Psychology, Vikas Publishing, New Delhi.

Srivastava, D. S. (2008) : Educational Psychology, Shree Publishers & Distributors, New Delhi.

गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता, अलका (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

पाण्डेय, के. पी. (2007) : नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,

पाण्डेय, रामशकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।

सिंह, आर. एन. (2001) : आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

सिंह, अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी. बी. प्रिन्टर्स, पटना।

7.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (अ) बुद्धि आनुवांशिक एवं जन्मजात होती है।

   (ब) बुद्धि से ही व्यक्ति समस्याओं का समाधान करते हुए किसी भी परिस्थिति के सापेक्ष अपने व्यवहार का संगठन एवं उसमें परिमार्जन करता है।

   (स) बुद्धि सीखने की क्षमता है।

   (द) बुद्धि में आत्म निरीक्षण की शक्ति समाहित होती है।

   (य) बुद्धि समस्या को समझने के उपरान्त उसके समाधान के लिए मस्तिष्क को निर्णय लेने हेतु अभिप्रेरित करती है।

2. मूर्त बुद्धि

3. अमूर्त बुद्धि वाले

4. स्पीयरमैन

5. बिने, टरमैन तथा स्टर्न

6. सन् 1938 तथा इसके समर्थक डॉ. एस. एल. थर्स्टन

7. सबसे नीचे

8. संज्ञान, स्मषति, अभिसारी चिन्तन, अपसारी चिन्तन एवं मूल्यांकन

9. मनोवैज्ञानिक वुण्ट

10. टरमन एवं वैश्लर

11. डॉ. एम. सी. जोशी

12. ''मानसिक आयु हमें किसी व्यक्ति की बुद्धि परीक्षा द्वारा ज्ञात की जाने वाली सामानय मानसिक योग्यता के विषय में बताती है।''

13. $IQ = \frac{M.A.}{C.A.} \times 100$

14. प्रतिभाशाली

15. व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण

16. सामुहिक बुद्धि परीक्षण के प्रमुख उदाहरण – ऑटिस, जलोटा, सोहनलाल तथा जोशी में बुद्धि परीक्षण है।

17. तथा कोह्स ब्लाक डिजाइन

18. आर्मी अल्फा परीक्षण का प्रयोग शिक्षित व्यक्तियों के लिए तथा आर्मी बीटा परीक्षण का प्रयोग अशिक्षित व्यक्तियों के लिए किया जाता है।

इकाई –8 व्यक्तित्व : सम्प्रत्यय, सिद्धान्त एवं मापन

इकाई की रूपरेखा –

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 व्यक्तित्व का अर्थ

8.4 व्यक्तित्व की परिभाषाएँ

8.5 व्यक्तित्व के प्रमुख सिद्धान्त

8.5.1 व्यक्तित्व का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त

8.5.2 व्यक्तित्व का शरीर रचना सिद्धान्त

8.5.3 व्यक्तित्व का विशेषक सिद्धान्त

8.5.4 व्यक्तित्व का माँग सिद्धान्त

8.6 व्यक्तित्व के प्रकार

8.6.1 शरीर रचना के आधार पर

8.6.2 सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर

8.6.3 मूल्य के आधार पर

8.6.4 भारतीय दृष्टिकोण के आधार पर

8.7 व्यक्तित्व के आदर्श गुण

8.8 व्यक्तित्व मापन विधियों के प्रकार

8.9 आत्मनिष्ठ विधियाँ

8.9.1 जीवन इतिहास विधि

8.9.2 प्रश्नावली विधि

8.9.3 साक्षात्कार विधि

8.9.4 आत्मकथा लेखन विधि

8.10 वस्तुनिष्ठ विधियाँ

8.10.1 नियन्त्रित परीक्षण विधि

8.10.2 मापन रेखा विधि

8.10.3 समाजमिति विधि
8.11 प्रक्षेपी विधियाँ
8.11.1 प्रक्षेपण विधियों के गुण
8.11.2 प्रक्षेपण विधियों के दोष
8.12 प्रक्षेपी विधियों के प्रकार
8.12.1 शब्द साहचर्य परीक्षण
8.12.2 वाक्यपूर्ति परीक्षण
8.12.3 रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण
8.12.4 प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण
8.12.5 बालक अन्तर्बोध परीक्षण
8.13 सारांश
8.14 अभ्यास कार्य
8.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें
8.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.1 प्रस्तावना

प्रकृति परिवर्तनशील है और इस परिवर्तनशील समाज में मानव सभ्यता के विकास के साथ ही व्यक्ति की बोली–भाषा, जीवनचर्या इत्यादि में निरन्तर परिवर्तन होते आ रहे हैं। मानव के व्यक्तित्व पर उसके आचरण एवं वातावरण का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है। व्यक्तित्व शब्द जैसे ही हमारे कान के द्वारा मस्तिष्क तक पहुँचती है वैसे ही एक सम्प्रत्यात्मक संरचना दिमाग में बनने लगती है। किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान उसके शारीरिक संरचना, रहन–सहन, परिधान एवं उसके आचरण से प्रकट होती है व्यक्ति के आचरण में शारीरिक, मानसिक और सामाजिक गुण सन्निहित होते हैं। शिक्षा के द्वारा ही किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास किया जा सकता है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जो बुरे से बुरे इन्सान को भी सद्मार्ग पर चलने योग्य बनाता है। व्यक्तित्व विकास के विभिन्न पक्षों जैसे– सामाजिक, संवेगात्मक, चारित्रिक, संज्ञानात्मक के विषय में आप पूर्व में अध्ययन कर चुके होंगे। ये सभी पक्ष मानव के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने में सहायक होते हैं। व्यक्तित्व मनुष्य में

शीलगुणों का एक संगठित रूप है। व्यक्तित्व का मापन करना मनोविज्ञान के क्षेत्र में पूर्व से ही एक शोध का विषय रहा है। आधुनिक समय में व्यक्तित्व को मापने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अनेक प्रकार के परीक्षणों एवं मापनियों का निर्माण किया है। इस इकाई के अन्तर्गत हम व्यक्तित्व के अर्थ, प्रकृति, अवधरणा एवं सिद्धान्तों के साथ–साथ व्यक्तित्व के विभिन्न प्रकारों, व्यक्तित्व का मापन कैसे करते हैं उसको समझने व जानने का प्रयास करेंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि :

1. आपको व्यक्तित्व के सम्प्रत्यय के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. व्यक्तित्व के विभिन्न सिद्धान्तों के आधार पर विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व के विषय में गहनता से ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. व्यक्तित्व के वर्गीकरण के आधार पर विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. व्यक्तित्व की विशेषताओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5. व्यक्तित्व के विभिन्न मापन उपकरणों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
6. व्यक्तित्व मापन के उपकरणों को प्रयोग में कैसे लाया जाय इससे अवगत हो सकेंगे।

8.3 व्यक्तित्व का अर्थ

व्यक्तित्व शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'परसोना' शब्द से हुई है। परसोना का अर्थ होता है 'मुखौटा'। प्राचीन काल में परसोना शब्द से आशय उस परिधान से था जिसे रंगमंच के कलाकार पहन कर किसी व्यक्ति या पात्र का अभिनय करते थे। अतः शाब्दिक अर्थ व्यक्ति का वाह्य दिखावा मात्र था। इस प्रकार व्यक्तित्व शब्द बाह्य गुणों की ओर संकेत करता था। सामान्यता व्यक्तित्व की पहचाान बाह्य गुणों के आधार पर ज्ञात की जाती है परन्तु सामान्यतया व्यक्तित्व का आकलन मनुष्य की शारीरिक बनावट, रंग–रूप, वेशभूषा एवं उसके बात–चीत करने के व्यवहार से लगाया जाता है। व्यक्तित्व का अर्थ बहुत ही व्यापक है। प्रायः व्यक्ति के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति उसके आचरण, व्यवहार और नित्य किये जा रहे कार्यों से भी लगाया जा सकता है। व्यक्तित्व शब्द का उच्चारण करते ही मानव के मन–मस्तिष्क में एक सम्प्रत्यय बनने लगता है जो संगठनात्मक होता है। अतः हम निष्कर्ष स्वरूप कह सकते हैं कि व्यक्तित्व किसी भी व्यक्ति में पाये जाने वाले गुणों का समग्र संगठन है।

इन अर्थों में व्यक्तित्व शब्द का अभिप्राय काफी संकुचित हो जाता है जब कि व्यक्तित्व का अर्थ बहुत व्यापक है। व्यक्तित्व के अर्थ को व्यापकता की दृष्टि से समझने के लिए विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई परिभाषा का विश्लेषण करने से उसके सम्बन्ध में गहराई से ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

8.4 व्यक्तित्व की परिभाषाएँ

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व की परिभाषाएँ निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त की हैं–

1. **गिलफोर्ड के अनुसार –** '' व्यक्तित्व गुणों का समन्वित रूप है।''

"Personality is an integrated pattern of traits."

-Guilford

2. **वुडवर्थ के अनुसार** – ''व्यक्ति के व्यवहार की विशेषता ही व्यक्तित्व है''

"Personality is the total quality of an individual's behaviour"

-Wood worth

3. **आलपोर्ट के अनुसार –** ''व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनो–शारीरिक गुणों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के साथ उसका अद्वितीय समायोजन निर्धारित करता है।''

"Personality is the dynamic organisation within the individual of those psychophysical system that determine his unique adjustments to his environment."

-Allport

4. **वेलेनटीन के अनुसार** – '' व्यक्तित्व जन्मजात और अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।''

Personality is the sum total of innate and acquired dispositions."

-Valentine

5. **आईजेंक के अनुसार** – ''व्यक्ति के चरित्र, स्वभाव, बुद्धि तथा शारीरिक गठन द्वारा निर्मित अपेक्षाकृत उस स्थायी या टिकाऊ संगठन को व्यक्तित्व कहा जाता है जिस पर उसका वातावरण से विलक्षण समायोजन निर्भर होता है।''

"The moreor less stable and enduring organisation of a person's character, temperament, intellect and physique that determines his unique adjustment to his environment is called personality." **-H.J. Eysenck**

6. **ड्रेवर के अनुसार** –'' व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग, व्यक्ति के उन शारीरिक, मानसिक, नैतिक और सामाजिक गुणों के सुसंगठित और गत्यात्मक संगठन के लिए किया जाता है, जिसे वह अन्य व्यक्तियों के साथ अपने सामाजिक जीवन के आदान–प्रदान में प्रदर्शित करता है।''

"Personality is a term used for the integrated and dynamic organisation of the physical, mental, moral and social qualities of the individual, as that manifests itself to other people, in the give and take of social life."

- Dreve

कैटल के अनुसार – '' व्यक्तित्व वह गुण है जिसके आधार पर यह भविश्य कथन करना सम्भव हो कि व्यक्ति किसी दी हुई परिस्थिति में किस तरह का आचरण प्रदर्षित करेगा।

"Personality is that which permits prediction of what a person will do in a given situation."

-Roymond, B. Cattel

8.5 व्यक्तित्व के प्रमुख सिद्धान्त

व्यक्तित्व के प्रत्यय की अवधारणा को दृष्टिगत रखते हुए मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के विभिन्न सिद्धान्तों का अविष्कार किया। कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्नवत् वर्णित है।

(i) व्यक्तित्व का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त

(ii) व्यक्तित्व का शरीर–रचना सिद्धान्त

(iii) व्यक्तित्व का विशेषक सिद्धान्त

(iv) व्यक्तित्व का माँग सिद्धान्त

8.5.1 व्यक्तित्व का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त

मनोविश्लेषण के संस्थापक **फ्रायड** ने व्यक्तित्व के विश्लेषण एवं अध्ययन के आधार पर मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त का अविष्कार किया। फ्रायड के अनुसार

जीवन के प्रारम्भिक पाँच–छह वर्ष व्यक्तित्व के विकास में काफी महत्वपूर्ण होते हैं। फ्रायड की मनोलैंगिक विकास की अवस्थाओं का वर्णन निम्नवत् है–

1. मुखवर्ती अवस्था – जन्म से एक वर्ष तक
2. गुदावस्था – दो वर्ष तक
3. लैंगिक अवस्था – तीन से छः वर्ष तक
4. अव्यक्त अवस्था – छः वर्ष से किशोरावस्था के प्रारम्भ तक
5. जननिक अवस्था – किशोरावस्था

फ्रायड महोदय ने अपने अध्ययन के माध्यम से बताया कि मनोलैंगिक विकास की 5 अवस्थाओं क्रमशः मुखवर्ती, गुदा, लैंगिक, अव्यक्त तथा जननिक अवस्थाओं के दौरान बालक को जिस प्रकार का अनुभव प्राप्त होते हैं, उसी के अनुरूप बालक के व्यक्तित्व का विकास होता है।

फ्रायड के व्यक्तित्व सिद्धान्त के अन्तर्गत मन की तीन अवस्थाओं, चेतन, अचेतन तथा अर्धचेतन का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। संरचना की दषश्टि से फ्रायड ने व्यक्तित्व निर्माण में इदं, अहं तथा परम अहं को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत फ्रायड ने अचेतन को अत्यधिक महत्व दिया है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. मनोलैंगिक विकास की अवस्थाओं के नाम लिखिए।

____

____

____

2. फ्रायड ने अपने सिद्धान्त में अत्यधिक महत्व दिया है–

(i) चेतन (ii) अचेतन

फ्रायड के मनो–विश्लेषणात्मक सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

(i) **चेतन** – चेतन का सम्बन्ध वर्तमान से होता है। चेतन, पूर्णतया तात्कालिक ज्ञान से सम्बन्धित होता है।

(ii) **अचेतन** – मन का सबसे बड़ा भाग अचेतन होता है। उदाहरण के लिए जब बर्फ का टुकड़ा पानी में डूबा हुआ होता है तो उसके कुछ भाग पानी के अन्दर और कुछ भाग पानी के बाहर रहता है। जो भाग मुझे दिखाई नहीं देता उसे अचेतन मन की संज्ञा दी जाती है और दिखाई देने वाले भाग को चेतन मन की संज्ञा दी जाती है।

(iii) **अर्द्ध चेतन** – यह चेतन मन के ऊपरी भाग में पाया जाता है। कुछ बातें ऐसी होती हैं जो आसानी से बिना किसी प्रयास के चेतन अवस्था में आ जाती हैं, इन्हें अर्धचेतन कहते हैं। उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त फ्रायड के सिद्धान्त में इदं, अहं, एवं परम अंह का भी महत्वपूर्ण स्थान है–

(अ) **इदं** – यह व्यक्ति में जन्मजात पायी जाती है इसमें व्यक्ति की मूल वासनायें, आदतें तथा दबी हुई इच्छाएँ आती हैं। इदं किसी भी प्रकार के तनाव या कष्ट को बर्दाश्त नहीं कर सकता तथा इस अवस्था में व्यक्ति तुरन्त आनन्द प्राप्त करना चाहता है। इदं पूर्णतया अचेतन में कार्य करता है।

(ब) **अहं** – इसका सम्बन्ध वास्तविकता से होता है। यह व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करने में सहायक होता है। अहं व्यक्ति की इच्छाओं तथा वास्तविकताओं के बीच सामन्जस्य बनाये रखने में मदद करता है।

(स) **परम–अहं** – परम अहं की भावना का विकास व्यक्ति के अन्दर सबसे देर में प्रारम्भ होता है तथा इसे आदर्शवादी सिद्धान्त की संज्ञा दी जाती है। इस शक्ति के द्वारा व्यक्ति को सामाजिक बनने में मदद मिलती है। जैसे–जैसे व्यक्ति की आयु बढ़ती जाती है इदं कमजोर होने लगता है एवं परम अहं विकसित होता जाता है। अतः परम अहं सामाजिक नियंत्रण का प्रतिनिधित्व करता है।

निष्कर्षतः फ्रायड ने व्यक्तित्व की संरचन में तीनों घटकों, क्रमशः इदं, अहं एवं परम अहं को विशेष महत्व दिया है। फ्रायड के अनुसार यदि ये तीनों घटक एक सुसंगठित तथा इकाई के रूप में कार्य करते हैं तो व्यक्ति अपने वातावरण के साथ प्रभावशाली ढंग से समायोजन कर लेता है तथा ऐसे व्यक्ति को समायोजित व्यक्ति कहा जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) निचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. चेतन के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

8.5.2 व्यक्तित्व का शरीर रचना सिद्धान्त –

शरीर रचना सिद्धान्त के जनक **डब्लू. एच. शैल्डन** थे। उन्होंने अपने अध्ययन के माध्यम से बताया कि शरीर रचना तथा व्यक्तित्व के गुणों में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। शरीर रचना के आधार पर व्यक्तित्व को तीन भागों में बाँटा जा सकता है–

1. **गोलाकार** – भोजन प्रिय, हँसमुख, परम्परावादी, सहनशील तथा सामाजिक।
2. **आयताकार** – रोमांच प्रिय, जोशीले, उद्देश्य केन्द्रित तथा क्रोधी।
3. **लम्बाकृत** – गुमसुम, एकान्तप्रिय, अल्पनिद्रा, एकांकी तथा निष्ठुर।

क्रेचमर ने भी शरीर रचना की दृष्टि से व्यक्तित्व को तीन भागों में विभक्त किया है–

(i) लम्बाकाय

(ii) सुडौलकाय

(ii) गोलाकाय

8.5.3 व्यक्तित्व का विशेषक सिद्धान्त –

इस सिद्धान्त के प्रणेता कैटिल थे। इनके अनुसार व्यक्तित्व वह है जिसमें व्यक्ति को उपलब्ध कराई गई परस्थिति में व्यक्ति किस प्रकार का व्यवहार प्रकट करता, है उसे देखकर उसके व्यवहार में परिवर्तन के सम्बन्ध में अनुमान लगाया जाता है। कैटिल ने कारक विश्लेषण के आधार पर कुछ व्यक्तित्व विशेषकों की पहचान की है जो मानसिक संरचना का स्पष्टीकरण व्यवहार की निरन्तरता तथा नियमितता से करते हैं।

विशेषक सिद्धान्तों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है–

(अ) सतही विशेषक : ये विशेषक व्यक्ति के व्यवहार के ऐसे प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं, जो परस्पर सम्बन्धित होते हैं। उदाहरणार्थ, व्यक्ति के कुछ ऐसे गुणों यथा, निराश्रयता, जागरूकता, उत्साह तथा ऊर्जा स्तर की रेटिंग में सह सम्बन्ध ज्ञात करने पर उनमें गुच्छता या वर्ग रूप में व्यक्त होने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। इन गुच्छों को पृष्ठ–विशेषकों का नाम दिया जाता है। इस प्रकार पृष्ठ विशेषांकों को विशेषक तत्वों के मध्य सहसम्बन्ध द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इन्हें सतही विशेषक इसलिए कहा है कि इन विशेषकों में परस्पर सम्बन्ध केवल सतही स्तर पर पाया जाता है। पृष्ठ–विशेषकों को मालूम करने की मुख्य विधि गुच्छ विश्लेषक कहलाती है।

(ब) मूल विशेषक : मूल विशेषक व्यक्तित्व के अपेक्षाकृत कम विचरणशील किन्तु अधिक गहरे एवं महत्वपूर्ण गुण हैं। पृष्ठ–विशेषकों को वर्णनात्मक इकाई के रूप में उपकल्पित किया जा सकता है, जबकि मूल विशेषकों को व्याख्यात्मक एवं पृष्ठ–विशेषकों के अन्तर्निहित कारकों के रूप में माना जाता है कारक विश्लेषण विधि के अनुप्रयोग द्वारा कैटिल ने सोलह 'मूल–विशेषकों का पता लगाया।

(i) **पर्यावरणजन्य विशेषक :** जो व्यक्ति के वातावरण से प्रभावित होते हैं।

कायजन्य विशेषक : ये पूर्णतया आनुवंशिकी पर निर्भर करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) निचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. कैटिल ने कुल कितने मूल विशेषकों का पता लगाया था।

____

____

____

कैटल द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व के 16 कारकों के प्रकार –

कैटल के 16 PF से प्राप्त होने वाले शीलगुण

शीलगुणों के नाम			
क्र.सं0	कारक	निम्न प्राप्तांक	उच्च प्राप्तांक
1.	A.	Reserved – संयमी	Outgoing – सहृदय (बाह्यगामी)
2.	B.	Less intelligent – संवेगात्मक (बाह्यगामी)	More intellignet – सहृदय
3.	C.	Emotional – संवेगात्मक	Stable – स्थिर
4.	E.	Submissive – विनम्र	Dominant – प्रभुत्ववादी
5.	F.	Serious – गम्भीर	Happy-go-lucky- प्रसन्नचित
6.	G.	Expedient – स्वार्थ साधक	Conscientious – सद्विवेका
7.	H.	Timid – लज्जालु/कायर/संकोची	Venturesome – साहसिक
8.	I.	Toughminded – कठोर	Sensitive – संवेदनशील
9.	L.	Trusting – विश्वसनीय	Suspicious – शंकालू
10.	M.	Practical - व्यावहारिक	Imaginative – काल्पनिक
11.	N.	Forthright – स्पष्टवादी	Shrewed – चालक
12.	O.	Self-assured – आत्मविश्वस्त	Apprehensive – आशंकित
13.	O1.	Conservative - रूढ़िवादी	Experimenting – उदारवादी
14.	O2.	Group dependent – समूहाश्रित	Self-sufficient – आत्म पर्याप्त
15.	O3.	Uncontrolled – अनियंत्रित	Controlled – नियंत्रित
16.	O4.	Relaxed . विश्रान्त	Tense – तनावयुक्त

8.5.4 व्यक्तित्व का माँग सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक एच.ए. मुरे हैं। मुरे के अनुसार व्यक्ति को किसी भी परिस्थिति में अपने को समायोजित करने के लिए उसकी कुछ आवश्यकताएँ होती हैं। व्यक्ति को किसी परिस्थिति के अनुकूल अपने को समायोजित करने के लिए अनेकों प्रकार के तनाव का सामना करना पड़ता है। तनाव को कम करने के लिए व्यक्ति कई प्रकार से प्रयास करता है तथा उसे दूर करने के लिए कई प्रकार की प्रतिक्रयाएँ करता है। व्यक्ति के अन्दर अनेक प्रकार की जिज्ञासाएँ माँग के रूप में आती रहती हैं। इस प्रकार माँग के दवाब को कम करने के लिए व्यक्ति पुराने उद्देश्यों की पूर्ति को बनाये रखता है तथा नवीन सृजनात्मक कार्य को करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। मुरे ने व्यक्ति की आन्तरिक माँग के आधार पर व्यक्तित्व को स्पष्ट करने का प्रयास किया।

मुरे ने लगभग 40 माँगें ज्ञात कीं तथा उन्हें व्यक्तित्व माँग का नाम दिया। इनके अनुसार ''माँग मानव मस्तिष्क की एक कल्पनात्मक शक्ति है जो व्यक्ति के प्रत्यक्षकरण, अर्न्तबोध तथा मानसिक, शारीरिक क्रियाओं को इस तरह से संगठित करती है कि वह व्यक्ति असंतुष्टि की परिस्थिति से बाहर निकल सके।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) निचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. मुरे के अनुसार 'माँग' क्या है?

____

____

____

8.6 व्यक्तित्व के प्रकार

व्यक्तित्व के विषय में जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य है। व्यक्ति के गुणों के आधार पर ही व्यक्तित्व का वर्गीकरण किया जाता है।

व्यक्तित्व के प्रकार को अध्ययन की दृष्टिकोण से चार वर्गों में विभक्त किया गया है–

अ– शरीर रचना दृष्टिकोण – (क्रेश्मर – 1925)

ब– सामाजिक दृष्टिकोण – (युंग – 1921)

स– मूल्य दृष्टिकोण – (स्प्रेन्गार – 1921)

द– दार्शनिक दृष्टिकोण – (भारतीय दर्शन)

8.6.1 शरीर रचना के आधार पर –

जर्मन वैज्ञानिक क्रेश्मर ने शारीरिक रचना को निम्नानुसार वर्गीकृत किया है–

(1) लम्बाकाय – ऐसे व्यक्ति दुबले–पतले और लम्बे होते हैं। इनका सिर लम्बा भुजाएँ पतली, सीना छोटा, हाथ पैर लम्बे, पतले होते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति अपनी आलोचना सुनना पसन्द नहीं करते हैं बल्कि दूसरों की आलोचना करने में रूचि प्रर्दशित करते हैं।

(2) सुडौलकाय – इस प्रकार के व्यक्ति हिष्ट–पुष्ट और स्वस्थ होते हैं। इनका सीना चौड़ा, भुजाएँ मजबूत और उभरी हुई तथा मांसपेशियाँ पुष्ट होती हैं। ये व्यक्ति दूसरों से इच्छानुसार समायोजन कर लेते हैं।

(3) गोलकाय – इस प्रकार के व्यक्ति नाटे कद के गोल और चर्बी वाले होते हैं ये आराम पसन्द तथा इनमें सामाजिक गुण पाये जाते हैं।

(4) डायसप्लास्टिक – इनमें उपर्युक्त तीनों गुणों का मिश्रण पाया जाता है। इस प्रकार के लोगों का शरीर साधारण होता है।

अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक शेल्डन ने शारीरिक आकृति के आधार पर व्यक्तित्व को 3 'वर्गों' में विभक्त किया है।

I. गोलाकृति – इस प्रकार के व्यक्ति मोटे, गोल, कोमल और स्थूल शरीर के होते हैं। इनके पाचन अंग अधिक विकसित होते हैं, ये भोजनप्रिय, आरामपसन्द, सोने में तेज, स्नेह पाने के इच्छुक, आमोद प्रिय, सज्जन, विवेकशील, सहिष्णु तथा जल्दी परेशान होने वाले होते हैं।

II. आयत आकृति – इस प्रकार के व्यक्ति स्वस्थ सुसंगठित शरीर वाले होते हैं। ये साहसी क्रियाशील और उद्योगशील होते हैं।

III. लम्बाकृति – ऐसे व्यक्ति दुबले–पतले, कोमल, कमजोर शरीर वाले होते हैं। ये संकोची, मन्दभाषी तथा एकान्तप्रिय, संयमी और संवेदनशील होते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. शारीरिक आकृति के आधार पर व्यक्तित्व को कितने वर्गों में विभक्त किया गया है तथा उनके विभिन्न प्रकारों के नाम लिखिए।

____

____

____

8.6.2 सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर –

जुंग ने सामाजिक दृष्टिकोण से व्यक्तित्व को तीन वर्गों में विभाजित किया है–

(i) अन्तर्मुखी – ये व्यक्ति आत्म–केन्द्रित, संकोची तथा कम सामाजिक होते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति वास्तविकता से दूर तथा चिन्तित रहते हैं। इनकी रूचि लेखन कार्यों में अधिक होती है। ये व्यक्ति एकांतप्रिय होते हैं तथा पुस्तकों को पढ़ने में व्यस्त रहते हैं। अन्तर्मुखी व्यक्ति प्रायः उदासीन रहते हैं। दिन में सपने देखना इनकी आदत होती है।

(ii) बहिर्मुखी – ऐसे व्यक्ति मिलनसार सहयोगी तथा चिन्ता–विहीन होते हैं और बाहरी दुनिया में अधिक रूचि लेते हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले लोग मैत्रीभाव से युक्त होते हैं। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति में नेता बनने की योग्यता होती है तथा ये सामाजिक कार्यों में बढ़–चढ़कर भाग लेते हैं। ये बड़े स्पष्टवादी होते हैं। बहिर्मुखी लोग अधिक लचीले, वस्तुनिष्ठ, भाषण कला में दक्ष होते हैं।

(iii) उभय मुखी – ये व्यक्ति न तो अधिक अन्तर्मुखी और न ही अधिक बहिर्मुखी होते हैं। इनकी स्थिति इन दोनों वर्गों के मध्य में होती है। दोनों के मिश्रण को ही उभय–मुखी का नाम दिया गया है। इनका व्यवहार बहुत संतुलित होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. बहिर्मुखी तथा उभयमुखी के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

8.6.3 मूल्य के आधार पर :

स्प्रेन्गार ने मूल्यों के आधार पर व्यक्तियों को छह भागों में विभक्त किया है–

(i) **सैद्धान्तिक –** ऐसे व्यक्तियों में ज्ञान प्राप्ति की इच्छा प्रबल होती है। ये अपने सिद्धान्तों से समझौता नहीं करते तथा उसके अनुरूप कार्य करते हैं। ये बुद्धिमत्तापूर्ण कार्यों को करते हैं तथा विद्वानों को पसन्द एवं उनका आदर करते हैं।

(ii) **आर्थिक –** ऐसे व्यक्ति धन, ऐश्वर्य, भौतिक सम्पदा व भौतिक सुख के इच्छुक होते हैं।

(iii) **धार्मिक –** इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति ईश्वर में आस्था रखने वाले , दैवीय आपदाओं से डरने वाले तथा धार्मिक नियमों के अनुसार कार्य को सम्पन्न करने वाले होते हैं।

(iv) **राजनैतिक –** ऐसे व्यक्ति राजनैतिक विचारों के होते हैं। ये प्रायः किसी न किसी राजनैतिक दल के सदस्य बन जाते हैं।

(v) **सामाजिक –** ऐसे व्यक्ति दयालु, सहानुभूतिपूर्ण, त्यागी, परोपकारी तथा समाजसेवी होते हैं। ये लोकहित में अपने व्यक्तिगत हित का ध्यान नहीं रखते हैं।

(vi) **कलात्मक –** ऐसे व्यक्ति सौन्दर्य के पुजारी होते हैं। इनको ललित कलाओं, संगीत, काव्य, नष्य्य, चित्रकला, प्राकृतिक सौन्दर्य, बागवानी, सजावट आदि से विशेष आकर्षण होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. मूल्यों के आधर पर स्प्रेन्गर ने व्यक्तित्व को कितने भागों में विभक्त किया है तथा किसी एक प्रकार को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

8.6.4 भारतीय दृष्टिकोण के आधार पर –

श्रीमदभगवद्गीता में व्यक्तियों के तीन गुणों का वर्णन मिलता है जो क्रमशः सत्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण के नाम से जाने जाते हैं। श्रीमद्गीता के अध्याय 14 के श्लोक 9 के अनुसार सत्वगुण – सुख से सम्बन्धित है तथा रजोगुण – कर्म से सम्बन्धित है। इसके साथ ही तमोगुण – प्रमाद की ओर आकर्षित करता है। इन गुणों के आधार पर व्यक्तियों को तीन प्रकारों में बाँटा जा सकता है।

(i) **सात्विक** – ऐसे व्यक्तियों में सात्विकता की प्रधानता होती है। ये ज्ञानी, शान्त, निर्मल, धार्मिक व सौम्य स्वभाव के होते हैं।

(ii) **राजसी** – ऐसे व्यक्तियों में रजोगुण की अधिकता होती है। ये साहसी, वीर, दबंग तथा इच्छाशील होते हैं। ये कर्म में विश्वास रखते हैं।

(iii) **तामसी** – ऐसे व्यक्तियों में तमोगुण की अधिकता होती है। ये प्रमादी, आलसी, क्रोधी तथा लड़ाई झगड़ा करने वाले होते हैं।

8.7 व्यक्तित्व के आदर्श गुण

एक अच्छे व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान के लिए उसके अन्तर्गत शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, चारित्रिक, नैतिक एवं संवेगात्मक गुणों का सुसंगठित एवं गत्यात्मक स्वरूप होना चाहिए। व्यक्ति का व्यक्तित्व किन गुणों के कारण पूर्ण होता है इस पर विभिन्न मनोवैज्ञानिकों में मतभेद है। फिर भी विभिन्न मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अच्छे व्यक्ति में निम्नलिखित विशेषताओं का समावेश होना चाहिए।

(a) **शारीरिक गुण :–** सुन्दर एवं आकर्षक रंग–रूप, आचरण, अच्छी शारीरिक संरचना, अच्छा स्वास्थ्य आदि अच्छे व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं।

(b) **मानसिक गुण :—** उच्च बुद्धिलब्धि वाले बालकों का मानसिक विकास उच्च कोटि का होता है।

(c) **सामाजिक गुण :—** अच्छे सामाजिक गुणों के अन्तर्गत सामाजिकता, मित्रता, दूसरें के ऊपर उपकार करना, वातावरण के साथ उत्तम सामंजस्य करना आदि आता है।

(d) **संवेगात्मक गुण :—** इस श्रेणी के अन्तर्गत, उच्चलक्ष्य की प्राप्ति हेतु उद्देश्य, दया की भावना, आशावादी दृष्टिकोण, किसी भी परिस्थिति में संतोष करना इत्यादि गुण आते हैं।

(e) **चारित्रिक गुण :—** दृढ़ इच्छा शक्ति, उच्च चरित्र आदि गुण इस श्रेणी में आते हैं।

8.8 व्यक्तित्व मापन विधियों के प्रकार

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विषय में आकलन प्राचीन काल से ही उसके रहन—सहन बोलचाल, इत्यादि के माध्यम से लगाया जाता रहा है। इसके लिए व्यक्ति का चेहरा, हस्तरेखा तथा मस्तक इत्यादि को देखकर बताया जाता था कि भविष्य का स्वभाव या व्यक्तित्व किस प्रकार का है। परन्तु व्यक्तित्व मापन की यह विधि अमनोवैज्ञानिक थी। आज के वैज्ञानिक युग में व्यक्तित्व को अनेकों प्रकार की वैज्ञानिक विधियों एवं तकनीकी के माध्यम से मापा जा सकता है—

(अ) आत्मनिष्ठ विधियाँ

(ब) वस्तुनिष्ठ विधियाँ

(स) प्रक्षेपी विधियाँ

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. व्यक्तित्व मापन के लिए प्राचीन काल में मनुष्य का चेहरा, हस्तरेखा एवं मस्तिष्क देखकर व्यक्तित्व के विषय में जो जानकारी प्रदान की जाती थी वो है—

(i) वैज्ञानिक

(ii) अवैज्ञानिक

____

____

8.9 आत्मनिष्ठ विधियाँ

इन विधियों द्वारा व्यक्तित्व की जाँच स्वयं शोधकर्ता के माध्यम से की जाती है। आत्मनिष्ठ विधियों के प्रयोग से प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता तथा वैधता प्रायः संदिग्ध रहती है। इस विधि का प्रयोग शैक्षिक तथा मनोवैज्ञानिक मापन में कम ही किया जाता है। महत्वपूर्ण आत्मनिष्ठ विधियों का वर्णन निम्नवत है–

(अ) जीवन इतिहास विधि

(ब) प्रश्नावली विधि

(स) साक्षात्कार विधि

(द) आत्म कथा लेखन विधि

8.9.1 जीवन इतिहास विधि

इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति के परिवार की आर्थिक, सामाजिक स्थिति, जीवनवृत्त, स्वभाव, इतिहास, चिकित्सा, आदत, चाल–चलन, आस–पास के परिवेश, रूचि एवं सृजनशीलता का पता लगाया जाता है। जीवन इतिहास विधि में किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का अध्ययन बड़ी ही कुशलता एंव सावधानी के साथ किया जाता है। इस विधि में जिस व्यक्ति के व्यक्तित्व का परीक्षण किया जा रहा है उससे सम्बन्धित सम्पूर्ण सूचनाएँ एकत्रित की जाती हैं। सूचनाओं के विश्लेषण के आधार पर व्यक्तित्व के सम्बन्ध में परिणाम प्राप्त किए जाते हैं। प्रायः इस विधि का प्रयोग असामान्य व्यक्तियों के व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए मनोचिकित्सकों के द्वारा मनोवैज्ञानिक रोगों के उपचार हेतु किया जाता है।

8.9.2 प्रश्नावली विधि

व्यक्तित्व सूचियों एवं प्रश्नावली के द्वारा उन गुणों का आकलन किया जाता है जिन्हें किसी दूसरी विधियों द्वारा ज्ञात करना सम्भव नहीं है। इनका प्रमुख उद्देश्य विभिन्न शील गुणों का मापन करना एवं उनके आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण करना होता है। व्यक्तित्व मापन के लिए परिसूची एवं प्रश्नावली का प्रयोग–वर्तमान समय में शोधकार्यों में अधिकाधिक किया जा रहा है। परिसूची एवं प्रश्नावली के माध्यम से व्यक्ति अपने बाह्य एवं आन्तरिक व्यवहारों को विचारों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। व्यक्ति द्वारा प्रदान की गई सूचनाओं के आधार पर व्यक्ति के व्यवहार के सम्बन्ध में निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं।

व्यक्तित्व सूची :– फ्रीमैन ने व्यक्तित्व सूचियों को छः भागों में वर्गीकृत किया है जो निम्नवत है –

(1) विशिष्ट शीलगुणों का मापन करने वाली परिसूची।

(2) पर्यावरण के विभिन्न भागों के साथ समायोजन का मूल्यांकन करने वाली परिसूचियाँ।

(3) चिकित्सा क्षेत्र में रोगियों का वर्गीकरण करने वाली परिसूचियाँ।

(4) व्यक्तियों को विभिन्न समूहों में वर्गीकृत करने वाली परिसूचियाँ।

(5) व्यक्तित्व सिद्धान्तों पर आधारित व्यक्तित्व सूचियाँ।

(6) व्यक्ति की रुचियों, मूल्यों एवं अभिवृत्तियों का मूल्यांकन करने वाली परिसूचियाँ।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. फ्रीमैन द्वारा व्यक्तित्व सूचियों को कितने वर्गों विभाजित किया गया है।

____

____

____

कुछ प्रमुख व्यक्तित्व परिसूचियाँ

1. आलपोर्ट–प्रभाविता–अधीनता परीक्षण
2. बर्नरियूटर व्यक्तित्व सूची
3. मिनिसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची
4. थर्सटन स्वभाव अनुसूची
5. आर0 बी0 कैटल हाई स्कूल व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली

8.9.3 साक्षात्कार विधि

सक्षात्कार विधि का प्रयोग व्यक्तित्व के मापन में अधिकाधिक किया जाता है। इस विधि से शोधकर्ता परीक्षार्थी के व्यक्तित्व से जुड़ी समस्याओं को पूछता है और परीक्षार्थी द्वारा दिए गये उत्तर को नोट कर लेता है। परीक्षार्थी द्वारा दी गई सूचनाओं के आधार पर उसके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में निष्कर्ष निकाले जाते हैं। साक्षात्कार को दो वर्गों में विभक्त किया गया है।

(i) संरचित साक्षात्कारः– इसमें परीक्षक पहले से प्रश्नों को चयनित किए रहता है।

(ii) असंरचित साक्षात्कारः– इसमें परीक्षक अपने स्मृति के माध्यम से प्रश्नों को पूछता है।

साक्षात्कार विधि का महत्व–

(1) इस विधि में दिखाई न देने वाली समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।

(2) व्यक्तिगत रूप से जिन घटनाओं का अध्ययन नहीं किया जा सकता, उनका अध्ययन इस विधि के द्वारा किया जा सकता है।

(3) साक्षात्कार विधि के प्रयोग से प्राप्त परिणाम विश्वसनीय एवं वैध होते हैं।

(4) सामाजिक व्याधियों के रोकथाम में यह विधि अधिक सार्थक एवं उपयोगी है।

साक्षात्कार विधि की सीमाएँ – इस विधि द्वारा व्यक्तित्व के सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाएँ अपूर्ण पक्षपातपूर्ण एवं अविश्वसनीय हो सकती हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. साक्षात्कार विधि की सीमाओं को लिखिए।

____

____

____

8.8.4 आत्मकथा लेखन विधि

इस प्रविधि के अर्न्तगत शोधकर्त्ता छात्र को व्यक्तित्व से सम्बन्धित एक लेख देता है और उसी से सम्बन्धित अपना व्यक्तिगत इतिहास लिखने को कहता है। शोधकर्त्ता छात्र द्वारा लिखे गये लेख में प्रयुक्त शब्दों एवं भावनाओं के आधार पर व्यक्ति के व्यक्तित्व के सन्दर्भ में अपना अभिमत प्रकट करते हैं।

8.10 वस्तुनिष्ठ विधियाँ

इस प्रकार की विधियों का प्रयोग व्यक्ति के वाह्य व्यवहार की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयुक्त है। वस्तुनिष्ठ विधियों को तीन वर्गों में विभक्त किया गया है।

वस्तुनिष्ठ विधियाँ

↓

नियंत्रित निरीक्षण विधि | मापन रेखा विधि | समाजमिति विधि

8.10.1 नियंत्रित निरीक्षण विधि

इस विधि का प्रयोग प्रयोगशाला के अन्दर नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता है। इसमें शोधकर्ता व्यक्ति के विभिन्न गतिविधियों, व्यवहारों का सावधानी के साथ अध्ययन करता है। इस विधि को प्रशासित करने के लिए शोधकर्ता को कुशल प्रशिक्षण प्राप्त होना चाहिए। प्रशिक्षित परीक्षक होने पर वह परीक्षार्थी के व्यवहार का अध्ययन एवं विश्लेषण ठीक ढंग से कर सकता है।

8.10.2 मापन रेखा विधि (निर्धारण मापनी)

मापन रेखा विधि द्वारा किसी व्यक्ति के व्यवहार विशेष में गुणों की उपस्थिति और अभाव का मापन मात्रात्मक तथा गुणात्मक आधार पर किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यक्तित्व में निहित लगभग सभी प्रकार के गुणों का आकलन स्वयं उसके द्वारा या उसके मित्रों या सहयोगियों से कराया जाता है और आकलन करने वाला व्यक्ति उसके गुणों पर अपने विचार प्रस्तुत करता है। मापन रेखा विधि को प्रारम्भ करने का श्रेय मनोभौतिक क्षेत्र के **फेक्नर** को जाता है। परन्तु इस विधि के अन्वेषण का श्रेय **गाल्टन** को जाता है। उन्होंने इस विधि की खोज 1883 में की। इनका प्रकाशन बिम्ब सृष्टि से सम्बन्धित था। विश्वसनीयता निम्न स्तर की होने के कारण मापन रेखा विधि का प्रयोग शोध के क्षेत्र में बहुत कम किया जाता है।

वान डेलेन के अनुसार – ''निर्धारण मापनी किसी चर की मात्रा, तीव्रता व बारम्बारता को निर्धारित करती है।''

"A rating scale ascrtains the degree, instensity or frequency of a variable."

-Van Dalen

निर्धारण मापनी का प्रयोग शिक्षा मनोविज्ञान, निर्देशन, व्यवसाय आदि क्षेत्रों में किया जाता है। व्यक्तियों के अन्दर निहित विभिन्न प्रकार के गुणों जैसे ईमानदारी, पढ़ने की आदतें, सहयोग इत्यादि का मापन निर्धारण मापनी की सहायता से किया जाता सकता है।

निर्धारण मापनी चार प्रकार की होती है–

(i) संख्यात्मक मापदण्ड (ii) **रेखांकित मापदण्ड** (iii) **संचयीअंक मापदण्ड एवं** (vi) **मानक मापदण्ड।**

8.10.3 समाजमिति विधि

सर्वप्रथम मुनेरो ने 1934 में समाजमिति विधि का प्रयोग किया था। इस विधि के द्वारा छात्रों के विभिन्न सामाजिक गुणों का मापन शोधकर्त्ताओं द्वारा किया जाता है। इस

विधि का उद्देश्य समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करना है। इस विधि के द्वारा समाज के शोषित, तिरस्कृत, एकाकी जीवन जीने वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व का अध्ययन कर उनकी समस्याओं का अध्ययन किया जा सकता है। इस विधि के द्वारा व्यक्तियों में निहित सामाजिक कौशल का मूल्यांकन करने के लिए सूचना एकत्र करने का उपयुक्त साधन है।

एण्ड्रू तथा विलि के अनुसार – ''सामाजमिति एक रेखाचित्र है, जिसमें कुछ चिन्ह और अंक किसी सामाजिक समूह के सदस्यों द्वारा सामाजिक स्वीकृति या त्याग का ढंग प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त होते हैं।

8.11 प्रक्षेपी विधियाँ

सर्वप्रथम प्रसिद्ध मनोविश्लेषणवादी सिगमण्ड फ्रायड ने 'प्रक्षेपण' शब्द का प्रयोग अपने विचारों एवं आन्तरिक कमियों को अभिव्यक्त करना ही प्रक्षेपण कहलाता है। किसी भी व्यक्ति के अन्तः करण की अंतिम सतह तक दबी हुई इच्छाओं एवं व्यक्तित्व की संरचना का ज्ञान प्रक्षेपी विधियों के माध्यम से प्राप्त होता है। इस विधि के द्वारा व्यक्ति के समक्ष उद्दीपन की स्थिति प्रस्तुत कर उसे उसके व्यक्तिगत जीवन की गुप्त बातों को प्रगट करने के लिए परिस्थितियाँ एवं अवसर प्रदान किया जाता है।

मैकडोनल्ड लैडेल के अनुसार – ''प्रक्षेपण एक ऐसी मनोवैज्ञानिक रचना है सिससे व्यक्ति दूसरे पर ऐसी भावनाओं एवं संवेगों को प्रक्षेपित करता है जिनका उसने दमन कर लिया है।''

"A common Psychological mechanism by which one attributes to others feelings and sentiments, one has repressed in oneself"

-Mac Donald Ladell

8.11.1 प्रक्षेपण विधियों के गुण

- प्रक्षेपण विधि के द्वारा चेतन तथा अचेतन स्तर की अभिप्रणाओं एवं व्यक्तित्व के गुणों का अध्ययन एवं आकलन किया जाता है।
- यह विधि व्यक्ति के अन्तःकरण में छिपे हुए विचारों को प्रकट करने में सहायता करती है।
- इस विधि से प्राप्त होने वाले परिणाम विश्वसनीय एवं वैध होते हैं।
- प्रक्षेपण विधि सामान्य एवं विशिष्ट दोनों प्रकार के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त होती है।

- प्रक्षेपण विधि के द्वारा व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यक्तित्व स्पष्ट हो जाता है तथा उसके पूर्ण व्यक्तित्व की पूरी जानकारी सरलता से प्राप्त हो जाती है।
- व्यक्ति के विचारों, अनुभूतियों, संवेगों, अनुभवों आदि का प्रक्षेपण विधि अन्य बाह्य वातावरण के माध्यम से पूरी जानकारी अप्रत्यक्ष रूप से करती है।

8.11.2 प्रक्षेपण विधियों के दोष

- प्रक्षेपण विधि की रचना एवं उसका मानकीकरण करना एक कठिन कार्य है।
- प्रक्षेपण विधि के प्रयोग में समय एवं श्रम अधिक लगता है।
- प्रक्षेपण विधि द्वारा प्राप्त परिणामों को विश्वसनीयता एवं वैधता को निर्धारित करना कठिन होता है।
- असामान्य व्यक्तियों के व्यक्तित्व का अध्ययन के लिए ही प्रक्षेपण विधि विशेष रूप से लाभकारी है।
- प्रक्षेपण विधि अन्य शोधों की अपेक्षा केवल चिकित्सा के क्षेत्र में अधिक उपयोगी है।
- अप्रशिक्षित परीक्षणकर्ता द्वारा प्रक्षेपण विधि का प्रयोग सम्भव नहीं है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

12. प्रक्षेपण विधि के एक गुण एवं एक दोष को लिखिए।

____

____

____

8.12 प्रक्षेपी विधियों के प्रकार

प्रक्षेपी प्रविधियाँ विभिन्न प्रकार की होती है। उनमें से कुछ प्रक्षेपी विधियों का वर्णन लिम्नलिखित प्रकार से है :—

8.12.1 शब्द—साहचर्य परीक्षण

शब्द—साहचर्य परीक्षण द्वारा मापन करने से पहले, पूर्व निर्धारित उद्दीपन शब्दों को शोधकर्त्ता परीक्षार्थी के सामने एक—एक कर बोलता जाता है। शब्द सुनने के पश्चात

परीक्षार्थी के मन में जो पहला शब्द आता है वह उस शब्द को बताता है। परीक्षार्थी द्वारा प्राप्त उत्तर के शब्दों की प्रतिक्रिया को समय सहित अंकित कर लिया जाता है। तदुपरान्त परीक्षार्थी के उत्तरों की व्याख्या की जाती है तथा उसके आधार पर उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है। व्यक्तित्व मापक के रूप में इस परीक्षण प्रणाली का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रायड तथा उनके शिष्य युंग द्वारा किया गया। युंग ने 1904 में 100 शब्दों की एक सूची बनायी और इसके माध्यम से व्यक्तित्व का मापन करके उसके सम्बन्ध में प्राप्त परिणामों को सामने रखा। अमेरिका में केण्ट तथा रोजेनफ ने युंग की परीक्षण प्रणाली की उपयोगिता से प्रभावित होकर 1910 में एवं रैपापोर्ट ने 1946 में शब्द–साहचर्य परीक्षण का निर्माण किया। इस विधि के अन्तर्गत परीक्षार्थी को निश्चित समय आबंटित किया जाता है और उद्दीपक शब्द बोला जाता है, जिसे सुनने के बाद परीक्षार्थी के मन में जो शब्द आता है वह उस शब्द को दोहराता है तथा उसके शब्दों की व्याख्या करके परीक्षक उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करता है।

8.12.2 वाक्य–पूर्ति परीक्षण

वाक्य–पूर्ति परीक्षण विधि में परीक्षार्थी को कुछ शब्द समूह या अधूरे वाक्य दिये जाते हैं। परीक्षार्थी उन रिक्त स्थानों की पूर्ति कुछ शब्दों या वाक्यों द्वारा करता है। इस विधि के प्रमुख उदाहरण हैं– वाक्य पूर्ति, कहानी पूर्ति एवं चित्र पूर्ति आदि।

ऐसा लगता है मैं लिखना

मेरे दोस्त मुझे————————————————

माता–पिता का नियंत्रण मुझे————————————————

खुशी का समाचार सुनकर मैं————————————————

विपरित दशा में मैं————————————————

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13. वाक्य पूर्ति परीक्षण के प्रमुख उदाहरण को लिखिए।

____

____

____

8.12.3 रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण

स्विस मनोचिकित्सक हर्मन रोर्शा ने स्याही धब्बों वाले परीक्षण का अविष्कार सन् 1921 ई. में किया। इस परीक्षण के अन्तर्गत प्रयोज्य अपने अचेतन मन की स्थिति को स्याही के धब्बों के आधार पर उसे शब्दों द्वारा अभिव्यक्त करता है। इस परीक्षण के द्वारा व्यक्ति के तीनों पक्षों संज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्ष का अध्ययन भलि–भाँति किया जाता है।

इस परीक्षण में 10 मानकीकृत कार्ड का प्रयोग किया जाता है जिनमें 5 काले–सफेद तथा 5 विभिन्न रंगों के कार्ड होते हैं। इन कार्डों के उपर 1 से 10 तक के नम्बर लिखे होते हैं जिन्हें क्रम से व्यक्ति के सामने प्रस्तुत किया जाता है। इस परीक्षण की सामग्री पूर्णतया अनिर्देशित होती है। व्यक्ति अपनी मूलभूत रचना के द्वारा मानव, पशुओं, वस्तुओं आदि के चित्र का अवलोकन विभिन्न प्रकार के कार्डों पर करता है। इस परीक्षण में व्यक्ति को अप्रत्यक्ष उत्तेजना दी जाती है, जिसके प्रति वह अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। इसमें परीक्षणकर्त्ता इस बात पर ध्यान देता है कि प्रयोज्य ने चित्र के कितने और कौन से भाग को महत्व दिया। व्यक्तिगत रूप से ही इस परीक्षण को प्रशासित किया जा सकता है इस विधि में व्यक्ति को दस विभिन्न प्रकार के कार्ड बारी–बारी से दिये जाते हैं। इन कार्डों पर स्याही के धब्बों के कारण विभिन्न प्रकार की अलग–अलग आकृतियाँ बनती हैं व्यक्ति को कार्ड को देखकर बन रही आकृतियों के विषय में अपना मत प्रकट करना होता है। जब व्यक्ति को किसी भी प्रकार की आकृति कार्डों पर नहीं दिखाई देती तो उनसे कार्ड वापस प्राप्त कर लिया जाता है और उसके स्थान पर दूसरा कार्ड प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए दिया जाता है।

इस विधि में परीक्षार्थियों से पूछताछ के आधार पर ही अंकन किया जाता है। परीक्षण की प्रतिक्रियाओं का फलांकन मुख्य रूप से तीन चरणों क्रमशः स्थान, प्रत्युत्तर निर्धारण एवं विषय वस्तु में किया जाता है। इस परीक्षण से यह प्रमाणित हो चुका है कि रोर्शा परीक्षण व्यक्तित्व मूल्यांकन के लिए एक विश्वसनीय एवं वैद्य परीक्षण है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

14. रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण का निर्माण किसने और कब किया?

____

____

____

8.12.4 प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण (TAT)

मर्रे एवं भार्गव ने 1935 प्रासंगिक बोध परीक्षण का निर्माण किया था। इस परीक्षण के द्वारा सामान्य तथा न्यूरोटिक व्यक्तियों के व्यक्तित्व का मापन किया जाता है।

इस परीक्षण के लिए कुल 31 कार्डस प्रयोग में लाये जाते हैं जिस पर तस्वीरें बनी होती हैं। जिसमें से एक कार्ड खाली होता है। प्रत्येक कार्ड पर अंग्रेजी वर्णमाला के कुछ अक्षर, M, G, B एवं F मुद्रित होते हैं। इसमें 10 कार्ड लड़के एवं पुरूषों के लिए, 10 कार्ड लड़कियों एवं स्त्रियों के लिए एवं 10 कार्ड पुरूष एवं स्त्रियों दोनों के लिए आवंटित किये जाते हैं। इस प्रकार परीक्षणकर्ता को अधिकतम 20 काड्र्स ही प्रयोग के लिए आबंटित किये जाते हैं।

M G B एवं F कार्ड निम्नानुसार वर्गीकृत होते हैं –

M कार्ड – पुरूषों के लिए

G कार्ड – लड़कियों के लिए

B कार्ड – लड़कों के लिए

F कार्ड – महिलाओं के लिए

प्रांसगिक बोध परीक्षण का प्रशासन व्यक्तित्व तथा सामूहिक दोनों प्रकार से किया जाता है। इसमें परीक्षणकर्ता परीक्षार्थी को यह निर्देश देता है कि उसे कुछ काड्र्स क्रम से दिए जायेंगे जिन पर कुछ आकृतियाँ बनी होंगी। काड्र्स पर बनी आकृतियों के आधार पर परीक्षार्थी को कहानी बनाना होता है। प्रयोज्य को विभिन्न कार्ड पर विभिन्न कहानियाँ बनानी होती हैं।

परीक्षार्थी से कहानी लेखन के पश्चात उनसे उसके विषय में पूछताछ की जाती है। परीक्षक परीक्षार्थी द्वारा लिखे गये कहानी को ध्यान से पढ़कर उसका विश्लेषण करता है और उसके आधार पर व्यक्तित्व की विशेषताओं का पता लगाता है। TAT विधि के अन्तर्गत विभिन्न उद्देश्यों के अनुसार भिन्न–भिन्न अंकन विधियों का प्रयोग किया जाता है।

8.12.5 बालक अन्तर्बोध परीक्षण (CAT)

इस परीक्षण का निर्माण सन् 1948 में पोल्ड बैलक ने किया था। इस परीक्षण का प्रयोग 3 से 10 वर्ष के बालकों के व्यक्तित्व परीक्षण को मापने के लिए किया जाता है। इस प्रयोग के अन्तर्गत 10 कार्ड जिन पर विभिन्न प्रकार के जानवरों की आकृतियाँ बनी होती हैं प्रयोज्य को दिए जाते हैं। काड्र्स पर जिन जानवरों के चित्र बने होते हैं

वे किसी न किसी रूप में मनुष्यों की तरह व्यवहार करते हुए दिखाई देते हैं। इस परीक्षण के अन्तर्गत बालक अपनी इच्छानुसार आकृति बनाने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है। बालक द्वारा बनायी गई आकृतियों के आधार पर उसमें व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जाती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

15. बालक अन्तर्बोध परीक्षण का निर्माण किसने और किस सन् में किया।

____

____

____

8.13 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का अध्ययन किया गया है। व्यक्तित्व के अर्थों एवं विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण के उपरान्त व्यक्तित्व के सम्पूर्ण स्वरूप की रचना किस प्रकार संगठित है, उसकी जानकारी प्राप्त हो जाती है। फ्रायड ने अपने सिद्धान्त में चेतन, अचेतन, अर्ध चेतन इदं, अहं, परम–अहं की व्यक्तित्व के विकास में क्या प्रासंगिता है को वर्णित किया है। शरीर रचना सिद्धान्त के अन्तर्गत व्यक्तित्व, विशेषक सिद्धान्त एवं माँग सिद्धान्त के अन्तर्गत गुणों एवं माँग के सम्बन्ध में सविस्तार से वर्णन किया गया है। इस इकाई में ही व्यक्ति के विभिन्न प्रकारों शरीर रचना, सामाजिक मूल्य एवं दार्षनिक विचारधारा के आधार पर वर्णन किया गया है। अध ययन से स्पष्ट है कि परिवार, विद्यालय और समाज में बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है। यदि बालक का उचित पालन–पोषण एवं शिक्षा–दीक्षा की व्यवस्था उचित वातावरण में होता है तो ऐसी परिस्थिति में व्यक्तित्व का विकास अच्छी तरह होगा और व्यक्ति वातावरण के साथ ठीक से समायोजित कर सकता है।

इस इकाई में ही व्यक्तित्व के मापन से सम्बन्धित विभिन्न विधियों क्रमशः आत्मनिष्ठ, वस्तुनिष्ठ एवं प्रक्षेपी विधियों के विभिन्न प्रकारों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। प्राचीन काल में व्यक्तित्व के मापन के लिए प्रयुक्त होने वाली विधियाँ अवैज्ञानिक

थीं। परन्तु वर्तमान परिदृश्य में मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्तित्व के मापन के उपरान्त बालकों की रूचि, पसन्द इत्यादि को ध्यान में रखते हुए उसके अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए एवं उनकी इच्छानुसार उन्हें भविष्य निर्माण के लिए तैयार करने का प्रयास करना चाहिए।

8.14 अभ्यास कार्य

1. व्यक्तित्व के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसे परिभाषित कीजिए।
2. फ्रायड के व्यक्तित्व सिद्धान्त में प्रयुक्त इदं, अहम एवं परम अहं की व्याख्या कीजिए।
3. व्यक्तित्व के विभिन्न प्रकारों को लिखिए।
4. व्यक्तित्व के विशेषक सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।
5. रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण का वर्णन कीजिए।
6. प्रासंगिक बोध परीक्षण तथा बालक अन्तर्बोध परीक्षण का सविस्तार वर्णन कीजिए।

8.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Mathur, S.S. (1994) : Educational Psychology, Loyal Book Depot. Meerut.

गुप्ता, एस0 पी0 एवं गुप्ता, अलका (2006) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

गुप्ता, एस0 पी0 एवं गुप्ता, अलका (2007) : शिक्षामिति, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

सिंह, कर्ण (2008–2009) : अधिगमकर्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, गोविन्द प्रकाशन, लखीमपुर–खीरी।

सिंह, नरेन्द्र कुमार (2008) : शैक्षिक और मानसिक मापन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

सिंह अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी0 बी0 प्रिन्टर्स, पटना।

पाण्डेय, के. पी. (2007) : नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

पाण्डेय रामशकल, (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।

सिंह, आर.एन. (2001) : आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

9.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अवैज्ञानिक
2. 6 वर्गों में विभाजित किया गया है।
3. **सीमाएँ :** इस विधि द्वारा व्यक्तित्व के सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाएँ अपूर्ण, पक्षपातपूर्ण एवं अविश्वसनीय होने की सम्भावनाएँ बनी रहती हैं।
4. प्रक्षेपण एक ऐसी मनोवैज्ञानिक रचना हे जिससे व्यक्ति दूसरे पर ऐसी भावनाओं एवं संवेगों को प्रक्षेपित करता है जिनका उसने दमन कर लिया हो।''
5. वाक्य पूर्ति, कहानी पूर्ति एवं चित्र पूर्ति परीक्षण इसके प्रमुख उदाहरण हैं।
6. इस परीक्षण में 10 मानकीकृत कार्ड का प्रयोग किया जाता है।
7. इस परीक्षण का निर्माण सन् 1948 ई0 में पोल्ड बैलक ने किया था।
8. मूल्यों के आधार पर व्यक्तित्व को छः भागों में विभक्त किया गया है। आर्थिक – ऐसे व्यक्ति धन, ऐश्वर्य, भौतिक सम्पदा व भौतिक सुख के इच्छुक होते हैं।
9. अवैज्ञानिक
10. छः वर्गों में विभाजित किया गया है।
11. **साक्षात्कार विधि की सीमाएँ** :– इस विधि द्वारा व्यक्तितव के सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाएँ अपूर्ण, पक्षपातपूर्ण एवं अविश्वसनीय होने की सम्भावनाएँ बनी रहती हैं।
12. प्रक्षेपण विधि के गुण –

    (i) प्रक्षेपण विधि के द्वारा चेतन तथा अचेतन स्तर की अभिप्रेरणाओं एवं व्यक्तित्व के गुणों का अध्ययन एवं आकलन किया जाता है।

    (ii) प्रक्षेपण विधि की रचना एवं उसका मानकीकरण करना एक कठिन कार्य है।
13. वाक्य पूर्ति विधि के प्रमुख उदाहरण – वाक्य पूर्ति, कहानी पूर्ति एवं चित्र पूर्ति आदि।
14. स्विस मनोचिकित्सक हर्मन रोर्शा ने स्याही धब्बों वाले परीक्षण का अविष्कार सन् 1921 ई0 में किया था।
15. बालक अन्तर्बोध परीक्षण का निर्माण सन् 1948 में पोल्ड बैलक ने किया था।

इकाई – 9 सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

इकाई की रूपरेखा –

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 सृजनात्मकता का अर्थ एवं परिभाषाएँ

9.3.1 सृजनात्मकता का अर्थ

9.3.2 सृजनात्मकता की महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

9.4 सृजनात्मकता के अवयव

9.4.1 प्रवाह

9.4.2 विविधता

9.4.3 मौलिकता

9.4.4 विस्तारण

9.5 सृजनात्मकता की विशेषताएँ

9.6 सृजनशील बालकों की पहचान

9.7 सृजनात्मकता का मापन

9.7.1 कालेज के छात्रों के लिए सृजनात्मक परीक्षण

9.7.2 टोरेन्स का सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण

9.7.3 सृजनात्मक परीक्षण

9.7.4 सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण

9.8 सृजनशील बालकों के लिए शिक्षा नियोजन

9.9 सारांश

9.10 अभ्यास कार्य

9.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में विष्व के कल्याण के लिए अनेकों प्रकार के वैज्ञानिक, तकनीकी तथा औद्योगिक विकास के क्षेत्र में नये–नये अविष्कार हो रहे हैं। इन अविष्कारों के लिए शोधकत्ताओं का श्रम एवं उनकी सृजनात्मकता का भी अमूल्य योगदान है। पहले लोगों की ऐसी सोच थी कि केवल चित्रकार एवं संगीतकार आदि ही सृजनात्मक होते थे, परन्तु वर्तमान समय में यह स्पष्ट हो गया है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सृजनात्मकता पायी जा सकती है। इस प्रकृति में वास करने वाले समस्त प्राणियों में कुछ न कुछ सृजनात्मक विद्यमान रहती है। मनोवैज्ञानिकों का ऐसा मत है कि सृजनात्मकता किसी भी क्षेत्र में अपना प्रभाव दिखा सकती है। अतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि प्रत्येक बालक अपनी रूचि एवं अभिरूचि के अनुसार किसी क्षेत्र में सृजनात्मक हो सकते हैं। वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्र में प्रगति करने के लिए अब आवश्यक हो गया है कि सृजनशील व्यक्तियों की खोज की जाय। प्रस्तुत इकाई में सृजनात्कता एवं उसका मापन करने वाली कुछ महत्वपूर्ण विधियों का वर्णन किया गया है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त –

- छात्र सृजनात्मकता के प्रत्यय से अवगत हो सकेंगे।
- सृजनात्मकता को प्रभावित करने वाले कारकों से परिचित हो सकेंगे।
- सृजनात्मकता की विशेषताओं को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
- सृजनात्मक बालकों की पहचान कर सकेंगे।
- सृजनात्मक परीक्षणों के प्रयोग के क्रियाविधि की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- सृजनात्मक बालकों के शिक्षा व्यवस्था से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

9.3 सृजनात्मकता का अर्थ एवं परिभाषाएँ

9.3.1 सृजनात्मकता का अर्थ

सृजनात्मकता को अंग्रेजी भाषा में क्रियेटिविटी कहते हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार सृजनात्मकता के लिए विधायकता, उत्पादकता, खोज, मौलिकता इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। सामान्तया सृजनात्मकता से आशय – सृजन अथवा रचना सम्बन्धी योग्यता से है।

सृजनात्मकता के अर्थ को अधिक स्पष्टता के साथ समझने के लिए मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत वर्णित हैं –

9.3.2 सृजनात्मकता की महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

1. **टोरेन्स के अनुसार –** ''समस्याओं, कठिनाइयों, ज्ञान में अन्तराल, खोये हुए तत्व, अव्यवस्था आदि कठिनाइयों की पहचान करना, हलों की खोज करना, अनुमान करना या कमियों के लिए परिकल्पनाएँ बनाना; इन परिकल्पनाओं का परीक्षण और पुनर्परीक्षण करना और यथासंभव उन्हें सुधारना और उनका परीक्षण करना और अन्त में परिणामों को सम्प्रेषित करने की प्रक्रिया है।''

"Creativity is a process of becoming sensitive to problems, difficulties, gaps in knowledge, missing elements, disharmonies and so on, identifying the difficulty, searching for solution, making guesses, or formulating hypothesis about the deficiencies, testing and re-testing of these hypothesis and possibly modifying and testing them and finally communicating the results". - **Torrance**

2. **कोल और ब्रूस के अनुसार –**''सृजनात्मकता एक भौतिक उत्पादन के रूप में मानव मन को ग्रहण करने, अभिव्यक्त करने और गुणांकन करने की योग्यता एवं क्रिया है।''

"Creativity is an ability and activity of man's mind to grasp, express and appreciate in the form of an original product."

-Cole and Bruce

3. **क्रो एवं क्रो के अनुसार –** ''सृजनात्मकता मौलिक परिणामों को अभिव्यक्त करने की मानसिक प्रक्रिया है।''

"Creativity is a mental process to express the original outcomes."

-Crow and Crow

4. **ड्रेवल के अनुसार –** '' सृजनात्मकता वह मानवीय योग्यता है जिसके द्वारा वह किसी नवीन रचना या विचारों को प्रस्तुत करता है।''

"Creativity is that human ability by which he presents any novel work or ideas."

-J. E. Drevahal

5. इसराइली एन0 के अनुसार – ''सृजनात्मक बालक किसी नवीन वस्तु का निर्माण एवं उसमें परिवर्तन करने की क्षमता रखता है।''

"Creative children have the capacity of constructing and manipulating any new object."

- Israile N.

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. सृजनात्मकता के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

2. सृजनात्मकता को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

9.4 सृजनात्मकता के महत्वपूर्ण अवयव

सृजनशील बालकों के अन्दर कुछ न कुछ नया करने की जिज्ञासा होती है। इस प्रकार के बच्चों में संवेदनशीलता, मौलिकता, खोजपरकता, प्रवाह, लचीलापन, एवं कल्पना के गुण विद्यमान होते हैं। सृजनात्मकता में पाये जाने वाले महत्वपूर्ण अवयव प्रवाह, विविधता, मौलिकता एवं विस्तारण का विवेचन निम्नानुसार किया जा रहा है।

9.4.1 प्रवाह

प्रवाह

वैचारिक प्रवाह	अभिव्यक्ति प्रवाह	साहचर्य प्रवाह	शब्द प्रवाह

प्रवाह में तर्क का विषय समस्यात्मक होती है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत उत्तर देने वाले को प्रोत्साहित किया जाता है कि वह समस्या के सम्बन्ध में अधिक से अधिक उत्तर दे। समस्या के ऊपर प्रयोज्य द्वारा दी गई उत्तरों की संख्या के आधार पर प्रवाह का अंकन किया जाता है। प्रवाह अंकों को ज्ञात करने के लिए सभी प्रश्नों के प्रवाह अंकों का योग कर लिया जाता है।

9.4.2 विविधता

विविधता से आशय किसी समस्या के ऊपर प्रयोज्य द्वारा जो उत्तर दिये जाते हैं उसमें कितनी भिन्नता है। प्रश्नों के विविधता पर शोधकर्त्ता यह देखने का प्रयास करता है कि विषयी ने किन–किन क्षेत्र में समस्या के ऊपर अपने विचार अभिव्यक्त किए। सम्पूर्ण परीक्षण पर विषयी के विविधता प्राप्तांक को ज्ञात करने के लिए उसके द्वारा विभिन्न प्रश्नों पर प्राप्त विभिन्न प्रकार के अंकों को जोड़ लिया जाता है।

9.4.3 मौलिकता

मौलिकता किसी भी समस्या के उचित समाधान के लिए छात्र द्वारा दी गयी अनुक्रियाओं के नयेपन से है। इसमें यह देखने का प्रयास किया जाता है कि छात्र ने प्रचलित उत्तरों के अलावा जो भिन्न उत्तर प्राप्त होते है वही उसकी मौलिकता होती है। जब छात्र समस्या के समाधान के लिए बिल्कुल अलग नये प्रकार की अनुक्रिया करता है तो ऐसा समझा जाता है कि छात्र के अन्दर मौलिकता का गुण है।

9.4.4 विस्तारण

जब प्रयोज्य द्वारा किसी समस्या पर उत्तर के रूप में अनावश्यक वयाख्या की जाती है तो इस दशा को विस्तारण कहते हैं। इस प्रक्रिया में शोधार्थी को अधूरे वाक्य एवं कुछ अधूरे चित्र को पूर्ण करने के लिए दिया जाता है–

विस्तारण के प्रकार :

1. **शाब्दिक विस्तारण–** शब्दों के द्वारा समस्या का विस्तार किया जाता है।
2. **आकृति विस्तारण–** चित्रों के माध्यम से कुछ जोड़कर सार्थक चित्र बनाने के लिए प्रोत्साहित एवं निर्देशित किया जाता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी– (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3– विस्तारण कितने प्रकार के होते हैं और उनके नाम लिखिए।

9.5 सृजनात्मक की विशेषताएँ

सृजनात्मकता की विशेषताओं की व्याख्या मनोवैज्ञानिकों ने अनेकों प्रकार से की हैं। मनोवैज्ञानिक टोरेन्स ने बहुत ही गहनता से सृजनात्मकता का विस्तृत अध्ययन किया है। उन्होंने सृजनात्मक व्यक्तियों की 84 व्यक्तित्व विशेषताओं की सूची तैयार की है।

सृजनात्मक व्यक्तियों के व्यक्तित्व विशेषताओं की सूची

1. दृढ़ भावात्मकता
2. जोखिम उठाना
3. अव्यवस्था को स्वीकारना
4. अन्यों के प्रति जागरूकता
5. अव्यवस्था के प्रति आकर्षण
6. कठिन कार्यों को करना
7. रचनात्मक आलोचना
8. परार्थोन्मुख
9. सदैव परेशान रहना
10. रहस्यात्मक खोजो के प्रति आकर्षित होना
11. तीव्र व अन्तर्विवेकशील परम्पराएँ
12. साहसिक
13. शिष्टाचार परम्पराओं को स्पष्ट करना
14. स्वास्थ्य परम्पराओं को स्पष्ट करना

15. श्रेष्ठ बनने की इच्छा
16. दृढ़ निश्चय
17. झेंपू व लज्जालु
18. प्रबल व हावी
19. संवेगात्मक
20. संवेगात्मक रूप से संवेदनशील
21. उत्साही
22. असंतुष्ट
23. व्यवस्था को बिगाड़ने वाले
24. विभेदीकृत मूल्य अधिक्रम
25. दोष निकालने वाला
26. लोगो की चिन्ता नही करना
27. जिज्ञासा से परिपूर्ण
28. एकान्तप्रिय
29. प्रायः आत्म–सन्तुष्ट प्रतीत होना
30. निर्णय में स्वतन्त्रता
31. अनुभव करना सारी व्यवस्था गड़बड़ है
32. चिन्तन में स्वतन्त्रता
33. व्यक्तिवादी
34. अन्तः प्रज्ञात्मक
35. परीश्रमी
36. अन्तःमुखी
37. व्यावहारिक योग्यता में कमी
38. त्रुटि करना
39. कमी न करना
40. जनप्रिय न होना

41. विचित्र आदतें
42. सतत्
43. अपने विचारों में लीन
44. आक्रामक व पलायनवादी नही
45. जटिल विचारों को पसंद करना
46. अनैष्ठिक
47. अनियमित समय पर कार्य करना
48. प्रश्न करने की योग्यता
49. आमूलचूल परिवर्तनवादी
50. बाह्य सवेंदनाओं को ग्रहण करना
51. अन्य व्यक्तियों के विचारों का ग्राही
52. कभी–कभी पलायनवादी
53. विचारों के दमन का विरोधी
54. दमन को नकारना
55. संकल्पी
56. आत्म–सात
57. आत्म–सचेत
58. आत्म–विश्वासी
59. आत्म–निर्भर
60. हँसोड़
61. सुन्दरता के प्रति संवेदनशील
62. स्वचालित
63. अधिकारों को त्यागने वाला
64. निश्छल
65. अपने आपको थोपने वाला
66. नियति को मानना

67. छोटी–छोटी बातों से अरूचि
68. परिकल्पनात्मक
69. असहमत होने को तत्पर
70. दूरगामी लक्ष्यों का आकांक्षी
71. हठी या अड़ियाल
72. अस्थायी स्वाभाव
73. दृढ़
74. वात्सल्य
75. डरपोक
76. परिपूर्ण
77. शक्ति से परे तटस्थ
78. कुछ असंस्कृत, आदिम
79. अपरिष्कृत
80. कहने मात्र से किसी वस्तु को स्वीकार करने का अनिच्छुक
81. दृष्टा
82. बहुमुखी
83. जोखिम उठाने को तैयार
84. कुछ विरक्त और खामोश

बोध प्रश्न–

टिप्पणी– (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4– सृजनात्मकता के लिए टोरेन्स के द्वारा दी गई 10 व्यक्तित्व विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

9.6 सृजनात्मक बालकों की पहचान

सृजनशील बालक भी सामान्य बालकों के समान ही व्यवहार करते हैं। सृजनशीलता की पहचान बालक के चारित्रिक गुणों के आधार पर किए जाते हैं। सृजनशील बालकों की पहचान उनमें पाये जाने वाले विशिष्ट गुणों और लक्षणों के आधार पर किए जाते हैं।

गिलफोर्ड के अनुसार सृजनशील बालकों के पहचान के प्रमुख लक्षण :—

1. चिन्तन, मनन एवं अभिव्यक्ति की योग्यता सृजनशील बालकों में पायी जाती है।
2. ऐसे बालक जो किसी समस्या के पूर्व में किए गए व्याख्यान के अतिरिक्त पुनः व्याख्यान देने की क्षमता रखते हैं। ऐसे बालकों में सृजनशील गुणों एवं शक्तियों का समावेश होता है।
3. ये अधिक संवेदनशील होते है।
4. सृजनात्मक बालक किसी भी कार्य को बड़ी ही तत्परता, सावधानी एवं गम्भीर ता से आत्मसात करते हैं।
5. सृजनात्मक बालक चिन्तन, तर्क एवं कल्पना शक्ति के द्वारा असामान्य विचारों के साथ अच्छी तरह से समायोजन स्थापित करने की क्षमता रखते हैं।
6. सृजनात्मक बालक अपने विचारों के माध्यम से अन्य व्यक्तियों के सोच एवं कार्य पद्धति में परिवर्तित करा लेने की क्षमता में निपुण होते हैं।
7. सृजनात्मक बालक अपने किसी कार्य में बाधा व परतन्त्रता को स्वीकार नहीं करते हैं।
8. सृजनात्मक बालक कर्तव्यनिष्ठ एवं अपने उत्तरदायित्व के प्रति सचेष्ट होते हैं।
9. सृजनशील बालक जब किसी उद्देश्य को लेकर अपना कार्य करते हैं और वे तब तक कार्य करते रहते हैं जब तक उन्हें अपने द्वारा निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो जाती।
10. सृजनशील बालकों में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता होती है।
11. सृजनशील बालक दृढ़ होते है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5 – सृजनशील बालकों के पहचान के कुछ प्रमुख लक्षणों को लिखिए।

____

____

____

9.7 सृजनात्मकता का मापन

शैक्षिक दृष्टि से सृजनात्मकता का मापन एवं पहचान करना जटिल कार्य है। मनोवैज्ञानिकों ने सृजनात्मक बालकों की पहचान के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का निर्माण किया। कुछ प्रमुख परीक्षणों का वर्णन निम्नवत् है–

9.7.1 कालेज छात्रों के लिए सृजानात्मक परीक्षण

1960 में गिलफोर्ड और मैरी फील्ड द्वारा इस परीक्षण का निर्माण किया गया था। इस परीक्षण के अनुसार सृजानात्मक चिन्तन में गैर पम्परागत उत्पादन, रूपान्तरण तथा पुनः परिभाषीकरण की क्षमताएँ व योग्यताएँ पायी जाती है। इस परीक्षण से सृजनात्मकता का मापन करने के लिए छह प्रमुख कारकों को महत्व दिया गया है।

1. समस्या के प्रति संवेदनशीलता
2. विविधता
3. प्रवाह
4. मौलिकता
5. विस्तारण
6. पुनः परिभाषीकरण

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6 – कॉलेज के छात्रों के लिए सृजानात्मक परीक्षण का निर्माण किसने किया था।

____

____

9.7.2 टोरेन्स का सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण

इस परीक्षण का निर्माण टोरेन्स ने 1962 में किया था। ये परीक्षण दो प्रकार की होती हैं।

1. **शाब्दिक परीक्षण –** इसमें शब्दों के साथ सृजनात्मक चिन्तन किया जाता है।
2. **आकृतिक परीक्षण –** इसमें चित्रों के साथ सृजनात्मक चिन्तन किया जाता है।

इस परीक्षण के लिए चार प्रकार के कार्य किए जाते हैं–

1. इस परीक्षण में चित्र की सहायता से कई प्रकार के प्रश्नों को पूछना।
2. किसी वस्तु में परिवर्तन करने के लिए अधिक से अधिक विकल्प प्रस्तुत करना एवं सुझाव देना
3. किसी सामान्य वस्तु का अधिकाधिक प्रयोग को कैसे किया जाय इसको बताने के लिए उत्सुक रहना।
4. किसी दी गयी वक्रीय रेखा के चारों ओर कोई चित्र लगाना तथा चित्र को शीर्षक देना।

टोरेन्स के सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण के द्वारा प्रभाव, विविधता, मौलिकता तथ्य विस्ताण पर बालकों के द्वारा व्यक्त किए गये प्रतिक्रियाओं पर प्राप्तांक दिए जाते हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7 –शाब्दिक परीक्षण एवं आकृतिक परीक्षण को समझाइए।

____

____

____

9.7.3 सृजनात्मक परीक्षण

प्रो0 **बी0 के0 पासी** ने सृजनात्मक परीक्षण का निर्माण 1972 ई0 में किया था। पासी के सृजनात्मक परीक्षण में कुल 6 परीक्षण सम्मिलित है –

1. समस्यात्मक परीक्षण

2. असामान्य प्रयोग परीक्षण
3. परिणाम परीक्षण
4. प्रश्नात्मक योग्यता परीक्षण
5. वर्ग पहेली परीक्षण
6. ब्लाक परीक्षण

पासी के सृजनात्मक परीक्षण में शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों ही प्रकार के कार्यों का समावेश हैं। परीक्षण पर कुल सृजनात्मक प्राप्तांक के साथ 14 अन्य प्राप्तांक भी प्राप्त होते है।इस परीक्षण से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक 0.68 से 0.90 तक होता है और इसमें वैधता गुणांक 0.30 से 0.74 तक पाया गया है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8 –सृजनात्मकता परीक्षण का निर्माण किसने और कब किया था।

____

____

____

9.7.4 सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण

बाकर मेंहदी ने सन् 1973 में सृजानात्मक चिन्तन परीक्षण का निर्माण में किया था। इस परीक्षण में संशोधन सन् 1985 में किया गया था। बाकर मेंहदी ने इस परीक्षण के द्वारा प्रयोग के लिए दो प्रतिरूपों का निर्माण किया था–

1. प्रथम प्रतिरूप – शाब्दिक परीक्षण 2. द्वितीय प्रतिरूप – अशाब्दिक परीक्षण

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9 – बाकर मेहदी द्वारा परीक्षण में प्रयोग किए गये दो प्रतिरूपों के नाम लिखिए।

____

____

____

1. शाब्दिक परीक्षण :– इस परीक्षण में कुल चार उप परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

(a) यदि ऐसा हो जाय तो

(b) वस्तुओं के नवीन प्रयोग

(c) नये–नये सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त करना।

(d) वस्तुओं को मनोरंजक बनाना। इस परीक्षण के प्रयोग के लिए 48 मिनट का समय निश्चित किया गया है। इस परीक्षण का अंकन प्रवाह, लचीलेपन एवं मौलिकता के आधार पर किया जाता है।

2 अशाब्दिक परीक्षणः – अशाब्दिक परीक्षण के अन्तर्गत तीन क्रियाओं को सम्मिलित किया गया है –

(a) चित्र निर्माण की क्रियाएँ

(b) चित्र पूर्ति की क्रियाएँ

(c) त्रिभुजाकार तथा अण्डाकार आकृति की क्रियाएँ।

चित्र निर्माण, चित्र पूर्ति तथा त्रिभुजाकार तथा अण्डाकार आकृति की क्रियाओं के लिए अलग–अलग समय निर्धारित किया गया है। प्रथम क्रिया के लिए 5 मिनट, दूसरी क्रिया के लिए 10 मिनट एवं अन्तिम क्रिया के लिए भी 10 मिनट का समय निध ाारित किया गया है। तीसरी क्रिया के अर्न्तगत ऐसे चित्र का निर्माण करना होता है कि कोई दूसरा व्यक्ति उस प्रकार के चित्र को न बना सके। विस्तारण तथा मौलिकता का परीक्षण अशाब्दिक परीक्षणों के माध्यम से किया जाता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10 – शाब्दिक परीक्षण में प्रयुक्त चार उप परीक्षणों का नाम लिखिए।

9.8 सृजनशील बालकों के लिए शिक्षा नियोजन

सृजनात्मकता का प्रयोग शिक्षा के क्षत्र में अत्यधिक किया जाता है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है। अतः निष्कर्षस्वरूप हम कह सकते हैं कि शिक्षा के द्वारा ही सृजनात्मकता का विकास होता है सृजनात्मकता के कारण व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता है। शिक्षा व्यक्ति को जीवन पर्यन्त ऐसे अवसर उपलब्ध कराती है कि व्यक्ति के अन्दर सृजनात्मक का सष्जन हो जाय और वह जीवन में आने समस्त समस्याओं का सामना कर सके तथ नवीन कार्य को करने हेतु उन्मुख हो सके। सृजनात्मकता के माध्यम से ही व्यक्ति वैज्ञानिक, कवि, साहित्यकार, कलाकार एवं तकनीशियन बन पाते है। शिक्षा सृजनात्मकता के विकास के लिए एक उत्तम माध्यम है। शिक्षा के अन्तर्गत बुद्धि, सीखना, स्मृति, कल्पना, चिन्तन और तर्कना आदि समाहित है और इन प्रमुख तत्वों के अभाव में सृजनात्मकता कार्य नही कर सकती। ये सभी तत्व सृजनात्मकता के सहायक घटक है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिक्षा और सृजनात्मकता में घनिष्ठ सम्बन्ध है। किसी भी बालक के अन्दर सर्जनात्मकता का विकास करने के लिए शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षण प्रविधि, शैक्षिक पाठ्यक्रम शिक्षक, कक्षा—कक्ष प्रक्रिया के बाधक घटकों को दूर करना, सहायक घटकों को प्रोत्साहित करने की नितान्त आवश्यकता होती है। सृजनात्मकता को बढ़ावा देने के लिए शिक्षाविदों द्वारा दिए गये कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्नांकित है—

1. बालकों के अन्दर सृजनात्मकता को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें शिक्षित एवं प्रशिक्षित करने वाले अध्यापक भी सृजनशील हों।

2. शिक्षकों को बालकों के अन्दर सृजनात्मकता के लिए नवीन सूचनाओं को एकत्रित करने की भावना का विकास करना चाहिए।

3. शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास को विकसित करने के लिए सृजनात्मक प्रकृति की प्रतिस्पर्धा करानी चाहिए।

4. छात्रों के अन्दर नवीन विचारों को धारण करने की प्रवृत्ति का विकास करना चाहिए।

5. कक्षा में अध्यापकों को छात्रों के सम्मुख समस्यात्मक प्रश्नों को रखना चाहिए एवं छात्रों से उस समस्या के ऊपर टिप्पणी करने तथा उनकी राय लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। छात्रों द्वारा दिये गये सुझावों का निष्पक्ष एवं उचित मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

6. छात्रों के अन्दर विषय के प्रति रूचि उत्पन्न करने के लिए शिक्षकों को शिक्षार्थियों के अनुकूल वातावरण का निर्माण करना चाहिए।

7. नवीन वस्तुओं के निर्माण एवं शोध कार्य इत्यादि क्रियाकलापों में प्रतिभाग करने के लिए छात्रों को बराबर अभिप्रेरित करना चाहिए।

8. शिक्षार्थी के जीवन में आने वाली बाधाओं को दूर करने की क्षमता का विकास करना चाहिए तथा परिस्थिति के साथ समायोजन करने योग्य बनाना चाहिए।

9. मनसिक योग्ताओं, वैचारिक प्रवाह, मौलिकता, लचीलापन, तार्किक चिन्तन एवं उनमें निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना चाहिए।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (1) नीचे लिखे खाली स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(2) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11 – सृजनात्मकता को बढ़ावा देने के लिए दिये गये कुछ महत्वपूर्ण सुझावों को लिखिए।

____

____

____

9.9 सारांश

आज के युग में वही बालक अपना उचित समायोजन कर सकता है जिसमें कुछ अलग करने की क्षमता हो और ऐसा वही बालक कर सकते हैं जिनका सर्वांगीण विकास हुआ हो और यह शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। सर्जनात्मकता एक विशेष प्रकार से चिन्तन करने का तरीका है। जिसमें मौलिकता, लचीलापन, धारा प्रवाहिता, विस्तारण आदि का योग हो उसे सृजनात्मकता की संज्ञा दी जा सकती है। सृजनात्मकता का क्षेत्र बहुत व्यापक है। सृजनात्मकता की पहचान व्यक्ति के व्यवहारों के आधार पर ज्ञात की जाती है। सृजनात्मकता का मापन करना एक जटिल कार्य था, परन्तु कई प्रकार के परीक्षणों के निर्माण से इसका मापन आसानी से किया जा सकता है। सृजनात्मकता का बालक में विकास स्कूल एवं कक्षा के वातावरण पर निर्भर करता है। इसलिए स्कूल एवं कक्षा का वातावरण छात्र के पढ़ने के अनुकूल होनी चाहिए। शिक्षक भी अपने छात्रों की सृजनात्मक प्रवृत्ति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकते हैं। अतः उन्हें भी सृजनशील होना चाहिए। अतः हम कह सकते हैं कि शिक्षा और सृजनात्मकता में घनिष्ठ सम्बन्ध है। आज के वर्तमान परिवेष में शिक्षा के अतिरिक्त अन्य सभी क्षेत्रों में सृजनात्मकता का अधिकाधिक प्रयोग हो रहा है।

9.10 अभ्यास कार्य

1. सृजनात्मकता को परिभाषित कीजिए। सृजनात्मक बालकों की पहचान के लक्षण को लिखिए।
2. सृजनात्मक बालक की शिक्षा व्यवस्था का सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. सृजनशील बालकों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. सृजनात्मकता के विभिन्न तत्वों की विवेचना कीजिए।
5. टोरेन्स के सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण का वर्णन कीजिए।

9.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. गुप्ता,एस0 पी0 एवं गुप्ता, अल्का (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. पाण्डेय रामशकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर0 एल0 बुक डिपो, मेरठ।
3. सारस्वत, मालती (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन, लखनऊ
4. सिंह, अरुण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी0बी0 प्रिन्टर्स, पटना।

9.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सृजनात्मकता को अंग्रेजी भाषा में क्रियेटिविटी कहते हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार सृजनात्मकता के लिए विधायकता, उत्पादकता, खोज, मौलिकता इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। साधारण शब्दों में, सृजनात्मकता का अर्थ है– सृजन अथवा रचना सम्बन्धी योग्यता।
2. **ड्रेवेल के अनुसार–** ''सृजनात्मकता वह मानवीय योग्यता है जिसके द्वारा वह किसी नवीन रचना या विचारों को प्रस्तुत करता है।''
3. विस्तारण दो प्रकार के होते हैं –
   (i) शाब्दिक विस्तारण
   (ii) आकृति विस्तारण
4. 1. दृढ़ भावात्मकता
   2. जोखिम उठाना
   3. अव्यवस्था को स्वीकरना
   4. अन्यों के प्रति आकर्षण

5. अव्यवस्था के प्रति आकर्षण

6. कठिन कार्यों को करना

7. रचनात्मक आलोचना

8. परार्थोन्मुख

9. सदैव परेशान रहना

10. रहस्यात्मक खोजो के प्रति आकर्षित होना

5- 1. सृजनशील बालक कर्त्तव्यनिष्ठ तथा अपने उत्तरदायित्व के प्रति सचेष्ट होते हैं।

2. सृजनशील बालक अपने किसी कार्य में बाधा व परतन्त्रता स्वीकार नहीं करते हैं।

6. सन् 1960 में गिलफोर्ड और मैरी फील्ड ने किया था।

7- (1) **शाब्दिक परीक्षण** में शब्दों के साथ सृजनात्मक चिन्तन किया जाता है।

(2) **आकृतिक परीक्षण** में चित्रों के साथ सृजनात्मक चिन्तन किया जाता है।

8. सृजनात्मक परीक्षण का निर्माण प्रो0 वी. के. पासी ने सन् 1972 में इन्दौर में किया था।

9- (i) प्रथम प्रतिरूप – शाब्दिक परीक्षण

(ii) द्वितीय प्रतिरूप – अशाब्दिक परीक्षण

10- (i) यदि ऐसा हो जाय (ii) वस्तुओं के नवीन प्रयोग (ii) नये–नये सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त करना

(iv) वस्तुओं को मनोरंजक बनाना। इस परीक्षण के प्रयोग के लिए 48 मिनट का समय निश्चित किया गया है।

11- (1) शिक्षकों को बालकों के अन्दर सृजनात्मकता के लिए नवीन सूचनाओं को एकत्रित करने की भावना का विकास करना चाहिए।

(2) शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास को विकसित करने के लिए सृजनात्मक प्रकृति की प्रतिस्पर्धा करानी चाहिए।

खण्ड : चार

अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

इकाई - 10 7
अभिप्रेरणा, चिन्तन, तर्क एवं समस्या समाधान

इकाई - 11 36
स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई - 12 68
तनाव, कुण्ठा एवं द्वन्द्व

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0 पी0 दुबे	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	पूर्व निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 अखिलेश चौबे	पूर्व आचार्य, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 विद्या अग्रवाल	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 प्रतिभा उपाध्याय	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डा0 गिरीश कुमार द्विवेदी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0उषा मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समन्वयक

डॉ0 रंजना श्रीवास्तव	प्रवक्ता, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

ISBN-UP-978-93-83328-00-0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक ; कुलसचिव, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज-2019

मुद्रक : **d0l h0fifVx ,.M ,ykbM oDl] ipoVh] eFkjk&281003-**

B.Ed.E-01 : शैशवकाल और उसका विकास

खण्ड–एक शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

इकाई–1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई–2 शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियॉ

इकाई–3 वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएं

खण्ड–दो शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

इकाई–4 शारीरिक और संवेगात्मक विकास

इकाई–5 संज्ञानात्मक विकास एवं भाषा विकास

इकाई–6 सामाजिक एवं नैतिक विकास

खण्ड–तीन बुद्धि, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता

इकाई–7 बुद्धि सम्प्रत्यय सिद्धान्त एवं मापन

इकाई–8 व्यक्तित्व सम्प्रत्यय एवं मापन

इकाई–9 सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

खण्ड–चार अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

इकाई–10 अभिप्रेरणा, तर्क एवं समस्या समाधान

इकाई–11 स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई–12 तनाव, कुण्ठा और द्वन्द्व

खण्ड–पॉच विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

इकाई–13 विशिष्ट बालक

इकाई–14 मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान तथा समायोजन

इकाई–15 समूह मनोविज्ञान

खण्ड- चार : अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

खण्ड परिचय :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य के अन्दर सीखने सिखाने की प्रक्रिया आजीवन चलती रहती है। सीखने की मात्रा को कई वाह्य एवं आन्तरिक धटक प्रभावित करते रहते हैं। कोई बालक जब किसी कार्य से खिन्न हो जाता है तो उन्हें कई प्रकार से अभिप्रेरित कर उस कार्य के प्रति उनकी रूचि उत्पन्न की जाती है। व्यक्ति समस्याओं का समाधान चिन्तन एवं तर्क के माध्यम से करते हैं। मनुष्य के शैशवावस्था से प्रौढ़ावस्था तक के सफर में अनेक उतार–चढ़ाव आते हैं। मनुष्य के स्मृति पटल में अनेक विचार आते और जाते रहते हैं। मनुष्य समयान्तराल के कारण कुछ तथ्यों को विस्मृत कर जाते हैं। लगातार प्रयास एवं अभ्यास से बालकों के अन्दर आदत का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार की प्रवृत्ति का विकास अनुशासन के द्वारा सम्भव होता है। जब व्यक्ति को किसी कार्य को करने के लिए विवश किया जाता है तब उनके अन्दर द्वन्द्व उत्पन्न होता है। प्रस्तुत खण्ड में अभिप्रेरणा, चिन्तन, तर्क, समसया समाधान, स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण, अनुशासन, तनाव, कुण्ठा एवं द्वन्द्व का अध्ययन तीन इकाईयों के अन्तर्गत किया गया है।

इकाई – 10. बालक अपने जीवन में नित नये नये कार्य को करता है। वह कुछ कार्यों को आसानी से सीख लेता है और कुछ को सीखने में समस्या का अनुभव करता है। सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को गति देने के लिए बालकों को विभिन्न प्रकार से अभिप्रेरित किया जाता है। व्यक्ति के जीवन में अनेक प्रकार से अभिप्रेरित किया जाता है।व्यक्ति के जीवन में अनेक प्रकार की समस्याएँ आती रहती हैं। व्यक्ति उनके समाध ाान के लिए चिन्तन करता है।तर्क करता है। और अन्त में वातावरण के साथ सामन्जस्य बैठाकर उसका समाधान प्राप्त करता है। प्रस्तुत इकाई में अभिप्रेरणा, चिन्तन, तर्क एवं समस्या समाधान के अर्थ, प्रकार एवं उन्हें उन्नत बनाने के उपायों के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा की गई है।

इकाई 11. स्मृति एवं विस्मरण का मानव के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य अपने अनुभवों एवं अभ्यास के माध्यम से लगातार कुछ न कुछ सीखता रहता है जो उसके स्मृति पटल में संरक्षित होते रहते हैं। कुछ सीखी हुई बातें समयान्तराल के कारण विस्मृत हो जाती है। स्मरण की प्रक्रिया का भी अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। बालक प्रतिदिन कुछ न कुछ सीखने के लिए पूर्व अनुभवों का लाभ उपयोग में लाता है। लगातार अभ्यास के द्वारा किसी विषय वस्तु को सरलता से सीख लेता है। किसी कार्य को लगातार करने से बालक के अन्दर आदत के निर्माण का विकास होता है जो

अनुशासन के द्वारा ही सम्भव है। प्रस्तुत इकाई में स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन की विस्तृत विवेचना की गयी है।

इकाई – 12 मनुष्य जन्म से मृत्यु तक के सफर में विकास की कई अवस्थाओं जैसे शैशवावस्था, बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था से गुजरता है। उसे प्रत्येक अवस्था से कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त होते हैं। व्यक्ति का जीवन सुख दुख का मिश्रण है। सुख प्राप्त होने पर आनन्द की अनुभूति होती है। जबकि उसके विपरीत दुख या समस्या प्राप्त होने पर मन, उदास, खिन्न एवं व्यक्ति हमेशा चिन्तित रहता है। समस्याओं के जन्म लेने के कारण व्यक्ति के अन्दर तनाव, कुण्ठा, एवं द्वन्द्व उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति अनेक प्रकार से चिन्तन, विचार विमर्श एवं परामर्श लेकर अपने उलझन और समस्याओं का समाधान करने का प्रयास करता है। प्रस्तुत इकाई में तनाव, कुण्ठा एवं द्वन्द्व के अर्थ, परिभाषाएं, उनके प्रकार और उनको प्रभावित करने वाले कारकों इत्यादि के विषय में विस्तृत वर्णन किया गया है।

इकाई — 10 : अभिप्रेरणा, तर्क और समस्या—समाधान

इकाई की रूपरेखा —

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 अभिप्रेरणा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

10.3.1 अभिप्रेरणा का अर्थ

10.3.2 अभिप्रेरणा की परिभाषाएँ

10.4 अभिप्रेरणा के स्त्रोत

10.4.1 आवश्यकता

10.4.2 अंतर्नोद

10.4.3 उद्दीपन

10.4.4 अभिप्रेरक

10.5 अभिप्रेरकों का वर्गीकरण

10.5.1 जन्मजात अभिप्रेरक

10.5.2 अर्जित अभिप्रेरक

10.5.3 स्वाभाविक अभिप्रेरक

10.5.4 कृत्रिम अभिप्रेरक

10.5.5 सामाजिक अभिप्रेरक

10.5.6 मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरक

10.6 अधिगम में अभिप्रेरणा की प्रविधियाँ

10.6.1 अदम्य इच्छाशक्ति द्वारा अभिप्रेरणा

10.6.2 शिक्षक के व्यवहार द्वारा अभिप्रेरणा

10.6.3 अधिगम के उद्देश्य तथा ज्ञान द्वारा अभिप्रेरणा

12.6.4 अभिप्रेरणा और आकांक्षा

10.6.5 सकारात्मक प्रतियोगिता की भावना का विकास

10.6.6 सफलता एवं मान—सम्मान

10.6.7 पुरस्कार एवं दण्ड द्वारा अभिप्रेरणा

10.6.8 प्रशंसा एवं निन्दा द्वारा अभिप्रेरणा

10.7 चिन्तन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

10.7.1 चिन्तन का अर्थ

10.7.2 चिन्तन की परिभाषाएँ

10.8 चिन्तन की विशेषताएँ

10.9 चिन्तन के प्रकार

10.10 चिन्तन के साधन

10.11 चिन्तन विकास के उपाय

10.12 तर्क

10.12.1 तर्क के अर्थ एवं स्वरूप

10.12.2 तर्क की परिभाषाएँ

10.13 तर्क के पद

10.14 तर्क के प्रकार

10.15 तर्क के शैक्षिक महत्व

10.16 समस्या–समाधान

10.16.1 समस्या–समाधान का अर्थ

10.16.2 समस्या–समाधान की परिभाषाएँ

10.17 समस्या–समाधान में प्रयुक्त होने वाली विधियाँ

10.17.1 समस्या–समाधान की वैज्ञानिक विधि

10.18 समस्या–समाधान विधि का शिक्षा में महत्व

10.19 सांराश

10.20 अभ्यास कार्य

10.21 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.22 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.1 प्रस्तावना

जन्म से ही बालक के सीखने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। मनुष्य की स्वाभाविक प्रकृति है कि वह प्रतिक्षण कुछ न कुछ सीखता रहता है। बाल्यावस्था में यह गति तीव्र होती है। बाद में, इसमें शिथिलता आती जाती है परन्तु यह प्रक्रिया मृत्यु–पर्यन्त निरन्तर चलती रहती है। बालक बचपन से ही बड़ो के व्यवहार से सीखता है एवं अनुभव प्राप्त करता है। यही अनुभव एवं ज्ञान बालक के अन्दर घटित पूर्व ज्ञान पर आधारित होता है और उसे समस्याओं के समाधान हेतु सदैव प्रोत्साहित करता है।

कोई भी व्यक्ति चाहे वह वृद्ध हो या बालक वह प्रत्येक कार्य किसी लक्ष्य से प्रेरित होकर ही करता है। बालक अपनी अभिरूचि, मूल प्रवषत्ति एवं अभिप्रेरकों द्वारा प्रेरित होकर ही लक्ष्य की ओर उन्मुख होता है। लक्ष्य की प्राप्ति से बालक के जीवन को एक आनन्द एवं अभिप्रेरणा प्राप्त होती है। जिसके द्वारा वह भविष्य में और अधिक कार्य करने अथवा शिक्षा प्राप्त करने को प्रेरित होता है। बालक का प्रत्येक कार्य किसी न किसी कारण से नियोजित होता है जिसके फलस्वरूप प्रतिक्रिया के रूप में कार्य का प्रयोजन सिद्ध होता है। किसी भी कार्य के सम्पादन के लिए कारक आवश्यक तत्व होते हैं। बिना किसी कारक के कार्य किया जाना सम्भव नहीं होता है। ये कारक विशेष ही अभिप्रेरणा या प्रेरक कहे जाते है। बालक अपने ज्ञान एवं अनुभव का सहारा लेकर कार्य करने के लिए विचार करता है, उस कार्य में अग्रसर होता है किन्तु अभिप्रेरणा या कार्य करने के प्रेरक तत्वों के अभाव में कार्य पूर्ण नही किया जा सकता है। ये प्रेरक तत्व बालक में जन्मजात भी हो सकते हैं या , उन्हें अर्जित भी किया जा सकता है। मनुष्य एक बुद्धिमान प्राणी है। वह सभी कार्यो के सुचारू संचालन हेतु एक योजना बनाता है। अपनी योजना या समस्या के समाधान के लिए कई प्रकार से प्रयास करता है। ऐसा करने के लिए वह चिन्तन एवं विचार–विमर्श करता है। चिन्तन एवं तर्क के माध्यम से मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए उसका समाधान खोजता है। इस चिन्तन शक्ति के द्वारा ही मानव अन्य प्राणियों से श्रेण्ठ माना जाता है। प्रस्तुत इकाई में अभिप्रेरणा के स्वरूप, प्रकार एवं उसे प्रभावित करने वाले कारकों, चिन्तन, तर्क एवं समस्या समाधान के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की गई है।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेगे कि–

1. अभिप्रेरणा के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. अभिप्रेरणा के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
3. अधिगम की प्रक्रिया में अभिप्रेरणा के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. अधिगम की प्रक्रिया में अभिप्रेरणा की आवश्यकता के विषय में विचार व्यक्त कर सकेंगे।
5. चिन्तन के अर्थ और परिभाषाओं को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. चिन्तन की विशेषताओं और उनके प्रकार को वर्णित कर सकेंगे।
7. चिन्तन विकास के उपाय को बता सकेंगे।
8. तर्क और समस्या समाधान के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।

9. तर्क के शैक्षिक महत्व की विवेचना कर सकेंगे।
10. समस्या समाधान के वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग कर सकेंगे।
11. समस्या समाधान विधि का शिक्षा में क्या महत्व है इससे अवगत हो सकेंगे।

10.3 अभिप्रेरणा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

10.3.1 अभिप्रेरणा का अर्थ

अभिप्रेरणा को अंग्रेजी में Motivation कहते है। ''Motivation" शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के ''Motum" शब्द से हुई है, जिसका अर्थ होता है – Move, Motor एवं Motion (गति देना)।

अभिप्रेरणा मनुष्य की आन्तरिक मानसिक शक्ति है। इस आन्तरिक अभिप्रेरक शक्ति को देखना या उसका स्पर्श कर पाना सम्भव नहीं है। यह शक्ति अनुभवजन्य शक्ति है। इसे अपने अंतःकरण में अनुभव किया जा सकता है। यह वह शक्ति है जो लक्ष्य प्राप्ति हेतु मानसिक रूप से प्रेरित या उत्तेजित होती है। यह अभिप्रेरणा शक्ति सभी मनुष्यों के अन्तःकरण में विद्यमान होती है। इस अभिप्रेरणा शक्ति से लक्ष्य प्राप्ति होते ही अनेक कार्य सम्पादित किये जाते है, किन्तु इस अभिप्रेरणा शक्ति के साथ 'क्यों?' शब्द का अस्तित्व सदैव विद्यमान रहता है। जैसे – मुझे पढ़ाई करनी है? मुझे स्कूल जाना है? मुझे धनार्जन करना है? इन सभी प्रश्नों का सम्बन्ध प्रेरणा से होता है साथ ही यह लक्ष्य का सही मार्ग भी स्थापित करती है। अभिप्रेरणा के अर्थ को उपर्युक्त विवेचना के अनुसार इस प्रकार व्यक्त कर सकते है – अभिप्रेरणा से तात्पर्य बालक के अन्दर संचित उसकी आन्तरिक शक्ति है, जो अदृश्य होती है, यह आन्तरिक शक्ति बालक को लक्ष्य प्राप्त करने के लिए उचित दिशा में कार्य करने हेतु अभिप्रेरित करती है।

10.3.2 अभिप्रेरणा की परिभाषाएँ

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरणा की अलग–अलग परिभाषाएँ दी है। कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित है–

लॉवेल के अनुसार – ''अभिप्रेरणा एक ऐसी मनोशरीर क्रियात्मक या आन्तरिक प्रक्रिया है जो किसी आवश्यकता की उपस्थिति से उत्पन्न होती है। यह ऐसी क्रिया की ओर गतिशील होती है जो उस आवश्यकता को सन्तुष्ट करेगी।''

"Motivation may be defined more formally as a Psycho-Physiological or internal process, initiated by some need, which leads to an activity which satisfy that need."

- Lowell

गुड के अनुसार – ''प्रेरणा कार्य को आरम्भ करने, जारी रखने और नियमित करने की प्रक्रिया है।''

"Motivation is the process of arousing, sustaining and regulating activity."

- **Good**

एटकिन्सन के अनुसार – ''अभिप्रेरणा का सम्बन्ध किसी एक अथवा अधिक प्रभावों को उत्पन्न करने के लिए व्यक्ति में कार्य करने की प्रवृत्ति को उद्वेलित करने से होता है।''

"The team motivation refers to the arousal of a tedency to act, to produce one or more effects." **-Atkinson**

मार्गन,किंग,वीज एवं स्कोप्लर के अनुसार– ''अभिप्रेरणा चालन एवं कर्षण शक्तियों को व्यक्त करती है, जिसका परिणाम सतत् व्यवहार में विशिष्ट लक्ष्यों की ओर निर्देशित करना है।''

"Motivation refers to the driving and pulling forces which result in persistent behavior directed towards particular goals."

- Morgan, King, Weish and Schopler

विभिन्न विद्वानों की परिभाषाएँ स्पष्ट करती हैं कि विद्यार्थी की एक विशिष्ट अवस्था ही अभिप्रेरणा है। यह वह अवस्था है अथवा वह प्रेरक शक्ति है जो उसे लक्ष्य की ओर निर्देशित करती है। लक्ष्य प्राप्ति तक बालक क्रियाशील रहता है तदुपरान्त उसकी क्रियाशीलता स्वतः समाप्त हो जाती है। जैसे भूखा बालक भोजन प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरणा प्राप्त कर क्रियाशील हो उठता है किन्तु भोजन कर लेने के बाद अर्थात लक्ष्य प्राप्ति के बाद उसकी क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है। अन्य अभिप्रेरणाओं में भी इस प्रक्रिया को देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

1. अभिप्रेरणा किसे कहते है? उसकी परिभाषा लिखिए।

____

____

____

10.4 अभिप्रेरणा के स्रोत

अभिप्रेरणा का अर्थ एवं उसका स्वरूप स्पष्ट हो जाने तथा परिभाषाओं के सम्यक विश्लेषण के बाद यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि अभिप्रेरणा का सीखने –

सिखाने की प्रक्रिया में अहम स्थान है। आवश्यकता उत्पन्न होने पर ही अभिप्रेरणा अस्तित्व में आती है। उसके बाद ही क्रियाशीलता का जन्म होता है और आवश्कता पूर्ण होने पर अर्थात लक्ष्य की प्राप्ति होने पर प्रेरणा का अन्त हो जाता है। अभिप्रेरणा के निम्नलिखित चार घटक हैं–

(क) आवश्यकता

(ख) अंतर्नोद

(ग) उद्दीपन

(घ) प्रेरक

10.4.1 आवश्यकता

मनुष्य को अपने जीवन को व्यवस्थित एवं उसके सुचारू संचालन के लिए विभिन्न प्रकार के संसाधनों की आवश्यकता पड़ती है। खुशहाल जीवन जीने के लिए इन आवश्यकताओं को पूरा किया जाना नितांत आवश्यक होता है क्योंकि इनकी पूर्ति मनुष्य को संतुष्टि प्रदान करती है। जब कि इसके विपरीत आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर असंतुष्टि का भाव जाग्रत होता है। अर्थात् किसी भी कार्य के मूल में आवश्यकताएँ होती है। यदि एक छोटे से शिशु का भी उदाहरण लें तो स्पष्ट हो जायेगा कि भूख लगने पर तनावग्रसित होने पर ही बच्चा रोने लगता है। तनाव के कारण वह क्रियाशील हो जाता है और यह क्रियाशीलता व तनाव तब तक बनी रहती है जब तक उसे लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो जाती। अर्थात उसकी आवश्यकता की पूर्तिनहीं होती है। भोजन अर्थात दूध प्राप्त कर बालक की क्षुधा शांत हो जाती है जिससे उसके अन्दर व्याप्त असंन्तुलन एवं क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है। जीवन में समय–समय पर व्यक्ति द्वारा संचालित विभिन्न क्रिया–कलापों में अलग–अलग स्रोतों की आवश्यकता पड़ती है। आवश्यकतानुसार स्रोत प्राप्त न होने पर तनाव, असंतुलन, चिंता आदि व्यक्ति के अन्दर उत्पन्न होने लगते हैं। जिस क्षण व्यक्ति के आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है अर्थात लक्ष्य की प्राप्ति संभव होती है अन्तर्निहित विकारों का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इस प्रकार आवश्यकता अभिप्रेरणा का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो क्रियाशीलता के लिए अनिवार्य है।

आवश्यकता की परिभाषा

बोरिंग और लैगफील्ड के अनुसार– '' आवश्यकताएँ प्राणियों के भीतर का तनाव है, जो कुछ उद्दीपनों या लक्ष्यों के संबंध में प्राणी के क्षेत्र को व्यवस्थित करने में प्रवृत्त करती है, जो उनकी प्राप्ति की ओर निर्देशित क्रिया को उत्तेजित करती है।''

10.4.2 अन्तर्नोद

किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए व्यक्ति की उत्तेजना शक्ति ही अपेक्षित कार्य के लिए उसे प्रेरित करती है, इसे अन्तर्नोद भी कहते है। आवश्यकता की पूर्ति के लिए

व्यक्ति के अन्दर उत्पन्न तनाव की अवस्था को ही चालक भी कहते है। वस्तुतः अन्तर्नोद या आंतरिक उत्तेजना या चालक तीनों ही तनाव की अवस्था का नाम है। आवश्यकता से अंतर्नोद की उत्पत्ति होती है। तनाव की स्थिति में आन्तरिक उत्तेजनाओं द्वारा भूख लगना, प्यास लगना एवं काम भावना जाग्रत होती है। इससे व्यक्ति क्रियाशील होता है। भूख मिटाने, प्यास बुझाने तथा काम भावना को तृप्त करने के लिए वह तब तक क्रिया करता है जब तक की वह लक्ष्य प्राप्त नही कर लेता है। इस प्रकार क्रियाशीलता द्वारा आवश्यकता की पूर्ति करना ही अन्तर्नोद या चालक की विशेषता मानी जाती है।

डेशियल के अनुसार – ''चालक शक्ति का एक मौलिक स्रोत है जो मनुष्य के अंगों को कार्य करने के लिए बाध्य करता है।''

"Drive is an original source of energy that activates the human organism."

- Dashiel

हरबर्ट सोरेन्सन के अनुसार – ''अन्तर्नोद या उत्तेजना व्यक्ति में वह शक्ति है, जो उसे आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए अपेक्षित कार्य हेतु उत्प्रेरित करती है।''

अन्तर्नोद के प्रकार – अन्तर्नोद शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से दो प्रकार के होते हैं। पुनः शारीरिक अन्तर्नोद के चार प्रकार तथा मानसिक अन्तर्नोद के तीन प्रकार होते है। रेखीय निरूपण द्वारा इसे सरलता से समझा जा सकता है, जो निम्नवत् है–

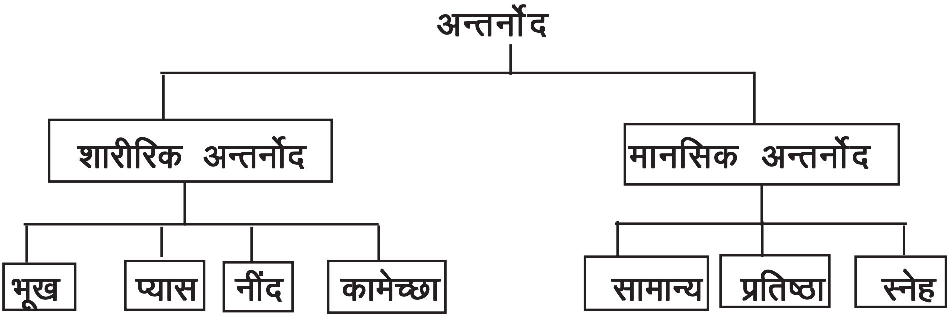

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

2. अन्तर्नोद के अर्थ को स्पष्ट करें।

____

10.4.3 उद्दीपन

उद्दीपन बाह्य वातावरण की वस्तु है जो लक्ष्य प्राप्ति में सहायक है। उद्दीपन

कार्य करने के द्वारा व्यक्ति में निहित तनाव या अन्तर्नोद को संतुष्ट करती है। किसी कार्य के सम्पन्न हो जाने पर आवश्यकता एवं अन्तर्नोद की समाप्ति हो जाती है, यह प्रोत्साहन के द्वारा सम्भव हो सकता है। प्रोत्साहन वह उद्दीपन है जो अंतर्नोद में वृद्धि करता है। उद्दीपन आवश्यकता की पूर्ति करके, अंतर्नोद या चालक को संतुष्टि प्रदान करता है। उदाहरणार्थ प्यास एक अंतर्नोद है जिसे पानी संतुष्ट करता है। इस प्रकार प्यासे चालक के लिए पानी प्रोत्साहन या उद्दीपन है।

उद्दीपन की परिभाषा –

हिलगार्ड के अनुसार – ''उपयुक्त उद्दीपन की प्राप्ति से अंतर्नोद की तीव्रता कम हो जाती है और व्यक्ति का मानसिक तनाव दूर हो जाता है।''

"In general and appropriate incentive is one that can reduce the intensity of a drive."

- Hillgard

आवश्यकता, अंतर्नोद तथा उद्दीपन में संबंध

अभिप्रेरणा के इन तीनों अंगो आवश्यकता, अंतर्नोद एवं उद्दीपन में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इसके अन्तर्गत देखा गया है कि आवश्यकता से अंतर्नोद की उत्पत्ति होती है। अंतर्नोद तनाव की वह स्थिति है जो क्रिया को करने के लिए प्रेरित करती हैं। प्रोत्साहन वातावरण की कोई वस्तु है जिसके द्वारा आवश्यकता की संतुष्टि होती है एवं प्रोत्साहन के द्वारा क्रिया के माध्यम से अंतर्नोद को समाप्त किया जाता है। अतः स्पष्ट है कि आवश्यकता और अंतर्नोद व्यक्ति की आन्तरिक दशा है, जबकि उद्दीपन बाह्य वातावरण में पाया जाता है।

हिलगार्ड ने तीनो के घनिष्ठता के सम्बन्ध में अपने विचार निम्नानुसार व्यक्त किए है–

''आवश्यकता से चालक की उत्पत्ति होती है। चालक बढ़े हुए तनाव की स्थिति है जो कार्य और प्रारम्भिक व्यवहार की ओर अग्रसर करता है। उद्दीपन बाह्य वातावरण की कोई वस्तु होती है, जो आवश्यकता की संतुष्टि करती है और इस प्रकार क्रिया के द्वारा चालक को कम कर देती है।''

"Need gives rise to drive. Drive is a state of heightened tension leading to activity and preparatory behaviour. The incentive is something in the external environment that satisfies the need and thus reduces the drive through consummatory activity."

- Hillgard

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

3. आवश्यकता, अन्तर्नोद एवं उद्दीपन का आपस में घनिष्ठ संबंध है, स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

10.4.4 अभिप्रेरक

प्रेरक क्या है? इस संबंध में मनोविज्ञाानिकों में मतैक्य नही है। प्रेरक एक ऐसी मानसिक अथवा आन्तरिक दशा है जो व्यक्ति को कार्य के लिए प्रेरित करती है तथा लक्ष्य प्राप्ति के लिए सही मार्ग पर ले जाती है। कुछ ने इसे अभिप्रेरण की शक्ति भी माना है। यह शक्ति जन्मजात अथवा अर्जित दोनों तरीकों से ही व्यक्ति के अन्दर समाहित होती है। कुछ मनोवैज्ञानिक इनको व्यक्ति की शारीरिक तथ मानसिक दशाएँ मानते हैं और कुछ इनका निश्चित दिशा में कार्य करने की प्रवृत्तियाँ मानते है। प्रेरक के अंतर्गत चालक, तनाव, आवश्यकता एवं उद्दीपन सभी आ जाते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक इस तर्क से सहमत हैं कि 'प्रेरक' व्यक्ति को किसी विशेष कार्य को करने के लिए अभिप्रेरित एवं उत्तेजित करते है।

अभिप्रेरकों की परिभाषाएँ – विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने प्रेरक को अपने – अपने ढ़ंग से परिभाषित किया है, कुछ मनोवैज्ञानिकों के मत निम्नलिखित है–

ब्लेयर, जोन्स एवं सिम्पसन के अनुसार–''प्रेरक हमारी आधारभूत आवश्यकताओं से उत्पन्न होने वाली वे शक्तियाँ है, जो व्यवहार को दिशा और उद्देश्य प्रदान करती है।''

एलिस क्रो के अनुसार – ''प्रेरकों का उन आंतरिक दशाओं और शक्तियों के रूप में माना जा सकता है, जो व्यक्ति को निश्चित लक्ष्यों की ओ प्रेरित करने में प्रवृत होते है''

मैकडूगल के अनुसार– ''अभिप्रेरक व्यक्ति के अंदर वे शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दशाएँ हैं जो उसे किसी कार्य को निश्चित ढंग से करने के लिए प्रवृत्त करती हैं।''

10.5 अभिप्रेरकों का वर्गीकरण

प्रेरकों के सम्बन्ध में मनोवैज्ञनिकों के मध्य अत्यधिक मतभेद हैं। सभी ने प्रेरकों की व्याख्या तथा उसका वर्गीकरण अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। जिनका स्वरूप निम्नांकित है–

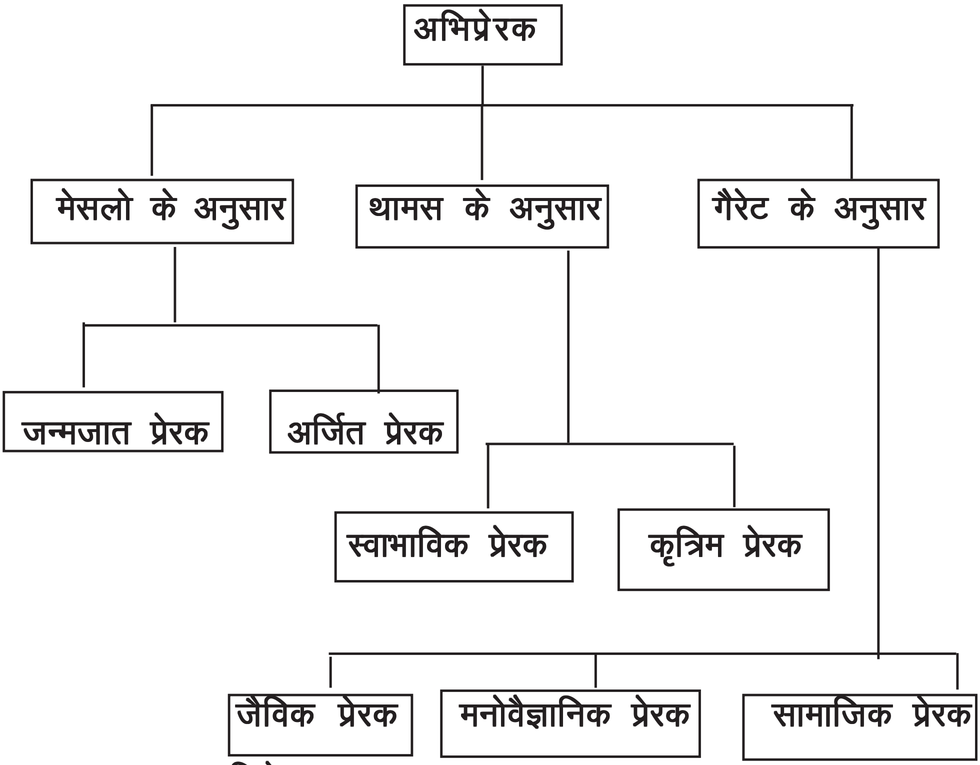

10.5.1 जन्मजात अभिप्रेरक

जन्मजात अभिप्रेरक सभी जीवधारियों चाहे मनुष्य हों या अन्य जन्तु सभी में सामान्य रूप से जन्म से ही पाये जाते हैं। जन्मजात प्रेरकों के अभाव में मनुष्य को जीवित रहना कठिन होता है। जीवन जीने के लिए जन्मजात प्रेरक का मनुष्य के अन्दर होना आवश्यक है। शरीर के अन्दर व्याप्त होने के कारण इन्हें शारीरिक या जैविक प्रेरक भी कहते है। मुख्य जन्मजात प्रेरकों के नाम निम्न है–

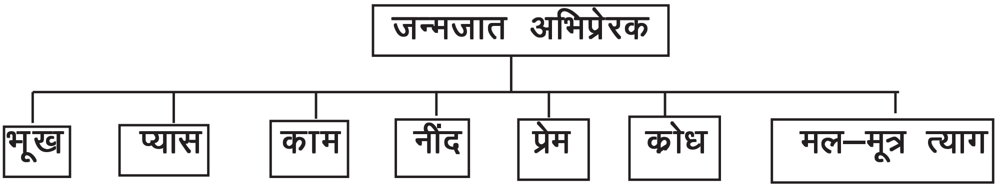

10.5.2 अर्जित अभिप्रेरक

जन्मजात प्रेरकों के अतिरिक्त कुछ ऐसे प्रेरक होते है जिसे मनुष्य अपने प्रयासों से प्राप्त करता है। प्रत्येक मनुष्य के प्रयासो एवं आकांक्षाओं में भिन्नता होती है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य द्वारा अर्जित प्रेरकों का स्वरूप भी भिन्न–भिन्न होता है। मनुष्य के परिश्रम एवं मनोवृत्ति के अनुसार ही अर्जित प्रेरकों का स्वरूप एवं मात्रा निश्चित होती है। कुछ व्यक्तियों को अर्जित प्रेरक नही प्राप्त होते है। अर्जित प्रेरक के स्वरूप को निम्नानुसार समझा जा सकता है।

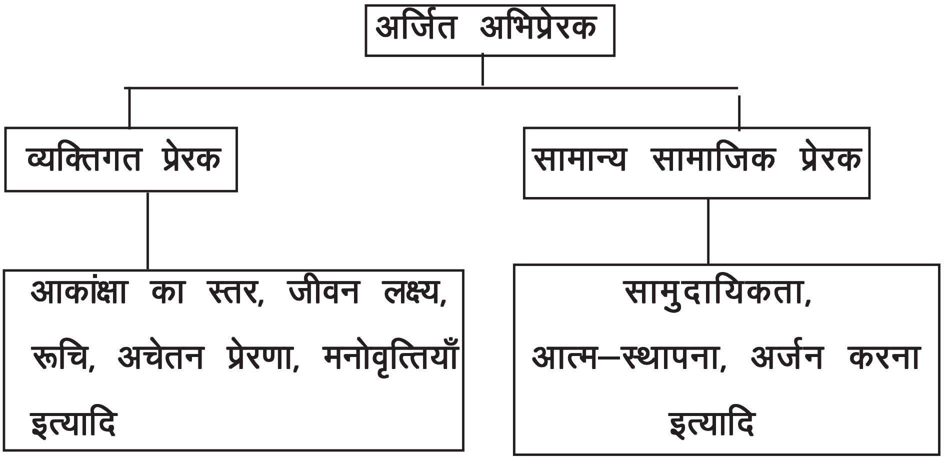

10.5.3 स्वाभाविक अभिप्रेरक

मनुष्य के स्वभाव से जो प्रेरक प्रेरित होते है, उसे स्वाभाविक अभिप्रेरक कहते है। ये स्वभाविक प्रेरक अनेक कार्यो के लिए उसे स्वतः ही प्रेरित करते है। जैसे–खेल, अनुकरण, सुझाव, प्रतिष्ठा, सुख की प्राप्ति इत्यादि।

10.5.4 कृत्रिम अभिप्रेरक

कृत्रिम अभिप्रेरक स्वाभाविक प्रेरक के पूरक होते है। व्यक्ति के द्वारा किए जा रहे कार्यो तथा प्रदर्शित किए जा रहे अस्वाभाविक व्यवहार की दिशा निर्धारित एवं नियंत्रित करते है तथा उसे सदैव प्रोत्साहित करते रहते है। उदाहरणार्थ बालकों के व्यवहार को देखें तो पाएँगे कि अध्यापक उनके व्यवहार को कृत्रिम प्रेरकों द्वारा उचित दिशा में नियंत्रित एवं प्रेरित करते हैं। दण्ड, पुरस्कार, सहयोग, व्यक्तिगत और सामूहिक कार्य की प्रेरणा के द्वारा बालकों के व्यवहार को नियंत्रित किया जा सकता है।

10.5.5 सामाजिक अभिप्रेरक

मनुष्य एक समाजिक प्राणी है। समाज के रीति–रिवाज, मान्यताएँ, सामाजिक आदर्श, सम्बन्ध, परम्पराएँ आदि सभी उसे प्रभावित करती है। अतः इनसे उत्पन्न होने वाले प्रेरक को सामाजिक प्रेरक कहते है। ये प्रेरक व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित कर उसके व्यवहार में परिवर्तन लाते है। जैसे– जिज्ञासा, आत्म सुरक्षा, आत्म–प्रदर्शन, रचनात्मकता आदि।

10.5.6 मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरक

अंतःकरण की प्रवृत्तियों का प्रभाव मनुष्य के जीवन पर बहुत अधिक पड़ता है। समय–समय पर काल, परिस्थितियों आदि के अनुसार मनुष्य के अन्दर संवेगों को स्थान प्राप्त होता है। अतः इन मनोवैज्ञानिक दशाओं के कारण उत्पन्न होने वाले प्रेरक को मनोवैज्ञानिक प्रेरक कहते है। गैरेट ने इनके अन्तर्गत संवेगों को स्थान दिया है। जैसे– प्रेम, आनन्द, दुःख, क्रोध आदि।

10.6 अधिगम में अभिप्रेरणा की प्रविधियाँ

शिक्षा प्राप्त करने अर्थात् सीखने तथा अभिप्रेरणा में घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिक्षा एक निरन्तर गतिशील रहने वाली प्रक्रिया है। जिसके अन्तर्गत अभिप्रेरक अर्थात् जिसके द्वारा अभिप्रेरित किया जाए, की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अभिप्रेरणा प्राप्त कर बालक के लिए कुछ भी सीखने में आसानी होती है और उसकी सीखने की प्रवृत्ति को संबल मिलता है। कुशल अध्यापक द्वारा अभिप्रेरणा प्राप्त कर बालक जो ज्ञान या पाठ सीखता है वह स्थायी होता है। क्योंकि अभिप्रेरणा प्राप्त कर बालक अधिक रूचि एवं तत्परता से ज्ञानार्जन करता है। दक्ष अध्यापक समय–समय पर विविध अभिप्रेरकों का उपयोग कर अधिगमकर्ता में जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं जिससे वह लक्ष्योन्मुखी होकर अधिक सक्रियता से उत्साहित होकर लक्ष्य प्राप्त करता है। एक बार सन्तुष्टि प्राप्त कर लेने के पश्चात वह अन्य अरूचिकर विशयों में भी सफलता प्राप्त, करता है। इस प्रकार अभिप्रेरणा अधिगम प्रक्रिया के साथ–साथ अधिगम परिणाम अर्थात उपलब्धि को भी प्रभावित करता है। वुडवर्थ ने स्पष्ट किया है कि अधिगम द्वारा अधिकतम उपलब्धि के लिए अधिगमकर्ता में सीखने की योग्यता के साथ अभिप्रेरणा भी आवश्यक है। इसके लिए सूत्र इस प्रकार है–

सूत्र :– योग्यता + अभिप्रेरणा = उपलब्धि

अध्यापकों द्वारा बालकों को प्रायः स्वभाविक प्रेरकों द्वारा ही प्रेरित किया जाता है। बालकों को अभिप्रेरणा प्रदान करने के प्रमुख तथ्य निम्न है–

10.6.1 अदम्य इच्छाशक्ति द्वारा अभिप्रेरणा

सीखने के लिए आवश्यक है कि मन में उस कार्य के लिए इच्छाशक्ति हो। बालक के अन्दर अधिगम के प्रति इच्छा होने पर वह स्वतः ही बिना किसी बाह्रय अथवा आन्तरिक दबाव से सीख जाता है। इस इच्छाशक्ति को उत्पन्न करने में अध्यापक की महत्वपूर्ण भूमिका को नकारा नही जा सकता है। जिन बालकों की रूचि अध्ययन करने में नही होती है, सामान्यतया वे छात्र विशय वस्तु को सीखने में पीछे रहते है या सीखना ही नही चाहतें। ऐसे में, अध्यापक का कर्तव्य है कि वह छात्र को अभिप्रेरित करे तथा उसके अन्दर सीखने की इच्छा जाग्रत करे।

10.6.2 शिक्षक के व्यवहार द्वारा अभिप्रेरणा

अधिगम में अधिगमकर्ता के लिए शिक्षक का व्यवहार अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। अभिप्रेरणा बहुत कुछ प्रेरित करने वाले व्यक्ति के व्यवहार पर निर्भर करती है। शिक्षक छात्र की इच्छाशक्ति के अनुरूप कक्षा में आत्मीयतापूर्ण, प्रेमपूर्ण सहानुभूति पूर्ण एवं सहयोगात्मक व्यवहार के द्वारा छात्र को अधिक से अधिक अभिप्रेरित कर सकता है। शिक्षक कक्षा–शिक्षण के दौरान छात्र की गतिविधियों का भलि–भाँति अवलोकन करता

है तथा समय – समय पर छात्र की भावनाओं तथा उसके विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए उचित अवसर प्रदान करता है। इसके लिए वह प्रेरकों का प्रयोग करता है।

10.6.3 अधिगम के उद्देश्य तथा ज्ञान द्वारा अभिप्रेरणा

शिक्षक का परम कर्तव्य है कि वह बालक को सिखाने से पूर्व उसका उद्देश्य स्पष्ट करें। उद्देश्य का ज्ञान होने पर ही अधिगमकर्ता के मन में विषयवस्तु के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होती है। जब बालक को ज्ञान की आवश्यकता तथा उद्देश्य का अनुभव हो जाता है, तब वह स्वयं अभिप्रेरित हो जाता है। इसके साथ ही वह ज्ञानार्जन से सम्बन्धित अन्य क्रिया–क्रलापों में भी स्वतः भागीदारी करने लगता है। बालक का पूरा ध्यान उसके पाठ पर केन्द्रित हो जाता है, कोई भी बाह्य कारक उसे प्रभावित नही कर पाते हैं।

10.6.4 अभिप्रेरणा और आकांक्षा

अभिप्रेरणा और आकांक्षा का घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। उचित अभिप्रेरणा आकांक्षा के स्तर में वृद्धि करती है। अधिगमकर्ता की योग्यता एवं क्षमता के अनुसार उसकी सीखने की आकांक्षा होती है। इसके साथ ही अधिगम की आकांक्षा अभिप्रेरक का काम करती है। आकांक्षा के स्तर में अधिक वृद्धि करने में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। शिक्षक छात्रों की आकांक्षा में अधिक से अधिक वृद्धि कर उन्हें अधिक अध्ययन के लिए अभिप्रेरित कर सकतें है। आकांक्षा के स्तर में वृद्धि करने से अधिगमकर्ता की निष्पादन क्षमता में अपने–आप वृद्धि हो जाती है।

10.6.5 सकारात्मक प्रतियोगिता की भावना का विकास

बालकों के अन्दर स्कूल अथवा कालेजों में प्रतियोगिता की भावना का विकास होना स्वाभविक है। प्रत्येक क्रिया–कलापों में प्रतिभाग करते समय उन्हें अपने ही बराबर के अन्य छात्रों से प्रतिस्पर्धा तथा प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। जिसका प्रभाव उनके ऊपर अवश्य पड़ता है। प्रतियोगिता में सफलता की इच्छा से वे कार्यो को अधिक लगन एवं परिश्रम से करते हैं। जो एक श्रेष्ठ अभिप्रेरक हैं। इसलिए अच्छे एवं योग्य शिक्षक का कर्तव्य है कि वह छात्रों में स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना को विकसित करे तथा यह भी ध्यान रखें कि असफल होने पर छात्र के अन्दर विदेश एवं सांवेगिक तनाव की भावनाएँ उत्पन्न न हों। अपितु वह और अधिक लगन तथ परिश्रम से कार्योन्मुखी हो सकें। इस प्रकार प्रतियोगिता की भावना अभिप्रेरक के रूप में कार्य–क्षमता में वृद्धि करती है।

10.6.6 सफलता एवं मान–सम्मान

सफलता एवं मान–सम्मान बालक को आनान्दित करते हैं। किसी भी कार्य के उपरान्त उसके परिणाम का ज्ञान प्राप्त होने तक बालक में उसका परिणाम जानने की एक तीव्र आकांक्षा होती है। कार्य में सफलता संतोष प्रदान करती है तथा अन्य क्षेत्रों

में अपना सर्वोत्तम प्रर्दशित करने के लिए प्रेरित करती है। वह अधिक उत्साह से कार्य करने के लिए प्रेरित होता है। सफलता के साथ ही मान – सम्मान भी जुड़ा है। प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा होती है कि वह सदैव मान–सम्मान प्राप्त करें और इसके लिए प्रत्येक कार्य के प्रति वह अपनी पूरी क्षमता एवं सामर्थ्य लगा देता है। दूसरी ओर परिणाम के फलस्वरूप असफल छात्र भी अपने अगले प्रयत्न के लिए उससे कुछ सीखता है तथा सफलता के लिए पूर्ण निष्ठा एवं परिश्रम से जुट जाता है। परिणाम एवं मान–सम्मान अभिप्रेरणा में वृद्धि करते है।

10.6.7 पुरस्कार एवं दण्ड द्वारा अभिप्रेरणा

पुरस्कार एवं दण्ड दोनों ही बालक के जीवन को अभिप्रेरित करते हैं। पुरस्कार प्राप्त कर अधिगम कर्ता अधिगम प्रक्रिया में और अधिक अभिप्रेरित होता है। पुरस्कार प्राप्त करने पर बालक के अन्दर अधिगम के लिए एक नई ऊर्जा का संचार होता है। पुरस्कार से बालक का व्यवहार एवं आचरण अधिक नियंत्रित किया जा सकता है। पुरस्कार के रूप में पदक एवं प्रमाण पत्र अधिक उपयुक्त एवं प्रभावपूर्ण होते हैं। पुरस्कार के लिये बालक को चयनित करने से पूर्व सावधानी रखनी चाहिए, जिससे योग्य छात्र ही पुरस्कृत हों। दण्ड भी एक प्रकार का अभिप्रेरक होता है। डॉटना, आलोचना, कक्षा से बाहर निकाल देना, उठक बैठक करवाना इत्यादि साधारण दण्ड प्रायः छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन लाने में समर्थ होते है। परन्तु शिक्षक को छात्रों को सुधारात्मक दण्ड देने चाहिए। बालकों को शारीरिक एवं मानसिक रूप से आघात पहुॅंचाने वाले दण्ड कदापि नहीं दिये जाने चाहिए। कभी–कभी दण्ड पाकर छात्र उग्र हो जाते हैं जिससे उनमें अपमान, खीज एवं कार्य के प्रति अरूचि उत्पन्न हो जाती है। अतः दण्ड भली–भॉंति सोच–विचार कर बालक की गलती या अपराध के अनुसार ही दिया जाना चाहिए। निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि उचित मात्रा में दिया गया पुरस्कार तथा दण्ड दोनों ही अधिगमकर्ता के लिए अभिप्रेरणा का सशक्त माध्यम है।

10.6.8 प्रशंसा एवं निन्दा द्वारा अभिप्रेरणा

प्रशंसा एवं निन्दा दोनों का ही सीधा प्रभाव व्यक्ति की कार्यक्षमता पर पड़ता है। निन्दा की अपेक्षा प्रशंसा अत्यधिक प्रभावशाली एवं सकारात्मक अभिप्रेरक है। इस तथ्य को मनोवैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है। अधिगमकर्ता के लिए शिक्षक की प्रशंसा बहुत मायने रखती है। शिक्षक द्वारा कहे गये– शाबास, अति सुन्दर, बहुत ठीक, सर ऊॅंचा कर दिया आदि शब्द बालक के पूरे जीवन को बदलने का सामर्थ्य रखते हैं। शिक्षक को अपनी कक्षा में इन शब्दों का प्रयोग खुल कर करना चाहिए। प्रशंसा के द्वारा छात्र अधिक कार्य करने की दिशा में प्रेरित होते है। ठीक उसी प्रकार निन्दा एक नकारात्मक अभिप्रेरक है। निन्दा बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाने का एक सशक्त माध्यम है। निन्दा का प्रयोग सावधानी से किया जाना चाहिए जिससे छात्र कार्य की ओर अभिप्रेरित हो, न कि हीन भावना से ग्रसित हो जाए। अतः निन्दा करते समय संतुलित

भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए, आपत्तिजनक तथा अशोभनीय भाषा का प्रयोग कदापि नही किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान पर उत्तर लिखें तथा इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर को मिला कर स्वयं मूल्यांकन करें।

4. शिक्षक का व्यवहार कैसा होना चाहिए?

____

____

____

5. निन्दा एवं दण्ड किस प्रकार के अभिप्रेरक है?

____

____

____

10.7 चिन्तन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

10.7.1 चिन्तन का अर्थ :—

बौद्धिक क्षमता के कारण ही मनुष्य अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ माना गया है। मनुष्य के जीवन में दिन—प्रतिदिन किसी न किसी प्रकार की घटना घटित होती है जिसके कारण उसे समस्याओं का सामना करना पड़ता है। समस्या को समाप्त करने के लिए व्यक्ति तरह—तरह के उपाय सोचता है। व्यक्ति समस्या के समाधान के लिए विचार करता है कि समस्या का समाधान क्या है, समस्या को कैसे दूर किया जा सकता है। व्यक्ति द्वारा समस्या समाधान के लिए सोचने और विचार करने की क्रिया को ही चिन्तन कहते हैं। चिन्तन एक मानसिक प्रक्रिया है। व्यक्ति किसी नवीन परिस्थिति में अपने को समायोजित करने तथा समस्या के समाधान अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर करता है। चिन्तन को देखा नहीं जा सकता है बल्कि चिन्तन को व्यवहारों के आधार पर परोक्ष रूप से महसूस किया जा सकता है। चिन्तन को एक अव्यक्त मानसिक प्रक्रिया के रूप में भी सम्बोधित किया जाता है।

निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है चिन्तन विचार करने की मानसिक प्रक्रिया है जो समस्याओं के उत्पन्न होने के कारण प्रारम्भ होती है तथा तब तक चलती रहती है जब तक समस्या का समाधान नहीं हो जाता है।

10.7.2 चिन्तन की परिभाषाएँ :—

मनोवैज्ञानिकों ने चिन्तन को एक कठिन मानसिक प्रक्रिया माना है। चिन्तन के सम्बन्ध में विद्वानों के मध्य एक राय नहीं बन पाई है। चिन्तन के अर्थ को स्पष्ट करने

के विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने इसे भिन्न–भिन्न ढंग से परिभाषित किया है। चिन्तन की प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत् वर्णित है –

1. **जे.एस.रास के अनुसार –** ''चिन्तन ज्ञानात्मक मानसिक क्रिया है।''

"Thinking is a mental activity in its cognitive aspect." **--- Ross J.S.**

2. **जे.पी. गिलफोर्ड के अनुसार –** ''चिन्तन प्रतीकात्मक व्यवहार है। यह सभी प्रकार के प्रतिस्थापन से सम्बन्धित है।''

"Thinking is symbolic behaviour for all thinking deals with substitute for things."

-Guilford, J.P.

3. **वेलेन्टाइन के अनुसार –** ''चिन्तन शब्द का प्रयोग उस क्रिया के लिए किया जाता है जिसमें श्रृंखलाबद्ध विचार किसी लक्ष्य या उद्देश्य की ओर अविराम गति से प्रवाहित होते हैं।''

"It is well to keep the term thinking for an activity which consists essentially of a connected flow of ideas which are directed towards some ends or purpose."

-Valentine

4. **रेबर्न के अनुसार –** ''चिन्तन, इच्छा सम्बन्धी प्रक्रिया है, जो किसी असंतोष के कारण आरम्भ होती है और प्रयास और त्रुटि के आधार पर चलती हुई उस अन्तिम स्थिति पर पहुँच जाती है, जो इच्छा को संतुष्ट करती है।''

"Thinking is a conative process, arising from a felt dissatisfaction, and proceeding by trait or error o an end state which satisfies the conation." **-Reyburn**

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. चिन्तन की परिभाषा लिखिए।

10.8 चिन्तन की विशेषताएँ

चिन्तन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(i) चिन्तन एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है।

(ii) सोचने, समझने और विचार करने की क्रिया चिन्तन है।

(iii) चिन्तन के द्वारा ही व्यक्ति कठिन से कठिन समस्याओं का समाधान करता है।

(iv) चिन्तन एक प्रकार का व्यवहार है जिसके द्वारा व्यक्ति गतिविधियों को सम्पादित करता है।

(v) चिन्तन समस्या के जन्म लेते ही प्रारम्भ होती है और समाधान के समय तक चलती रहती है।

(vi) चिन्तन की उपस्थिति के कारण ही मनुष्य इस ब्रह्माण्ड में पाये जाने वाले समस्त जीवों से उत्कृष्ट माना गया है।

(vii) चिन्तन मानव का एक विशिष्ट गुण है।

(viii) चिन्तन में व्यक्ति के पूर्व के अनुभव समाहित होते हैं।

(ix) चिन्तन सोदेश्य पूर्ण होता है।

(x) चिन्तन एक विचार है। विचारों के अन्दर व्यक्ति अपने अनुभवों के आधार पर विश्लेषण एवं संश्लेषण के द्वारा जटिल से जटिल समस्याओं का समाधान प्राप्त कर लेता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. चिन्तन की दो विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

10.9 चिन्तन के प्रकार

चिन्तन मुख्य रूप से चार प्रकार का होता है। चिन्तन के प्रकारों का वर्णन निम्नवत वर्णित किया जा रहा है।

(1) प्रत्यक्षात्मक चिन्तन :– प्रत्यक्षात्मक चिन्तन पूर्व अनुभवों पर आधारित होता है। इस प्रकार के चिन्तन का सम्बन्ध प्रतीकों व चिन्हों से नहीं होता है। प्रत्यक्षात्मक चिन्तन निम्न स्तर का चिन्तन होता है। इस प्रकार के चिन्तन की प्रवृत्ति जानवरों एवं छोटे बालकों में पायी जाती है। उदाहरण के लिए यदि कोई बालक किसी कक्षा में फेल हो जाता है तो वह परीक्षा में पुनः बैठने से डर जाता है कि यदि मैं परीक्षा में सम्मिलित हुआ तो पुनः फेल हो जाउँगा। इसी प्रकार यदि बालक घर में कोई गलत कार्य करता है तो उसे डर लगता है कि उसे दण्ड मिलेगा क्योंकि उसे पूर्व में गलत कार्य करने पर दण्ड मिल चुका होता है।

(2) प्रत्ययात्मक चिन्तन :– इस प्रकार के चिन्तन में प्राणी पूर्व में निर्मित प्रत्ययों के आधार पर चिन्तन करता है। यह सर्वोच्च प्रकार का चिन्तन है। इसमें व्यक्ति जटिल से जटिल समस्याओं के लिए मानसिक क्रियाओं के आधार पर चिन्तन करता है। इस

प्रकार के चिन्तन में भाषा, नाम एवं संकेतो का प्रयोग किया जाता है। वस्तुओं की कल्पना के आधार पर व्यक्ति के मस्तिष्क में प्रत्यय निर्माण हो जाता है। जैसे बालक घर में खेलने वाले कार को देखता है और उससे खेलता है। जब कभी उसे कार देखने को मिलती है तो वह पूर्व में देखे गये कार से सम्बन्ध यानी प्रत्यय निर्माण के आधार पर कार शब्द बोलकर कार को सम्बन्धित करता है।

(3) **कल्पनात्मक चिन्तन :–** कल्पनात्मक चिन्तन में प्रत्यक्षीकरण का अभाव होता है। इस चिन्तन का आधार प्रतिमाएँ होती हैं। इस प्रकार के चिन्तन में मनुष्य पूर्व अनुभवों के आधार पर भविष्य के बारे में विचार करता है। जैसे – जब बालक कक्षा में कोई अच्छा कार्य करता है तब बालक कल्पना करता है कि मेरे अध्यापक मुझे पुरस्कार देंगे।

तार्किक चिन्तन :– यह सबसे उच्च स्तर का चिन्तन है। इसमें बालक किसी भी प्रकार की समस्या का समाधान तार्किक चिन्तन के आधार करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. तार्किक चिन्तन को लिखिए।

____

____

____

10.10 चिन्तन के साधन

चिन्तन के लिए साधन, सामग्री एवं उपकरण की आवश्यकता होती है। चिन्तन के कुछ प्रमुख साधनों का वर्णन निम्नवत है –

(1) **प्रतिमा :–** चिन्तन के लिए प्रतिमा एक महत्वपूर्ण साधन है। प्रतिमा की सहायता से चिन्तन करने में बहुत मदद मिलती है। मनुष्य जब किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण करता है तो उसका प्रतिबिम्ब उसके मानस पटल पर एक छाप के रूप में बन जाती है। प्रतिमा में कल्पना का सहारा लिया जाता है। जब कोई वस्तु मनुष्य के सम्मुख नहीं होती परन्तु पूर्व अनुभवों के आधार पर उसकी एक प्रतिमा उसके मन मस्तिष्क में बन जाती है। इस कल्पनात्मक प्रतिमाओं के आधार पर व्यक्ति चिन्तन करता है।

(2) **प्रत्यय :–** प्रत्यय चिन्तन के लिए एक महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ है। प्रत्यय कि सहायता से चिन्तन करने में समय कम लगता है। प्रत्यय जितना अधिक स्पष्ट एवं सकारात्मक होगा व्यक्ति के चिन्तन करने की गति उतनी ही स्पष्ट एवं सरल होगी।

(3) संकेत तथा प्रतीक :– चिन्तन में संकेत और प्रतीकों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यह उच्च चिन्तन की प्रमुख सामग्री है। व्यक्ति संकेतो तथा प्रतीकों के द्वारा अपने विचारों को बहुत ही सरलता तथा स्पष्टता के साथ अभिव्यक्त कर सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. चिन्तन के किसी एक साधन को लिखिए।

____

____

____

10.11 चिन्तन विकास के उपाय

एक अच्छे जीवन के लिए उच्च स्तर के चिन्तन का होना परम आवश्यक है। इस प्रकार के चिन्तन के विकास के प्रमुख उपाय निम्नवत् है –

1. छात्रों के अन्दर चिन्तन के विकास के लिए उन्हें अपने विचारों को व्यक्त करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए।
2. छात्रों को सूक्ष्म विधि से सीखने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए।
3. छात्रों के साथ सभी को मुख्य रूप से अध्यापकों को मित्रवत प्रेमपूर्वक एवं स्नेहिल भाव से आचरण करना चाहिए जिससे बालक के अन्दर दमनकारी प्रवृत्तिया विकसित न हो सकें और वे बिना किसी अवरोध के चिन्तन करने के लिए अभिप्रेरित हो सकें।
4. चिन्तन के लिए चिन्तन उपकरणों का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। इन साधनों में प्रत्यय सबसे प्रभावशाली उपकरण होते हैं। शिक्षकों को प्रत्यय निर्माण के लिए उचित वातावरण छात्रों के लिए निर्मित करना चाहिए।
5. छात्रों के अन्दर किसी विषय वस्तु को सोचने, समझने एवं उसका समाधान करने के लिए जिज्ञासा उत्पन्न करनी चाहिए।
6. शिक्षक को छात्रों के समक्ष अधिक समस्यात्मक परिथिति उत्पन्न करनी चाहिए जिससे वे अपने मानसिक क्रियाओं के द्वारा तीव्र गति से चिन्तन कर सकें।
7. शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों के लिए वैज्ञानिक ढंग से नवीन सम्प्रत्ययों को उनके सम्मुख प्रस्तुत करे जिससे चिन्तन वास्तविकता के धरातल पर आधारित हो एवं जिससे छात्रों का समुचित विकास हो सके। इस सम्बन्ध में गरसेल का

मत है – ''समस्या का ज्ञान और उसके समाधान की खोज यही चिन्तन की प्रक्रिया है और यही सीखने की प्रक्रिया भी है।''

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. चिन्तन विकास के दो उपाय लिखिए।

____

____

____

10.12 तर्क (Reasoning)

10.12.1 तर्क के अर्थ एवं स्वरूप

तर्क एक प्रकार का वास्तविक चिन्तन है। व्यक्ति तर्क के माध्यम से चिन्तन को श्रेणीबद्ध करता है तथा तर्क–वितर्क के आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुँचता है। तर्क चिन्तन का सर्वोच प्रक्रिया है। चिन्तन का स्वरूप जब व्यवस्थित एवं संगठित होता है तो उसे तर्कणा कहते है। मस्तिष्क के परिपक्वन की अवस्था में तर्क शक्ति का विकास होता है। जान डी.वी. ने तर्क को शंका की उपस्थिति एवं खोज करने की आवश्यकता माना है। तर्क की आवश्यकता तब पड़ती है जब जटिल समस्याओं के समाधान के लिए चिन्तन के मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। पशुओं में तर्कणा की शक्ति नहीं पायी जाती जब कि मनुष्य में तर्क शक्ति की अधिकता पायी जाती है।

10.12.2 तर्क की परिभाषाएँ

1. **बर्नार्ड के अनुसार –** ''तर्क वह प्रक्रिया है जो प्रतिक्रिया को उस समय तक स्थगित रखती है जब तक सम्बन्धित समस्या के आकड़े एकत्र न हो जाये, जिससे निर्धारित लक्ष्य स्पष्ट हो जाये।''

"Reasoning is a process of delaying responses until data are arranged in to a new combination so that a clearly perceived goal can be reached." **-Bernard**

2. **मन के अनुसार –** ''तर्क उस समस्या को हल करने के लिए अतीत के अनुभवों को सम्मिलित रूप प्रदान करता है जिसको केवल पिछले समाधानों का प्रयोग करके हल नहीं किया जा सकता है।''

"Reasoning is combining past experiences in order to solve a problem which can not be solved by mere reproduction of earlier solutions." **-Munn**

3. **कार्टर वी. गुड के अनुसार –**''मानसिक प्रक्रिया या कार्य जिसका सम्बन्ध तथ्यों या कारणों से रहता है एवं जो तथ्यों को तोलता है एवं मूल्यांकन के पश्चात् वह तर्क पूर्ण निर्णय प्रदान करता है तर्क है।''

"The act or mental process of inferring relationships among facts or phenomena, of weighting and evaluating evidence and coming to a logical conclusion."

-Carter, V Good

4. **ड्रेवर के अनुसार** – ''तर्क सामान्य सिद्धान्तों के प्रयोग द्वारा समस्या समाधान की प्रक्रिया है।''

"Reasoning is a process of thinking involving inference, or of solving problems by employing general principles." **-James Drever**

5. **गेट्स व अन्य के अनुसार** – ''तर्क, फलदायक चिन्तन है, जिससे किसी समस्या का समाधान करने के लिए पूर्व अनुभवों को नई विधियों से पुनः संगठित या सम्मिलित किया जाता है।''

"Reasoning is productive thinking in which previous experiences are organized or combined in new ways, to solve a problem." **-Gates and others**

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. तर्क को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

10.13 तर्क के पद

कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार तर्क के पांच पद होते है जिनका विश्लेषण निम्नवत किया जा रहा है–

1. **समस्या का होना :–** जब किसी परिस्थिति में समस्या उत्पन्न होती है तो ऐसी दशा में उसके समाधान के लिए तर्क प्रारम्भ होता है। समस्यात्मक परिस्थिति में व्यक्ति को समस्या के विषय में विचार करने की बाध्यता होती है।

2. **समस्या की जानकारी :–** समस्या क्यों है, कैसे उत्पन्न हुई इसका पूर्ण रूपेण अध्ययन करने के पश्चात व्यक्ति उसके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त करता है और उसके क्या कारण है उससे सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित करता है।

3. **समस्या समाधान के साधन :–** एकत्रित किए गये सूचनाओं के आधार पर समस्या का समाधान के कैसे किया जा सकता है, व्यक्ति उस पर विचार करता हैं।

4. **किसी एक उपाय का चयन :–** व्यक्ति समस्याओं के समाधान के सभी पक्षों पर विचार करने के पश्चात विभिन्न प्रकार के उपायों में से किसी एक उपाय का चयन करता है।

5. **उपायों को प्रयोग करने की विधि :–** व्यक्ति अपने विवेक से निर्णय लेकर समस्या के समाधान के लिए कौन सा साधन प्रभावी हो सकता है उसका प्रयोग करता है।

तर्क के उपरोक्त वर्णित पदों से स्पष्ट होता है कि बालक के अन्दर जन्म से ही तर्क करने की क्षमता का विकास नहीं होता है। यह योग्यता बड़े होने पर उन्हें विद्यालय, परिवार या समाज से सीखने को मिलती है। इन योग्यताओं के विकसित होने से ही उनके व्यक्तित्व का विकास होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

12. तर्क के पदों के नाम लिखिए।

____

____

____

10.14 तर्क के प्रकार

तर्क को मुख्य रूप से दो भागों में वर्गीकृत किया गया है जो निम्नवत वर्णित है–

1. **आगमन तर्क :–** इस विधि में शोधकर्ता शोध हेतु उपलब्ध तथ्यों में अपनी सुविधा एवं शोध की आवश्यकतानुसार नए तथ्य को जोड़कर एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचता है। जब तक शोधकर्ता नये तथ्यों को नहीं जोड़ता समस्या का समाधान प्राप्त नहीं हो सकता हैं। इस विधि के अन्तर्गत शोधकर्ता अपने अनुभवों या संकलित तथ्यों के द्वारा किसी नियम या सिद्धान्त की खोज करता है। ऐसा करने के लिए उसे तीन स्तरों से क्रिया करनी होती है।

   (i) निरीक्षण (ii) परीक्षण (iii) सामान्यीकरण

इस सन्दर्भ में भाटिया का मत है – आगमन विधि, खोज और अनुसंधान की विधि है।''

2. **निगमन तर्क :–** इस विधि में व्यक्ति पूर्व से ज्ञात नियमों एवं तथ्यों के द्वारा एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए प्रयास करता है। इस प्रकार का तर्क मानव एवं जानवरों दोनों के द्वारा की जाती है। इस विधि में व्यक्ति अनुभवों, नियमों

एवं सिद्धान्तों के द्वारा परिणाम का परीक्षण करता है। इस सन्दर्भ में भाटिया का मत है – ''निगमन विधि, प्रयोग और प्रमाण की विधि है।''

उदाहरण के लिए – जब कोई बच्चा रोता है तब माँ समझ जाती है उसे क्या चाहिए। बच्चे के हाव–भाव से माँ को एहसास हो जाता है कि उसे भूख लगी है या उसे कुछ और चाहिए।

10.15 तर्क का शैक्षिक महत्व

शिक्षा में तर्क का प्रयोग करके शिक्षार्थियों की समस्याओं को कैसे हल किया जा सकता है तथा बालकों में तर्क शक्ति को कैसे विकसित किया जा सकता है। तर्क का शैक्षिक महत्व निम्नवत वर्णित है–

1. अध्यापकों को सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में आगमन विधि का प्रयोग करना चाहिए। आगमन विधि के द्वारा तार्किक चिन्तन का विकास होता है।
2. शिक्षक को वाद–विवाद, विचारों के आदान–प्रदान व्याख्यान इत्यादि के लिए तार्किक चिन्तन पर आधारित कार्यक्रमों का आयोजन करना चाहिए। इस प्रकार के आयोजन से तार्किक चिन्तन शक्ति का विकास होता है।
3. शिक्षार्थियों के लिए अध्यापकों को तार्किक चिन्तन के विकास के लिए खोज, प्रयोग एवं अनुसंधान से सम्बन्धित कार्यों को करने के अवसर प्रदान करने चाहिए।
4. अध्यापकों को शिक्षकों के अन्दर शीलगुणों को विकसित करना चाहिए इन गुणों के अभाव में तार्किक चिन्तन की कल्पना सम्भव नहीं है।
5. शिक्षार्थियों को स्वयं करके सीखने का अवसर प्रदान करना चाहिए। स्वंय कार्य करने से तर्क शक्ति का तेजी से विकास होता है।
6. गलत प्रवृत्ति जैसे द्वेश, पूर्व निर्णय, किसी के प्रति पूर्वधारणा तार्किक चिन्तन में अवरोध उत्पन्न करते हैं। शिक्षकों को बालकों को इससे उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों से बराबर अवगत कराना चाहिए।
7. समस्या के समाधान के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार से विचार–विमर्श करने के कारण तार्किक चिन्तन को बल मिलता है। अतः अध्यापकों को समस्या का समाधान करने के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित एवं अभिप्रेरित करते रहना चाहिए।
8. शिक्षार्थियों को स्वंय किसी निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए अध्यापकों को चाहिए कि वे शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित करे कि वे प्रयोगो के माध्यम से ही समस्या का समाधान करे एवं इसके साथ ही बालकों को स्वंय किसी नियम, एवं सिद्धान्त तक पहुँचने के लिए उनकों प्रशिक्षण देना चाहिए।

9. उम्र के बढ़ने के साथ–साथ तार्किक चिन्तन शक्ति भी बढ़ती है। अतः प्रत्येक आयु वर्ग के बालकों को तार्किक चिन्तन के अवसर अध्यापकों को सुलभ कराने चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13. तर्क के दो शैक्षिक महत्व लिखिए।

____

____

____

10.16 समस्या–समाधान

10.16.1 समस्या समाधान का अर्थ

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य अपने जीवन को संयम के साथ एवं संतुलित ढंग से जीना चाहता है। मनुष्य को अपने खुशहाल जीवन के लिए अपनी दिनचर्या को अनुशासित रखना पड़ता है। मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिए एक निश्चित उद्देश्य के अर्न्तगत अपने लक्ष्य को निर्धारित करता है। जब कभी मनुष्य अपने लक्ष्य तक कई प्रकार की कठिनाइयों के कारण नहीं पहुँच पाता है तब मनुष्य के सम्मुख समस्या उत्पन्न हो जाती है। मनुष्य जब अपने बुद्धि एवं विवेक से समस्याओं पर विजय प्राप्त कर लेता है तब समस्या का समाधान प्राप्त कर वह अपने द्वारा निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति कर लेता है और उसे सुख की अनुभूति होती है। अतः निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते हैं जब व्यक्ति लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग में आने वाली बाधाओं को अपने चिन्तन एवं तर्क के माध्यम से दूर कर अपने लक्ष्य तक पहुँच जाता है तब उसे हम समस्या–समाधान कहते हैं।

10.16.2 समस्या–समाधान की परिभाषाएँ:–

कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत् है –

1. **स्किनर के अनुसार–** ''समस्या–समाधान किसी लक्ष्य की प्राप्ति में बाधा डालती प्रतीत होती, कठिनाइयों पर विजय पाने की प्रक्रिया है। यह बाधाओं के बावजूद सामजस्य करने की विधि है।''

"Problem-Solving is a process of overcoming difficulties that appear to interfere with the attainment of a goal. It is a procedure of making adjustments in spite of inteferencs."

-Skinner

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

14. समस्या समाधान को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

10.17 समस्या समाधान में प्रयुक्त होने वाली विधियाँ

10.17.1 समस्या–समाधान की वैज्ञानिक विधिः–

स्किनर महोदय ने समस्या–समाधान के वैज्ञानिक विधियों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से 6 वर्गों में विभक्त किया है। इन विधियों का वर्णन निम्नवत है

(i) **समस्या को परखना :–** इस विधि के अन्तर्गत समस्या किस स्तर का है, समस्या क्यों उत्पन्न हुई, समस्या उत्पन्न होने के क्या–क्या कारण है, समस्या के समाधान हेतु क्या किया जा सकता है, समस्या समाधान कैसे किया जा सकता है इसको जानने एवं समझने का यत्न करता है।

(ii) **सूचना संग्रहः–** इस विधि में व्यक्ति सर्वप्रथम समस्या के सम्बन्ध में सूचनाओं को संकलित करता है तथा अपने अध्ययन के माध्यम से प्रथम दृष्टया यह जानने का प्रयास करता है कि क्या पूर्व में इस प्रकार की समस्या उत्पन्न हो चुकी है या इसके समाधान के उपाय बताए जा चुके हैं। व्यक्ति पूर्व की सूचनाओं के संकलन से अपने श्रम, समय एवं अर्थ की बचत करते हुए पूर्व में संग्रह किए गये तथ्यों के आधार पर समस्या का समाधान करता है।

(iii) **सम्भावनाओं के आधार पर समाधानों का निर्माण :–** अनुसंधानकर्ता संग्रह की गई सूचनाओं के आधार पर समस्याओं का समाधान करने के लिए कुछ विधियों का चुनाव करता है। इस प्रकार के समाधान के उपाय की विधि में सर्जनशील चिन्तन अत्यधिक प्रभावी होते हैं।

(iv) **समस्या समाधान का मूल्यांकन :–** समस्या के समाधान के लिए कौन सी विधि उपयुक्त होगी। सम्भावनाओं के आधार पर वह इस विधि के द्वारा उसका मूल्यांकन करता है।

(v) **समस्या के समाधान का परीक्षण :–** कौन सी विधि समस्या के समाधान के लिए उपयुक्त हो सकती है। सम्भावनाओं के आधार पर उसका प्रयोग एवं परीक्षण प्रयोगशाला में करता है।

(vi) **समस्या के समाधान के लिए निष्कर्षों के आधार पर निर्णय लेना :–** इस विधि में व्यक्ति परिणामों के द्वारा यह निर्णय लेता है कि समस्या की प्रकृति के आधार पर उसके समाधान हेतु कौन सी विधि प्रयुक्त होगी।

(vii) **समस्या के समाधान हेतु चयनित प्रयोग :—** इस चरण में व्यक्ति अपने द्वारा समस्या—समाधान के लिए चयन की गई विधि का प्रयोग समस्याओं को समाप्त करने के लिए करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

15. समस्या समाधान की किसी दो वैज्ञानिक विधियों का नाम लिखिए।

10.18 समस्या समाधान विधि का शिक्षा में महत्व

शिक्षा में समस्या—समाधान विधि का सर्वाधिक महत्व है। शिक्षक कक्षा में इन विधियों का प्रयोग करके ही समस्या का समाधान करने का प्रयास करते हैं। समस्या समाधान विधि के प्रयोग के कई लाभ है जो निम्नवत है —

1. समस्या का समाधान करने के लिए शिक्षार्थी के अन्दर रूचि का विकास होता है।
2. समस्याओं के समाधान के प्रयास करने या उनका समाधान कर देने से शिक्षार्थियों के अन्दर आत्मविश्वास की वृद्धि होती है।
3. यह विधि शिक्षार्थियों के अन्दर प्रयोगशाला में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग कैसे होगा उसके लिए आत्मविश्वास के साथ, करके सीखने की क्षमता का विकास करती है।
4. समस्याओं के समाधान के लिए शिक्षार्थी कई स्तर से प्रयास करते हैं, चिन्तन करते हैं, समस्या पर तर्क करते हैं। इस प्रकार के कार्यों को करने से उनके अन्दर सर्जनशील चिन्तन तथा तार्किक शक्ति की क्षमता का विकास होता है।
5. समस्या समाधान विधि भविष्य में समस्याओं को कैसे निस्तारित एवं उनका समाधान करेंगे इसके लिए तैयार करती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए। इकाई के अन्त में दिए गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

16. शिक्षा में समस्या समाधान विधि के किन्ही दो महत्वों को लिखिए।

10.19 सारांश

व्यक्ति को कार्य के क्षेत्र में निर्देषित एवं अभिप्रेरित करने वाली आंतरिक एवं मानसिक शक्ति ही अभिप्रेरणा शक्ति है। आन्तरिक एवं बाह्य प्रकार से अभिप्रेरणा दो प्रकार की होती है। अभिप्रेरणा प्राप्त करने के चार स्रोत हैं – आवश्यकताएँ, अन्तर्नोद, उद्दीपन तथा प्रेरक या अभिप्रेरक। आवश्यकताओं के जन्म लेने से अन्तर्नोद का जन्म होता है। अन्तर्नोद तनाव की वह स्थिति है जो व्यक्ति को क्रियाशील बनाती है तथा उसे प्रारम्भिक अवस्था की ओर अग्रसर करती है। उद्दीपन का अभिप्रेरणा के स्रोत के रूप में विशेष महत्व है। व्यक्ति के अन्दर उत्पन्न आवश्यकता की पूर्ति उद्दीपन के द्वारा संभव होती है। आवश्यकता पूर्ण होने पर अन्तर्नोद समाप्त हो जाता हैं। प्रेरक वह तत्व है जो बालकों को अधिगम के लिए अभिप्रेरित करता है जिससे वे विषय वस्तु का बोध कर, उसे सीख सके। अभिप्रेरक व्यक्ति को निश्चित लक्ष्यों की ओर प्रेरित करने का सशक्त माध्यम है। अभिप्रेरणा सकारात्मक एवं नकारात्मक दो प्रकार की हो सकती है। किन्तु प्रेरक का प्रयोग अत्यन्त सावधानीपूर्वक छात्रों के हित में ही किया जाना चाहिए। चिन्तन विचार करने की मानसिक प्रक्रिया हैं जो समस्याओं के उत्पन्न होने के कारण प्रारम्भ होती है और तब तक चलती रहती है जब तक समस्या का समाधान नहीं हो जाता हैं। इस अध्याय में अभिप्रेरणा के साथ–साथ चिन्तन के प्रकार, चिन्तन विकास के उपाय, तर्क का अर्थ, तर्क के पद, तर्क का शैक्षिक महत्व तथा समस्या समाधान के अर्थ उनकी विधियाँ एवं षिक्षा में समस्या–समाधान विधि का क्या महत्व है इसके सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन किया गया है।

10.20 अभ्यास कार्य

(1) ''आवश्यकता, अंतर्नोद तथा उद्दीपन के मध्य सम्बन्ध है।'' विवेचना कीजिए।

(2) अभिप्रेरक क्या है? इनका वर्गीकरण कीजिए।

(3) अधिगम की प्रक्रिया में अभिप्रेरणा के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

(4) चिन्तन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसके प्रकारों की विवेचना कीजिए।

(5) चिन्तन के विकास के उपायों का वर्णन कीजिए।

(6) तर्क को परिभाषित करते हुए उनके विभिन्न पदों की विवेचना कीजिए।

(7) तर्क के शैक्षिक महत्व का वर्णन कीजिए।

(8) समस्या समाधान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उनके वैज्ञानिक विधियों तथा शिक्षा में महत्व की विवेचना कीजिए

10.21 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. Agrawal, J.C. (1995) : Essentials of Educational Psychology, Vikas Publishing House, Private Limited, New Delhi.

2. Bhatia, H.R. (1977) : A.Text book of Educational Psychology, Macmillan, New Delhi.
3. Chauhan, S.S. (1988) : Advanced Educational Psychology, Vikas Publication, New Delhi.
4. Srivastava, D.S. (2008) : Educational Psychology, Shree Publishers & Distributors, New Delhi.
5. गुप्ता, एस0 पी0 एवं गुप्ता, अलका (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
6. पाण्डेय, रामशकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
7. भाई योगेन्द्रजीत, (2009 / 2010) : शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा पब्लिकेशन आगरा –2
8. सिंह, अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी. बी. प्रिन्टर्स, पटना।
9. पाठक पी.डी. (2010): शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा –2

10.22 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अभिप्रेरणा से तात्पर्य बालक के अन्दर संचित उसकी आन्तरिक शक्ति है, जो अदृश्य होती है, यह आन्तरिक शक्ति बालक को लक्ष्य प्राप्त करने के लिए उचित दिशा में कार्य करने हेतु अभिप्रेरित करती है।

   गुड के अनुसार – ''प्रेरणा कार्य को आरम्भ करने, जारी रखने और नियमित करने की प्रक्रिया है।''

2. ''अन्तर्नोद या उत्तेजना व्यक्ति में वह शक्ति है, जो उसे आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए अपेक्षित कार्य हेतु उत्प्रेरित करती है।''

3. **हिलगार्ड –** ने तीनों की घनिष्ठता के संबंध में लिखा है–

   '' आवश्यकता से चालक की उत्पत्ति होती है। चालक बढ़े हुए तनाव की स्थिति है जो कार्य और प्रारम्भिक व्यवहार की ओर अग्रसर करता है। उद्दीपन बाह्य वातावरण की कोई वस्तु होती है, जो आवश्यकता की संतुष्टि करती है और इस प्रकार क्रिया के द्वारा चालक को कम कर देती है।'

4. शिक्षक का व्यवहार सदैव संतुलित एवं अभिप्रेरक का होना चाहिए।

5. निन्दा तथा दण्ड नकारात्मक प्रकार के अभिप्रेरक है।

6. जे.पी. गिलफोर्ड के अनुसार– '' चिन्तन प्रतीकात्मक व्यवहार है। यह सभी प्रकार के प्रतिस्थापन से सम्बन्धित हैं।''

7-(i) चिन्तन एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है।

(ii) चिन्तन समस्या के जन्म लेते ही प्रारम्भ होती है और समाधान के समय तक चलती रहती है।

8. यह सबसे उच्च स्तर का चिन्तन है। इसमें बालक किसी भी प्रकार की समस्या का समाधान तार्किक चिन्तन के आधार पर करता है।

9. प्रत्यय : प्रत्यय चिन्तन के लिए एक महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ है। प्रत्यय की सहायता से चिन्तन करने में समय कम लगता है। प्रत्यय जितना अधिक स्पष्ट एवं सकरात्मक होगा व्यक्ति के चिन्तन करने की गति उतनी ही स्पष्ट और सरल होगी।

10- (i) छात्रों को सूक्ष विधि से सीखने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए।

(ii) छात्रों के अन्दर किसी विषय वस्तु को सोचने, समझने एवं उसका समाधान करने के लिए जिज्ञासा उत्पन्न करनी चाहिए।

11. **ड्रेवर के अनुसार** – ''तर्क सामान्य सिद्धान्तों के प्रयोग द्वारा समस्या समाधान की प्रक्रिया है।''

12. तर्क के पद के नाम– (i) समस्या का होना (ii) समस्या की जानकारी (iii) समस्या–समाधान के साधन (iv) किसी एक उपाय का चयन (v) उपायों को प्रयोग करने की विधि।

13- (i) शिक्षा में आगमन – विधि के प्रयोग से तार्किक चिन्तन की विकास होता है।

(ii) प्रत्येक आयु वर्ग के बालकों के लिए अध्यापक को तार्किक चिन्तन के अवसर उपलब्ध कराने चाहिए जिससे उनका तार्किक विकास हो सकें।

14. स्किनर के अनुसार – ''समस्या–समाधान किसी लक्ष्य की प्राप्ति में बाधा डालती प्रतीत होती है। कठिनाईयों पर विजय पाने की प्रक्रिया है। यह बाधाओं के बावजूद सामन्जस्य करने की विधि है।''

15- (i) सूचना सग्रह (ii) समस्या का मूल्यांकन

16- (i) समस्या का समाधान करने के लिए शिक्षार्थी के अन्दर रूचि का विकास होना चाहिए।

(ii) समस्या–समाधान विधि भविष्य में समस्याओं को कैसे निस्तारित एवं उनका समाधान करेगे इसके लिए तैयार करती है।

इकाई – 11 : स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 स्मृति

11.3.1 स्मृति की प्रकृति

11.3.2 स्मृति की परिभाषाएँ

11.4 स्मृति की अवस्थाएँ

11.4.1 अधिगम या सीखना

11.4.2 धारण या धारणा

11.4.3 पुनर्स्मरण या प्रत्यास्मरण

11.4.4 अभिज्ञान या पहचान

11.5 स्मृति के प्रकार

11.6 स्मरण के विकास की विधियाँ

11.6.1 एकाग्रचित्तता

11.6.2 उद्देश्य का स्पष्ट होना

11.6.3 अभिव्यक्ति

11.6.4 सूचना को कूटबद्ध करना तथा संग्रह करना

11.6.5 आवृत्ति

11.6.6 अविराम एवं विराम विधि

11.6.7 पूर्ण या आंशिक विधि

11.7 स्मृति को प्रभावित करने वाले तत्त्व

11.7.1 मानसिक स्थिति

11.7.2 प्रेरणा एवं रूचि

11.7.3 सार्थक विषय वस्तु

11.7.4 दोहराना या अभ्यास

11.7.5 स्वास्थ्य

11.7.6 अधिगम की विधियाँ

11.7.7 परीक्षण

11.7.8 पाठ्य सामग्री
11.7.9 स्मरण की इच्छा
11.8 विस्मृति का अर्थ एवं परिभाषाएँ
11.8.1 विस्मृति का अर्थ
11.8.2 विस्मृति की परिभाषाएँ
11.8.3 विस्मृति के कारण
11.8.4 विस्मृति के सामान्य कारण
11.8.5 विस्मृति की उपयोगिता
11.9 आदत निर्माण
11.10 आदत का अर्थ एवं परिभाषाएँ
11.10.1 कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ
11.11 आदत निर्माण के महत्वपूर्ण पक्ष
11.12 आदत की विशेषताएँ
11.13 आदत के प्रकार
11.14 बुरी आदतों को समाप्त करने के उपाय
11.15 अधिगम एवं शिक्षा में आदतों का महत्व
11.16 अनुशासन
11.17 अनुशासन को प्रभावित करने वाले कारक
11.18 अनुशासन को बनाये रखने के उपाय
11.19 सारांश
11.20 अभ्यास कार्य
11.21 कुछ उपयोगी पुस्तकें
11.22 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.1 प्रस्तावना

इस इकाई में स्मृति, विस्मृति, आदत का निर्माण एवं अनुशासन के विषय में अध्ययन करेंगे। स्मृति पूर्व के संस्कारों को जोड़कर भूतकाल की बातों को अवचेतन मन में सुसुप्तावस्था में एकत्र रखती है। जो आवश्यकता पड़ने पर जाग्रत हो उठते हैं। स्मृति के बिना मानव का जीवन संभव नहीं है क्योंकि प्रत्येक क्षण किया गया कार्य पूर्व के क्षण से जुड़ा होता है। यदि पूर्व के क्षण की स्मृति नहीं होगी तो हम अगले क्षण के कार्य की योजना नहीं बना पाएँगे। बाल्यावस्था में बालक जो कुछ सीखता है, वह

उसे वृद्धावस्था तक स्मरण रहता है, यही स्मृति है। स्मृति के अभाव में व्यक्ति कोई भी बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य नहीं कर सकता है। किसी भी चीज को लम्बी अवधि तक याद रखना अच्छी स्मृति की पहचान है। समय–समय पर अनेक कारक बालक की स्मृति को प्रभावित करते रहते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पूर्व में प्राप्त अनुभवों को यथावत उसी रूप में याद रखना ही स्मृति कहलाता है। यह एक जटिल प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में असफल होने पर अनुभवजन्य स्मृति लुप्त हो जाती है। इसे विस्मृति तथा इस प्रक्रिया को विस्मरण कहते हैं। इसके साथ–साथ इस इकाई में आदतों के निर्माण के सम्बन्ध में भी अध्ययन करेंगे। इस इकाई में आदत क्या है, उसकी विशेषताओं, आदत के प्रकार, अच्छे एवं बुरे आदत का बालकों के जीवन में क्या प्रभाव पड़ता है इसका अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन में ही बुराई को कैसे समाप्त किया जा सकता है उसके उपाय के सम्बन्ध में भी वर्णन किया गया है। इस इकाई के अन्तर्गत ही अनुशासन के अर्थ, उद्देश्य, लक्ष्य, अनुशासन को प्रभावित करने वाले औपचारिक तथा अनौपचारिक कारकों के साथ–साथ विद्यालय में छात्रों को कैसे अनुशासित किया जा सकता है तथा अनुशासन को बनाए रखने के क्या–क्या उपाय हैं उसके सम्बन्ध में भी विस्तृत चर्चा की गई है।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप सक्षम हो जायेंगे कि :

1. स्मृति की प्रकृति को समझ सकेंगे।
2. स्मृति की परिभाषा एवं अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
3. स्मृति की विधियों का प्रयोग कर सकेंगे।
4. स्मृति को प्रभावित करने वाले तत्वों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5. स्मृति के लक्षण को पहचान सकेंगे।
6. विस्मृति के कारकों एवं उनके निवारण के उपाय के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
7. आदत के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
8. आदतों की विशेषताओं एवं उसके प्रभाव से अवगत हो सकेंगे।
9. बुरे आदतों को कैसे समाप्त किया जा सकता है उसके विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
10. अनुशासन के उद्देश्य व लक्ष्य को समझ सकेंगे।
11. अनुशासन को प्रभावित करने वाले कारक व उन्हें दूर करने के उपाय के सम्बन्ध में चर्चा कर सकेंगे।

11.3 स्मृति

11.3.1 स्मृति की प्रकृति

स्मृति एक जटिल एवं मानसिक क्रिया है। इसी मानसिक क्रिया के द्वारा व्यक्ति अपने अनुभवों से प्राप्त ज्ञान को मस्तिष्क में एकत्रित करता है, जो अवचेतन की स्थिति में पड़े रहते हैं। आवश्यकता पड़ने पर पुनः सक्रिय हो जाते हैं। एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि मस्तिष्क की वह क्रिया जिसके द्वारा हम अपने पूर्व अनुभवों से लाभ उठाते हैं, स्मृति कहलाती है। भूतकाल में प्राप्त अनुभवों को वर्तमान में लाना स्मृति है। मनुष्य की स्मृति अन्य जीव–जन्तुओं की तुलना में अधिक हाती है क्योंकि वे अपने पूर्वानुभवों का पूरा–पूरा लाभ उठाते हैं। किसी भी प्रकार का बाह्य उद्दीपन अथवा आवश्यकता अवचेतन मन में स्थित अनुभवों को स्मृति का रूप प्रदान कर चेतन मन में ले आती है। स्मृति हमारे मस्तिष्क की संचयन शक्ति है। इस शक्ति की कई अवस्थाएँ होती हैं तथा कई ऐसे कारक होते हैं जो स्मृति को प्रभावित करते हैं। स्मृति को कई विधियों द्वारा अधिक दीर्घकालिक बनाया जा सकता है।

11.3.2 स्मृति की परिभाषाएँ

विभिन्न विद्वानों ने अपने मतानुसार स्मृति की अलग–अलग परिभाषाएँ दी हैं। ये सभी परिभाषाएँ स्मृति के अर्थ को स्पष्ट करती हैं तथा उसकी व्याख्या करती हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषाएँ निम्न हैं –

विलियम जेम्स – '' स्मृति चेतना से विलग हो जाने के पश्चात् मन की एक अतीत दशा का ज्ञान है, यह (स्मृति) एक घटना या तथ्य का ज्ञान है जिसके सम्बन्ध में हम मध्यवर्ती काल में अतिरिक्त चेतना के साथ सोच भी नहीं रहे थे कि हमने पहले उसे सोचा या अनुभव किया है।''

"Memory is the knowledge of a former state of mind after it has all ready once dropped from consciousness or rather it is the knowledge of an event, or fact which meantime we have not been thinking with the additional consciousness, that we thought or experienced it before."

-William James

प्रो0 स्काउट – '' स्मृति एक आदर्श पुनरावृत्ति है जिसमें अतीतकालीन अनुभवों के पदार्थ उसी क्रम एवं ढंग में जाग्रत होते हैं जैसे कि वे पहले उपस्थित हुए थे।''

"Memory is the ideal revival in which the objects of the past experience are reinstated as far as possible in the order and manner of the original occurrence."

-Prof. Scout

जेम्स ड्रेवर – '' स्मृति जीवित प्राणियों की विशेषता है, जिनके कारण जो अनुभव प्राप्त करते हैं, उसका प्रभाव पीछे छोड़ जाते हैं। वे प्रभाव भविष्य के प्रभाव तथा अनुभव को परिष्कृत करते हैं, जिसके कारण वह एक इतिहास हो जाते हैं, वह इतिहास स्वयं में आलेख बन जाता है।''

"Memory is the experience of living organism, in virtue of which what they experience leaves behind effects which modify future experience and behaviour, in virtue of which they have a history, and that history is recorded in themselves." **- James Drever**

वुडवर्थ :– ''पूर्व समय में सीखी हुई बातों के याद करना ही स्मृति है।''

"Memory consists in remembering what has been learned."**-Woodworth**

मैकडूगल – '' स्मृति का तात्पर्य भूतकालीन घटनाओं के अनुभव की कल्पना करना है एवं यह पहचान लेना है कि वे अपने ही भूतकालीन अनुभव हैं।''

"Memory implies imaging of events as experienced in the past and recognising them as belonging to one's own past experience."

- Mc. Dougall

इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि स्मृति पूर्व में प्राप्त अनुभवों को यथावत उसी क्रम में याद करने से सम्बन्धित है। अधिगम से स्मृति का अस्तित्व उपजता है। अधिगम को प्रभावित करने वाले तत्व स्मृति को संगठित करते हैं। अपनी अन्तर्निहित शक्तियों द्वारा मनुष्य अनुभव प्राप्त कर अपने व्यवहार को परिष्कृत करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

1. स्मृति की प्रकृति स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

2. बुडवर्थ द्वारा दी गई स्मृति की परिभाषा लिखिए।

– –

– –

– –

11.4 स्मृति की अवस्थाएँ

स्मृति एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया मुख्य रूप से चार तत्वों पर निर्भर करती है। इसे हम स्मृति की अवस्थाएँ भी कह सकते हैं। ये अवस्थाएँ हैं–

i. अधिगम या सीखना

ii. धारण या धारणा

iii. पुनः स्मरण या प्रत्यास्मरण

iv. अभिज्ञान या पहचानना

इससे पहली अवस्था में किसी वस्तु को सीखा जाता है। दूसरी में सीखने के बाद उस वस्तु को मस्तिष्क में धारण किया जाता है अर्थात् मस्तिष्क में बैठा लिया जाता है। तीसरी अवस्था पुनः स्मरण की होती है तथा अन्तिम चौथी अवस्था अभिज्ञान या पहचानने से होती है। इस प्रक्रिया में चारों अवस्थाओं से गुजर कर ही स्मृति पूर्ण होती है अर्थात पहचानने की क्रिया सम्पादित होती है।

11.4.1 अधिगम या सीखना

सीखने तथा स्मरण में घनिष्ठ सम्बन्ध है। किसी वस्तु की स्मृति के रूप में रखने के लिए उसका सर्वप्रथम जानना या सीखना आवश्यक होता है। बालक किसी विषय को बार–बार पढ़ता है, दोहराता है तो उस विषय की स्पष्ट छाप उसके मस्तिष्क पर पड़ जाती है और वह उस विषय को सीख जाता है। स्मृति की दूसरी अवस्थाएँ भी सीखने पर निर्भर करती हैं। बालक की स्मृति का तेज होना सीखने की प्रक्रिया पर आधारित होता है।

11.4.2 धारण या धारणा

धारणा का अर्थ होता है– धारण करना। किसी चीज को सीखकर उसे मस्तिष्क में धारण करना ही 'धारणा' है। किसी वस्तु की छाप मस्तिष्क पर अंकित होकर अवचेतन मस्तिष्क में निष्क्रीय रूप में पड़ी रहती है। वह वस्तु आवश्यकतानुसार स्मरण करने पर पुनः जीवन्त हो उठती हैं – यही धारणा है। अलग–अलग व्यक्तियों में धारणा शक्ति भिन्न–भिन्न हो सकती है। सीखे हुए विषय वस्तु को व्यक्ति कितने समय तक संचित रख पाता है, यह उसकी धारण शक्ति पर निर्भर करता है। धारणा शक्ति की तीव्रता या न्यूनता पर किसी व्यक्ति की स्मृति निर्भर करती है। व्यक्ति के मस्तिष्क से स्मृति के नष्ट हो जाने पर व्यक्ति कुछ बातें विस्मृत कर देता है। मनोवैज्ञानिकों ने धारणा शक्ति को जन्मजात माना है। प्रत्येक व्यक्ति में जन्म के समय से ही धारणा शक्ति विद्यमान रहती है। धारणा शक्ति मस्तिष्क, स्वास्थ्य, रूचि, विचार तथा तर्क पर निर्भर करती है। कुछ व्यक्तियों का मस्तिष्क स्मृति चिन्हों को बड़ी आसानी से ग्रहण कर लेता है। कभी–कभी स्वास्थ्य खराब होने का प्रभाव धारणा

शक्ति पर पड़ता है। जिस विषय को सीखने में रूचि होती है उसे व्यक्ति जल्दी सीख लेता है और लम्बी अवधि तक उसे स्मरण रखता है। इसी प्रकार विचार का भी बहुत अधिक महत्व है। विचार करने के बाद स्मृति के चिन्ह मस्तिष्क पर बहुत अधिक गहरे पड़ते हैं। इस प्रकार धारणा शक्ति व्यक्ति के मस्तिष्क, स्वाथ्य, रूचि तथा विचार व तर्क पर निर्भर करती है। धारणा शक्ति स्मृति का केन्द्र बिन्दु है।

11.4.3 पुनर्स्मरण या प्रत्यास्मरण

स्मृति की तीसरी अवस्था पुनर्स्मरण है। पूर्व में प्राप्त स्मृति चिन्हों को अचेतन मस्तिष्क से चेतन मस्तिष्क में लाना पुनर्स्मरण कहलाता है। भली–भाँति सीखा हुआ विषय जिसे अच्छी तरह से धारण कर लिया गया हो, उसे आसानी से स्मरण किया जा सकता है। पुनर्स्मरण पूर्णतया धारणा शक्ति पर निर्भर करता है। कभी–कभी डर, चिन्ता, तनाव, कुण्ठा, परेशानी की स्थिति में पुनर्स्मरण संभव नहीं होता है। प्रायः बालक अध्यापक के डर से अथवा परीक्षा के तनाव के कारण पूर्व में सीखे पाठ को धारण करने के बाद भी पुनर्स्मरण नहीं कर पाता है।

11.4.4 अभिज्ञान या पहचान

अधिगम, धारण व पुनर्स्मरण के बाद अभिज्ञान स्मृति की चौथी अवस्था है। जब व्यक्ति किसी विषय के पूर्व के अनुभवों के आधार पर स्मरण कर लेता है। अधिगम में एक प्रकार की चेतना सन्निहित होती है, जिसके द्वारा पूर्व में सीखी गई विषयवस्तु को फिर से जान लिया जाता है। वुडवर्थ ने अपनी परिभाषा द्वारा इसे अधिक स्पष्ट किया है – ''पूर्व अनुभवों को जानना ही पहचान है, या वर्तमानकाल में उस वस्तु से परिचित होना जिससे कि अतीत काल में परिचित हो चुके हैं।'' पहचानना का अर्थ होता है कि भूतकाल में धारण किए गये विषय का पुनःस्मरण द्वारा उसका अभिज्ञान होना कि वह वस्तु अथवा विषय क्या है, उसका स्वरूप क्या है, उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति से हम 10 वर्षों के अन्तराल के बाद मिलते है तो उसके द्वारा किया गया व्यवहार या उसकी पूर्व में कही गई बातें चित्र के समान हमारे स्मृति पटल पर एक–एक कर पुनः उभर आती है और हमें उस व्यक्ति से हम कब, कहाँ कैसे मिले थे, उसका नाम आदि क्या है? इसे ही पहचानना कहते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

3. स्मृति की कौन–कौन सी अवस्थाएँ हैं ?

____

____

____

4. अभिज्ञान किसे कहते हैं?

____

____

____

11.5 स्मृति के प्रकार

स्मृति कई प्रकार की होती है। प्रत्येक व्यक्ति की स्मृति या स्मरण क्षमता भिन्न–भिन्न होती है। कुछ लोग एक बार में ही याद की गई बातों को लम्बे समय तक याद रखते हैं तो कुछ व्यक्ति बार–बार याद करने पर भी बातों को बार–बार भूलते हैं। व्यक्तियों में स्मृति की क्षमता एवं योग्यता के आधार पर स्मृति के प्रकारों को दो प्रकार से विभक्त किया जा सकता है–

स्मृति के प्रकार

वास्तविक स्मृति | **आदतजन्य स्मृति**

वास्तविक स्मृति किसी संस्मरणों पर आश्रित नहीं होती है। बल्कि यह भूतकाल में किए गये अनुभवों पर आधारित होती है। जबकि आदतजन्य स्मृति कृत्रिम प्रयासों पर निर्भर करती है। अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन प्रकारों के अनुसार स्मृति का वर्गीकरण पुनः निम्न प्रकार से भी किया जा सकता है।

स्मृति के प्रकार

तात्कालिक निष्क्रिय स्मृति | **स्थायी स्मृति** | **यान्त्रिक स्मृति** | **रटन्त स्मृति** | **तार्किक स्मृति** | **सक्रिय स्मृति**

(i) तात्कालिक स्मृति– तात्कालीन स्मृति या अल्पकालीन स्मृति उम्र के साथ विकसित होती है। विद्वान मेनमर्न के खोजों के अनुसार अधिकांशतः 13 से 17 वर्ष की किशोरावस्था के मध्य तात्कालीन स्मृति का विकस तेजी से होता है। 25 वर्ष तक की अवस्था तक इसका पूर्ण विकास हो जाता है। तात्कालिक स्मृति का अर्थ होता है किसी वस्तु को तुरन्त सीख कर तुरन्त उसी रूप में उसे अभिव्यक्त करना।

(ii) स्थायी स्मृति – स्थायी स्मृति को ही दीर्घकालिक स्मृति भी कहते हैं। तात्कालिक स्मृति के विपरीत इस स्मृति के द्वारा निश्चित समय व्यतीत हो जाने के बाद इसका स्मरण होता है। इस प्रकार की स्मृति बालकों की अपेक्षा वयस्कों में

अधिक होती है क्योंकि उनके द्वारा प्राप्त अनुभव स्थायी होते हैं। मानव जीवन में दीर्घकालिक स्मृति अर्थात स्थायी स्मृति का महत्व अधिक होता है।

(iii) यांत्रिक स्मृति – इस प्रकार की स्मृति आदतजन्य स्मृति की श्रेणी में आती है। इसे यान्त्रिक या शारीरिक स्मृति भी कहते हैं। जिस प्रकार यन्त्र कार्य करता है उसके कार्यों में एकरूपता होती है, उसी प्रकार किसी कार्य को प्रतिदिन करने की आदत हो जाने पर उसमें यंत्रवत एकरूपता आ जाती है। जैसे – एक तैराक बिना किसी स्मृति के ही पानी में जाते ही हाथ–पैर चलाने लगता है या फिर एक ड्राइवर के हाथ–पैर यन्त्रवत गाड़ी के सभी उपकरणों पर अपने–आप चले जाते हैं।

(iv) रटन्त स्मृति – रटन्त स्मृति दीर्घकालीन स्मृति नहीं होती। इसे अच्छी स्मृति नहीं माना जाता। प्रायः बच्चों में इस प्रकार की स्मृति पायी जाती है। बच्चों में बिना समझे ही किसी चीज को रट लेने की प्रवृत्ति पाई पाई जाती है। बार–बार रट कर याद कर लेना ही रटन्त स्मृति होती है।

(v) तार्किक स्मृति – तर्क पर आधारित स्मृति को तार्किक स्मृति कहते हैं। किसी वस्तु के महत्व, उपयोगिता तथा उसके औचित्य आदि पर तर्क–वितर्क करके उसे धारण करना या स्मरण रखना ही तार्किक स्मृति है।

(vi) सक्रिय स्मृति – पूर्व में सीख कर, धारण किए हुए अपने अनुभवों को समय पर आवश्यकतानुसार स्मरण करना सक्रिय स्मृति है। परीक्षा के समय विद्यार्थी सक्रिय स्मृति द्वारा ही पूर्व में सीखे पाठों को स्मरण कर उत्तर लिखते हैं। स्मृति के आधार पर ही बालक का मूल्यांकन किया जाता है। पूर्व में अर्जित उपलब्धियों के मूल्यांकन का आधार ही स्मृति है।

(vii) निष्क्रिय स्मृति – बिना प्रयत्न के ही जब पूर्व के अनुभवों का स्मरण होता है तो उसे निष्क्रिय स्मृति कहते है। ऐसी स्मृतियों का कोई विशेष लक्ष्य नहीं होता है। ये सुसुप्तावस्था में पड़ी होती है जो बिना किसी विशेष प्रयत्न के ही स्मरण हो आती है।

11.6 स्मरण के विकास की विधियाँ

प्रत्येक व्यक्ति में स्मरण की क्षमता भिन्न–भिन्न होती है। कुछ व्यक्ति तीक्ष्ण स्मृति वाले तो कुछ क्षीण स्मृति वाले होते हैं। स्मृति क्षमता बहुत कुछ स्मृति की विधियों पर निर्भर करती है। उचित विधियों से सीखने या याद करने से स्मृति क्षमता में विकास की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

11.6.1 एकाग्रचित्तता

एकाग्रचित्त होकर सीखे गये पाठ सदैव स्मरण रहते हैं। एकाग्रचित्त होकर कार्य करने से स्मृति में वृद्धि होती है। बहुत अधिक समय तक पढ़तें रहने की अपेक्षा ध्यान

एकाग्र कर थोड़ी देर ही पढ़ाई करने से पाठ को याद करना अधिक उपयोगी होता है।

11.6.2 उद्देश्य का स्पष्ट होना

स्मरण करने के लिए सीखने की क्रिया सदैव लक्ष्य या उद्देश्य के अनुसार निर्धारित होनी चाहिए। उसके लिए निश्चित उद्देश्य का ज्ञान होना चाहिए। लक्ष्य या उद्देश्य स्पष्ट होने पर कम समय में ही अधिक बेहतर कार्य किया जा सकता है।

11.6.3 अभिव्यक्ति

जिसे स्मरण करना हो, उसकी अभिव्यक्ति आवश्यक होती है। जिस विषय को विद्यार्थी स्मरण रखना चाहता है उसे प्रमुख तथ्यों तथा सारांश को तैयार कर स्मरण करना चाहिए। उसके संबंध में स्वयं से प्रश्न पूछने चाहिए, जिससे समय आने पर वह पूर्ण रूप से उसे अभिव्यक्त कर पाये।

11.6.4 सूचना को कूटबद्ध करना तथा संग्रह करना

स्मरण करने की सरलतम विधि के रूप में सूचना को कूटबद्ध किया जाता है। लम्बे एवं गूढ़ विषयों को भी कूटबद्ध कर अर्थात उन्हें सूत्र रूप में सरलता से संग्रह किया जा सकता है। सूत्र रूप में किसी वस्तु को याद करना बहुत अधिक सरलतम विधि है और समय आने पर सम्पूर्ण विषय का स्वतः स्मरण हो आता है।

11.6.5 आवृत्ति

बार–बार किसी विषय को दोहराने से मस्तिष्क में उसकी आकृति बन जाती है। और वह विषय व्यक्ति को याद हो जाता है। विद्वानों का मत है कि पाठ्यक्रम को स्मरण करने में आवृत्ति का बहुत अधिक महत्व है। इस विधि के द्वारा स्मृति का विकास किया जा सकता है।

11.6.6 अविराम एवं विराम विधि

स्मृति को विकसित करने की अविराम एवं विराम विधियाँ प्रचलित हैं। अविराम विधि में बिना रूके लगातार पढ़ना या बार–बार किसी विषय को याद करना अविराम विधि कहलाती है। जैसे – किसी पाठ विशेष को आधे घंटे में लगातार पढ़कर याद करना। उसी प्रकार किसी पाठ को रूक–रूक कर याद करना विराम विधि कहलाती है। इस विधि में साहचर्यों का उपयोग अधिक अच्छी प्रकार होता है। विराम विधि से याद किए पाठों का मस्तिष्क पर चित्रण अपेक्षाकृत अधिक गहरा होता है।

11.6.7 पूर्ण या आंशिक विधि

जिस प्रकार अविराम या विराम विधि में समय की प्रधानता होता है। ठीक उसी प्रकार पूर्ण या आंशिक विधि विषय–वस्तु की प्रधानता पर निर्भर करती है। जब किसी विषय को पूरा का पूरा एक अधिक उपयोगी होती है। किसी बड़े विषय को एक बार में पूरा–पूरा याद करना कठिन होता है। इसके लिए हमें आंशिक विधि अपनानी पड़ती

है। जब याद की जाने वाली सामग्री को हम खण्डों में बाँट कर याद करते हैं तो उसे आंशिक विधि कहते हैं।

मनोवैज्ञानिकों ने इन दोनों विधियों को ही उपयोगी माना है। छात्र स्मरण करते समय इन दोनों विधियों को ही प्रयोग में लाते हैं जिससे उन्हें तीव्र स्मरण हो। अनेक विद्वानों ने इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। **लोही स्टीफन्स (Lohi Steffens)** के अनुसार –''सभी व्यक्ति स्मरण की प्रक्रिया में मिश्रित विधियों का उपयोग करते हैं।'' **विंच** ने कविता के स्मरण में छात्रों पर अन्वेशण के द्वारा आंशिक विधि को पूर्ण विधि की तुलना में अधिक उपयोगी माना।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

5. स्मृति के प्रकार पर प्रकाश डालिए।

____

____

6. स्मरण के विकास की विधियाँ कौन–कौन सी हैं?

____

____

____

11.7 स्मृति को प्रभावित करने वाले तत्त्व

कई ऐसे तत्त्व या परिस्थितियाँ होती है जो स्मृति की क्षमता को प्रभावित करती हैं। कुछ स्मृति में सहायक होते हैं तो कुछ बाधक होते हैं। अच्छी स्मरण शक्ति के लिए उचित परिस्थिति का होना भी आवश्यक होता है। अतः इस शीर्षक के अन्तर्गत हम उन तत्त्वों का अध्ययन करेंगे जो बालक की स्मरण–क्षमता को प्रभावित करते हैं।

11.7.1 मानसिक स्थिति

किसी भी बालक की स्मरण शक्ति में वृद्धि के लिए उसकी मानसिक स्थिति को भी सुदृढ़ करना आवश्यक होता है। जिस विषय को उसे स्मरण करना है उसके अनुकूल उसकी मानसिक स्थिति का होना अत्यन्त आवश्यक है। किसी वस्तु को भली–भाँति समझ लेने या सीख लेने पर उसे स्मरण करना सरल हो जाता है। क्योंकि बालक की मानसिक स्थिति उसे स्मरण करने योग्य बन जाती है।

11.7.2 प्रेरणा एवं रूचि

किसी भी विषय को स्मरण करने के लिए प्रेरणा एवं रूचि का होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रेरणा उत्पन्न होने पर उस विषय के प्रति रूचि जाग्रत होती है और वह स्मरण में सहायक होती है। प्रेरणा किसी ज्ञान को लम्बी अवधि तक स्मरण रखने के

लिए आवश्यक है। अच्छी तरह स्मरण करने के लिए विषय के प्रति रूचि का होना स्मरण शक्ति में वृद्धि करता है।

11.7.3 सार्थक विषय–वस्तु

सार्थक विषय–वस्तु को स्मरण करना व्यक्ति के लिए सरल होता है। किन्तु विषय यदि सार्थक नहीं है तो वह विषय लम्बी अवधि तक याद नहीं रह पाता है। हम उसे शीघ्र ही भूल जाते हैं। अतः विषय का सार्थक होना स्मरण शक्ति को प्रभावित करता है।

11.7.4 दोहराना या अभ्यास

किसी स्मरण किए गये विषय को बार–बार दोहराना या उसका निरन्तर अभ्यास करते रहना स्मरण शक्ति को प्रभावित करता है। पाठ को दोहराते रहने से स्मृति दीर्घकालिक हो जाती है। याद किया हुआ विषय भूलता नहीं है अपितु लम्बे समय तक मस्तिष्क में संचित रहता है।

11.7.5 स्वास्थ्य

बालक का स्वास्थ्य स्मृति को बहुत अधिक प्रभावित करता है। स्वस्थ बालक किसी भी विषय को शीघ्रता से याद करने में सक्षम होते हैं। जबकि इसके विपरीत शारीरिक अथवा मानसिक रूप से अस्वस्थ बालकों की स्मरण क्षमता अपेक्षाकृत कम होती है वे जल्दी से किसी पाठ को याद करने में समर्थ नहीं हो पाते हैं।

11.7.6 अधिगम की विधियाँ

अधिगम में अथवा सीखने में विधियों का प्रभाव बहुत अधिक पड़ता है। विषय को पढ़ायी जाने वाली विधि का बहुत अधिक प्रभाव बालक के अधिगम पर पड़ता है। इससे स्मरण बहुत अधिक प्रभावित होता है। यदि इस विधि का प्रयोग उचित आयु समूह के बालकों पर होता है तो निश्चय ही उनकी स्मरण–क्षमता में वृद्धि होती है।

11.7.7 परीक्षण

आवश्यकतानुसार बालक द्वारा सीखे गये विषयों पर आधारित परीक्षण द्वारा ज्ञान, का मापन कर छात्रों की स्मृति का पता लगाया जा सकता है। परीक्षण से छात्रों में स्मृति का विकास होता है।

11.7.8 पाठ्य सामग्री

स्मृति पाठ्य–सामग्री के स्वरूप पर भी बहुत अधिक निर्भर करती है। विषय–वस्तु यदि नवीन हो तो छात्र प्रेरणा एवं उत्सुकता से उसे सीखने की इच्छा करता है। पाठ्य–सामग्री की भाषा सरल, सुबोध एवं समसामयिक होने पर वह शीघ्र स्मरण की जा सकती है।

11.7.9 स्मरण की इच्छा

बालकों में स्मरण की दृढ़ इच्छा ही उन्हें स्मरण के लिए प्रेरित करती है। इच्छाशक्ति कमजोर होने पर स्मरण करने की क्षमता भी कमजोर हो जाती है। सीखने की इच्छा न होने पर किसी भी बालक को दबाव डाल कर विषय को याद करवाने पर वह उस पाठ को शीघ्र भूल जाता है। इसलिए सीखने के लिए या याद करने के लिए उस कार्य के प्रति दृष्ट इच्छा शक्ति आवश्यक होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

7. स्मृति को प्रभावित करने वाले मुख्य तत्व क्या हैं?

____

____

____

11.8 विस्मृति का अर्थ एवं परिभाषाएँ

11.8.1 विस्मृति का अर्थ

विस्मरण या विस्मृति मानव जीवन का एक वास्तविक तथ्य है। जीवन में घटित सभी वस्तुओं को हमेशा याद नहीं रखा जा सकता है। परन्तु यह कोई चिन्ता का विषय नहीं है। सीखने के लिए व्यक्ति स्मरण करता है। स्मृति के रूप में सारी वस्तु व्यक्ति के मस्तिष्क में धारण रहती है और धारण की हुई बातें स्मृति चिन्हों के रूप में मस्तिष्क में सुसुप्तावस्था में पड़ी रहती है। आवश्यकतानुसार स्मृति को अवचेतन मन से चेतन मन मे लाने को स्मरण कहते हैं। ठीक इसके विपरीत जब स्मृति के रूप में किसी वस्तु को अवचेतन मन से चेतन मन में लाने में जब हम असफल हो जाते हैं तो उसे हम विस्मरण या विस्मृति कहते हैं। विस्मरण से तात्पर्य स्मरण की विफलता से है। जब व्यक्ति भूतकाल की कुछ घटनाओं या अनुभवों को याद रखने में असमर्थ हो जाता है, या चेतन मन में लाने में असफल हो जाता है, तब उसे विस्मृति कहते हैं। जिस प्रकार जीवन में स्मृति आवश्यक है, उसी प्रकार विस्मृति भी आवश्यक है। मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए विस्मरण आवश्यक है। जीवन की कुछ अप्रिय घटनाओं तथा अतीत के कुछ अनुभवों को व्यक्ति भूलना चाहता है। मानसिक तनाव को कम कर मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए अप्रिय घटनाओं को भूल जाना लाभप्रद होता है और इसके लिए विस्मृति आवश्यक होती है किन्तु विस्मृति के नकारात्मक पक्ष पर ही विशेष बल दिया जाता है।

11.8.2 विस्मृति की परिभाषाएँ

कई मनोवैज्ञानिकों ने विस्मृति की भिन्न–भिन्न परिभाषाएँ दी हैं। उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं –

- **मन** ने विस्मृति की परिभाषा इस प्रकार दी है –

  ''अर्जित अनुभवों के प्रत्यास्मरण की असफलता ही विस्मृति है''

  "Forgetting is failing to retain whatever has been aquired."

  -Munn

- **फ्रायड** के अनुसार – ''विस्मृति वह असुखकारी प्रवृत्ति है जो स्मरण से अलग ले जाती है।''

  "Forgetting is a tendency towards off from that which is unpleasant." -Freud

- ड्रेवर के अनुसार – ''विस्मरण से आशय किसी समय प्रयास करने पर भी किसी पूर्व अनुभव को याद करने अथवा सीखे गये कार्य को करने में असफलता से है।''

  "Forgetting means failure at any time to recall an experience, when attempting to do so, or to perform an action previously lerned." -Drever

11.8.3 विस्मृति के कारण

विस्मृति के कई कारण हो सकते हैं। जिन्हें निम्न दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

1) **क्षीणता –** किसी भी पाठ को स्मरण करने पर उसके चिन्ह मस्तिष्क पर अंकित हो जाते हैं। परन्तु धीरे–धीरे वे चिन्ह मस्तिष्क से लुप्त हो जाते हैं। स्मृति चिन्ह पुनर्स्मरण को सक्रिय करने में चाहे कितना ही शिथिल हो, वह पहचानने की क्रिया के लिए पर्याप्त हो सकता है। परन्तु यदि सक्रिय न किया गया तो वह कुछ समय बाद लुप्त होने लगेगा और किसी भी सामान्य स्थिति में चेतन मन पर दोबारा सक्रिय नहीं हो पायेगा। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इस तथ्य को पूर्णतया स्वीकार नहीं किया है। उनका मानना है कि स्मृति के चिन्ह भले ही पुर्नस्मरण के योग्य न हों परन्तु उनका पूर्ण लोप नहीं होता है। इसे प्रमाणित करते हुए उन्होंने कहा है कि स्मृति चिन्हों के कारण ही पूर्व में याद की गई, किन्तु विस्मृति कविता को कोई भी बालक शीघ्रता से पुनः याद कर लेता है। दोबारा कविता को याद करने में पहली बार याद करने वाली कविता की अपेक्षा बहुत कम समय लगता है।

2) **रूकावट –** विस्मृति का एक मुख्य कारण रूकावट भी है। कभी–कभी स्मृति चिन्ह विद्यमान होने पर भी बीच में कोई बाधा आकर रूकावट उत्पन्न करती है। जिससे विस्मृति हो जाती है। जैसे किसी व्यक्ति से मिलने पर नाम याद करने के प्रयत्न द्वारा भी हमें नाम नहीं याद आता है, जबकि कुछ दिनों पूर्व ही उसका नाम याद किया था। यह सब एक रूकावट के द्वारा होता है। रूकावट के निम्नलिखित मुख्य कारण हैं:–

(अ) बाधा उपस्थित करना – दो स्मृति के मध्य टकराव होने से बाधा उत्पन्न होती है जिससे सही स्मृति नहीं हो पाती है। आदजन्य स्मृति भी अन्य कार्यों में बाधा उत्पन्न करती है। मनोविज्ञान ने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि जब दो समान वस्तुऍ मस्तिष्क के अन्दर प्रविष्ट होती है। तो वर्तमान काल में दोहराई गई या पूर्व में अभ्यास की गई वस्तु के अनुसार ही कार्य किया जाता है।

(ब) पूर्वलक्षी अवरोध – सीखने के तुरन्त बाद यदि एक अवकाश दे दिया जाये तो स्मृति सबसे कम होती क्योंकि उसमें मस्तिष्क क्रियाशील नहीं होता है। सीखने के तुरन्त बाद ही अन्य किसी कार्य में क्रियाशील हो जाने पर भी स्मृति क्षीण हो जाती है। किसी बात को सीखने के बाद मस्तिष्क को दूसरे कार्य में लगा दिया जाये जिससे वह क्रियाशील रहे तब सीखने में बाधा निश्चय ही उपस्थित होगी। दोनों कार्यों में जितनी अधिक समानता होगी, उतनी ही अधिक बाधा उत्पन्न होगी। शीघ्रता से प्राप्त दो स्मृति चिन्ह एक दूसरे को दूषित कर देते हैं। प्रतिगामी अवरोध के कारण हमारे स्मृति चिन्ह निर्बल एवं कमजोर पड़ जाते हैं और हम पहले स्मरण किये गये बातों को भूल जाते हैं।

(स) संवेगात्मक कारण – भय, व्याकुलता अथवा उत्तेजना आदि संवेग स्मृति में बाधक होते हैं। संवेग की स्थिति में शारीरिक व आंगिक चेष्टाएं प्रबल हो जाती हैं, जिससे स्मृति में रूकावट आती है।

11.8.4 विस्मृति के सामान्य कारण

1) **निरर्थक सामग्री –** निरर्थक, अरूचिकर एवं कठिन विषय किसी भी व्यक्ति की स्मृति को कम करके विस्मृति को बढ़ा देता है। उसका सम्बन्ध पूर्व अनुभवों से स्थापित नहीं हो पाता है। सरल, रूचिकर, एवं सार्थक विषय–वस्तु अधिक समय तक स्मृति पटल पर अंकित रहती है।

2) **अधिगम की मात्रा तथा विधि –** बार–बार अभ्यास के द्वारा किसी भी विषय को अच्छी प्रकार से सीखा जा सकता है। जिससे विस्मरण की मात्रा कम होती है। थार्नडाइक ने विस्मरण का कारण अभ्यास का अभाव बताया है। विषयवस्तु को उचित ढंग से विधिपूर्वक क्रमानुसार स्मरण करने से विषय–वस्तु शीघ्र विस्मृत नहीं होती है।

3) **मानसिक आघात तथा रोग –** मानसिक आघात अथवा चोट के कारण कभी–कभी स्मृति पूर्णरूपेण नष्ट हो जाती है या आंशिक रूप से नष्ट हो जाते हैं और

समस्त विषयों का विस्मरण हो जाता है। मानसिक रोग भी विस्मरण को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं।

4) मादक द्रव्य – मादक द्रव्यों का सेवन करने वाले व्यक्तियों की स्मृति धीरे–धीरे क्षीण होने लगती है। उनकी यादाश्त कमजोर हो जाती है और वे विषयवस्तु को भूलने लगते है। पूर्व की स्मृति को वे पुनः चेतन मस्तिष्क में नहीं ला पाते हैं।

5) समय का प्रभाव – समय के साथ–साथ विस्मृति बढ़ती जाती है और स्मृति घटती जाती है। रिस का मानना है कि किसी समय से सीखे गये अनुभव कालान्तर में परीक्षण करने पर विस्मृत जान पड़ते हैं। सामान्य जीवन में हम इसे वृद्ध व्यक्तियों में क्षीण होती स्मृति एक विस्मृति की तीव्रता को देख कर समझ सकते हैं।

11.8.5 विस्मृति की उपयोगिता

1. व्यक्ति प्रत्येक क्षण कुछ न कुछ नया सीखने का प्रयास करता रहता है। यह प्रक्रिया जीवन पर्यन्त निरन्तर चलती रही है। सीखने से उत्पन्न अनुभवों को वह अपने मस्तिष्क में संचित करता रहता है। धीरे–धीरे संचित अनुभवों की मात्रा अधिक होने लगती है। व्यक्ति तत्काल जो कुछ सीखता है उसके लिए मस्तिष्क में स्थान नहीं रहता है। यदि पूर्व में अनुभव द्वारा सीखे गये विषय वस्तु को वह भूलता है तो नई वस्तु के लिए उसकी स्मृति में स्थान बन जाता है और व्यक्ति उसे अपनी स्मृति में धारण कर लेता है।

2. जीवन की प्रिय–अप्रिय सभी घटनाओं को याद रखने में व्यक्ति का जीवन भार स्वरूप प्रतीत होने लगता है। इसके लिए पुरानी एवं निरर्थक वस्तु को भूलना अनिवार्य है।

3. जीवन की अनुपयोगी एवं अप्रिय घटनाओं की स्मृति को विस्मृत कर देना व्यक्ति के स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी होता है, इसके लिए विस्मृति आवश्यक है।

4. सुधार एवं परिपक्वता की दृष्टि से विस्मरण आवश्यक है। **स्टर्ड एवं ओंकडन का मत है– ''यदि हम अपने विचारों में व्यवस्था और बल चाहते हैं तो हमारे लिए विस्मरण आवश्यक है।''**

बोध प्रश्न

टिप्पणी : नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

8. विस्मृति के सामान्य कारण क्या हैं?

____

____

____

11.9 आदत निर्माण

शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति का सर्वांगीण विकास किया जाता है। शिक्षा ही एक ऐसा उपकरण है जिससे व्यक्ति को सभ्य एवं सुसंस्कारिक बनाया जा सकता है। शिक्षा से ही व्यक्ति के अन्दर चरित्र एवं नैतिक गुणों तथा सत्य, अहिंसा, सदाचार पर चलने की प्रेरणा प्राप्त होती है। शिक्षा ही व्यक्ति के अन्दर अच्छी आदतों को विकसित करने के लिए एक उत्प्रेरक का कार्य करती है। प्रस्तुत अध्याय में हम आदत क्या है, अच्छी आदतें कितने प्रकार की होती हैं, अच्छी आदतों की क्या विशेषताएँ हैं, अच्छी आदतों का निर्माण कैसे किया जा सकता है तथा बुरी आदतों को समाप्त करने के क्या साधन हो सकते हैं के विषय में विवेचन किया गया है–

11.10 आदत का अर्थ एवं परिभाषाएँ

व्यक्ति जब किसी कार्य को कई बार दोहराता है तो व्यक्ति को उस कार्य को करने की प्रवृत्ति बन जाती है। अर्थात् कह सकते हैं कि बार–बार अभ्यास करने की लत पड़ जाती है, लत पड़ जाना ही आदत कहलाता है। अतः हम कह सकते हैं जब हम किसी विषय वस्तु को बार–बार अभ्यास के माध्यम से सीखते हैं तो सीखने के परिणाम को ही आदत कह सकते हैं। आदत को अंग्रेजी भाषा में Habit कहते हैं। Habit शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के Habitus अथवा Habcre शब्द से हुई है जिसका अर्थ किसी चीज को प्राप्त करने से है।

जब व्यक्ति किसी कार्य को बार–बार करता है तो उस कार्य को बार–बार करने से उसमें स्थायित्व आ जाता है। स्थायित्व का आना ही आदत में परिवर्तित होने का संकेत है।

मानव अपने जीवन में तरह–तरह के शौक रखता है कोई पढ़ने में रूचि प्रदर्शित करता है, कोई खेल के प्रति लगाव को प्रदर्शित करता है, कोई भाषा या नृत्य करने में रूचि रखता है और इसके विपरित कोई व्यक्ति पान खाने का शौक रखता है ये रूचियाँ या शौक ही व्यक्ति के अन्दर आदत के रूप में परिवर्तित हो जाती है। ये आदत पूर्णतया अर्जित व्यवहार होती है। आदत को हम अर्जित व्यवहार कह सकते हैं जो परिस्थिति के अनुसार विकसित होती है।

11.10.1 कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

आदत के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ निम्न हैं–

गैरेट के अनुसार :– ''आदत उस व्यवहार को दिया जाने वाला नाम है, जो इतनी अधिक बार दोहराया जाता है कि यंत्रवत् हो जाता है।''

"Habit is the name given to behaviour so often repeated as to be automatic." **-Garrett**

लैडेल के अनुसार :– ''आदत, कार्य का वह रूप है, जो आरम्भ में स्वेच्छा से और जान–बूझकर किया जाता है, पर जो बार–बार किए जाने के कारण स्वतः होता है।''

"Habit is a form of activity originally willed and conscious, which by repetition has become automatic." **-Ledell**

मॉर्गन एवं गिलिलैण्ड के अनुसार :– ''आदत वह अर्जित अनुभव है जो व्यवहार परिवर्तन से आता है। अधिगम की प्रक्रिया से ये परिवर्तन आते हैं।''

"All changes of behaviour acquired through experience are called habits. Learning is the process of acquiring these changes."

-Morgan and Gilliland

जेम्स के अनुसार :– ''आदत दूसरा स्वभाव है।''

"Habit is the second nature." **-Jemes**

बोध प्रश्न

टिप्पणी दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

9. आदत की एक परिभाषा लिखिए।

____

____

____

11.11 आदत निर्माण के महत्वपूर्ण पक्ष

व्यक्ति को अपने अन्दर अच्छी आदतों को विकसित करने के लिए अपने जीवन में नियम, उपाय, अनुशासन एवं कुछ सिद्धान्तों का पालन करना आवश्यक है।

1. **अभ्यास के द्वारा :–** अपने जीवन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमने जो लक्ष्य निश्चित किए हैं उसे प्राप्त करन के लिए कठिन परिश्रम की आवश्यकता होती है और वह नियमित अभ्यास के माध्यम से ही स्थायित्व को प्राप्त कर सकती है। अतः अभ्यास के द्वारा किया गया कार्य आदत में परिवर्तित होकर जीवन के लिए सकारात्मक पक्ष को विकसित करता है।

2. **सक्रिय भूमिका के द्वारा :–** व्यक्ति जब किसी कार्य को करना चाहता है तब उसके लिए दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ–साथ दृढ़ संकल्प को मूर्त रूप में परिणत करके ही व्यक्ति के अन्दर अच्छी आदतों को स्थाई बनाया जा सकता है।

3. लगातार कार्य करने की प्रवृत्ति के द्वारा :– यदि हमें किसी अदत का विकास अपने अन्दर करना होता है तब ऐसी स्थिति में बिना किसी विराम, अवरोध व शिथिलता के लगातार उसे करते रहना चाहिए। लगातार कार्य को करने से अभ्यास के माध्यम से आदतें दृढ़ हो जाती हैं। इस सम्बन्ध में जेम्स का मत है –''जब तक नवीन आदतें आपके जीवन में पूर्ण रूप से स्थायी न हो जाय, तब तक उसमें किसी प्रकार का बदलाव नहीं करना चाहिए।

4. जीवनोपयोगी उदाहरणों के माध्यम से :– माता–पिता एवं अध्यापकों को बालकों के जीवन में अच्छी आदतों के विकास के लिए अच्छे–अच्छे उदाहरणों के माध्यम से शिक्षा देनी चाहिए। अतः अध्यापकों को उपदेश देने से अच्छा बालकों के समक्ष अच्छे उदाहरणों को भिन्न–भिन्न प्रकार से प्रस्तुत करना चाहिए।

5. पुरस्कार के द्वारा :– बालकों के अन्दर अच्छी आदतों के विकास के लिए माता–पिता, समाज एवं अध्यापकों को पुरस्कार इत्यादि देकर उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए।

दृढ़ संकल्प के द्वारा :– हम अपने जीवन में जो कार्य करना चाते हैं उसे पूर्ण करने के लिए दृढ़ संकल्पित होते हुए आदत डालना होगा। उदाहरण के लिए यदि हम कक्षा में प्रथम आना चाहते हैं तो लगातार पढ़ने की आदत डालना होगा तथा यदि मैं दौड़ में प्रथम आना चाहता हूँ तो प्रतिदिन अभ्यास के लिए नियमित समय निकालना होगा चाहे सामने कैसी भी बाधा आए परन्तु मुझे वह कार्य अनिवार्य रूप से करना होगा।

11.12 आदत की विशेषताएँ

1. आदत सम्बन्धी कार्यों में समानता पाई जाती है।

2. यदि किसी कार्य एवं किसी व्यवहार की आदत बन जाती है तो वे कार्य शीघ्र सम्पन्न होते हैं।

3. यदि मनुष्य अपने जीवन में किसी कार्य को नियमित रूप से करने की आदत बना लेता है तो ऐसे कार्यों को करने के लिए ध्यान की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

4. जब कोई कार्य रूचिपूर्ण होता है तो ऐसे कार्यों को पूर्ण करने में सुख एवं आनन्द का अनुभव प्राप्त होता है और यही सुख एवं आनन्द धीरे–धीरे आदत में परिवर्तित हो जाती है।

5. आदत जन्य कार्यों मे प्रतिपन्नता पाई जाती है अर्थात् ऐसा कार्य जो बार–बार अभ्यास के माध्यम से सीखी जाती है उस पर प्रतिक्रिया शीघ्र प्राप्त होती है।

6. कई कार्य ऐसे होते है जो बहुत सरल होते है उन्हें करने की आदत शीघ्र पड़ जाती है। परन्तु जब किसी कठिन कार्य को भी बार–बार किया जाता है तो वे आदत में बदलकर सरलता से हल किए जा सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

10. आदत की दो विषेशताओं को लिखिए।

____

____

11.13 आदत के प्रकार

व्यक्ति के व्यवहार एवं आचरण के आधार पर अदत अच्छी आदत एवं बुरी आदत में बाँटा जा सकता है। वैलनटाइन में आदतों को निम्नानुसार वर्गीकृत किया है।

1. **मशीनी आदत** – इस प्रकार की आदतों का सम्बन्ध व्यक्ति के शरीर के विभिन्न प्रकार की क्रियाओं से होता है। उदाहरण के लिए सुई में धागा डालना, टाई बाँधना एवं बेल्ट लगाना।

2. **इच्छा सम्बन्धी आदतें** – इस प्रकार की आदत का सम्बन्ध व्यक्ति की इच्छा से जुड़ी होती है वह अच्छी भी हो सकती है और बुरी भी। जैसे – शराब पीना, धुम्र पान करना, गाना–गाना, पिक्चर देखना एवं घुमना इत्यादि।

3. **तन्त्रिका सम्बन्धी आदतें**– इस प्रकार की आदतें मनुष्य के मस्तिष्क से सम्बन्धित होती है। जैसे अनावश्यक बाल को खुजलाना नाखुन को दातों से कुतरना, अगूंठा चूसना, मिट्टी खाना इत्यादि।

4. **नैतिक आदतें**– इस प्रकार की आदतों का निर्माण नैतिक शिक्षा के द्वारा बालकों में विकसित होता है– जैसे सत्य बोलना, सदाचरण करना, दया करना, चोरी न करना, प्यार करना, सहानुभूति पूर्वक आचरण करना।

5. **भावना सम्बन्धी आदतें** – इस प्रकार के आदतों का विकास व्यक्ति के भावनाओं पर निर्भर करती है। व्यक्ति के मन–मस्तिष्क में जिस प्रकार की भावना विकसित होगी उसके अन्दर उस प्रकार के आदतों का निर्माण होगा। जैसे – घृणा, प्रेम, सहानुभूति आदि।

6. **विचारों के आधार पर आदतों का निर्माण होना** – इस प्रकार की आदतों का निर्माण व्यक्तियों के ज्ञान एवं इच्छाओं के द्वारा प्रभावित होता है जैसे– समय से किसी कार्य को पूर्ण करने के लिए तत्पर होना, तर्क–वितर्क के द्वारा किसी निर्णय पर पहुँचना।

7. **भाषा सम्बन्धी आदतें** – इस प्रकार की आदत का निर्माण व्यक्ति जिस भाषा को बोलता है उसके उच्चारण पर निर्भर करता है। यदि शब्दों का उच्चारण

गलत किया जायेगा तो गलत बोलने की आदत बनेगी एवं यदि उसका उच्चारण सेही किया जायेगा तो शुद्व उच्चारण करने की आदत बालक के अन्दर विकसित होगी।

11.14 बुरी आदतों को समाप्त करने के उपाय

प्रायः दैनिक जीवन में ऐसा सुनाई या दिखाई पड़ता है कि अमुख व्यक्ति ने बहुत अच्छा कार्य किया जबकि ठीक उसके विपरीत यह भी संज्ञान में आता है कि कुछ व्यक्ति गलत आदतों में संलिप्त है जिससे वे अपना, समाज का एवं राष्ट्र का नुकसान कर रहे हैं। इस गलत प्रवृत्ति व आदत को रोकने के लिए निम्नलिखित बातों के माध्यम से उसे कम या समाप्त किया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में स्टर्ट एवं ओकडन का मत है – ''शिक्षा का कार्य न केवल आदतों का निर्माण करना है वरन् उसको जोड़ना भी है।

"The task of the teacher is not only to form habits, but also to break them."

-Sturtand oakden.

1. दृढ़ इच्छाशक्तिः– यदि व्यक्ति किसी गलत आदत से ग्रसित है और वह उससे मुक्ति चाहता है तब ऐसी स्थिति में उसे समाप्त करने के दृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा संकल्प लेना होगा। प्रबल इच्छा शक्ति के द्वारा गलत आदत को समाप्त करना होगा। ऐसा दृढ़ संकल्प उसे अपने आप के अलावा सार्वजनिक रूप से भी अभिव्यक्त करना होगा।

2. आत्म बोध :– यदि किसी बालक को किसी बुरी आदत का परित्याग करना है तो उसे अपने दैनिक जीवन में प्रतिदिन उसका आत्मबोध होना चाहिए कि मेरी यह आदत गलत है और लोगों को उससे कश्ट मिलता है। इस प्रक्रिया के द्वारा भी वह गलत आदत को छोड़ सकता है।

3. अभ्यास के द्वारा :– यदि बालकों के अन्दर गलत अभ्यास के द्वारा कोई गलत आदत पड़ गई है तो उसका अन्त सही कार्य के अभ्यास से किया जा सकता है। यदि किसी बालक का उच्चारण गलत है तो वह उसे ठीक उच्चारण के बार–बार अभ्यास से पूर्व के सीखे गये गलत उच्चारण को समाप्त कर सकता है।

4. पूर्व की अपनी आदत पर ध्यान देने से :– यदि बालक के अन्दर पूर्व में कोई गलत आदत विकसित हो चुकी हो तो उसे समाप्त करने के लिए अपनी ही आदत पर तब तक ध्यान देना होगा जब तक कि पूर्व की गलत प्रवृत्ति का अन्त न हो जाय ऐसा करने से भी गलत आदत को तोड़ा जा सकता है।

5. आलोचना के द्वारा :– बालक के अन्दर कुछ आदतें बचपन से ही पड़ जाती है जिसे अप्रत्यक्ष आलोचना करके तोड़ी जा सकती है। जैसे– बालकों का गाली देना, बालकों का मिट्टी खाना, बालों को नोचना, नाखून को दातों से कुतरना इस प्रकार की आदतें सांवेगिक अंसतुलन के कारण बालकों में विकसित हो जाती हैं। बालकों के अन्दर

जब इस प्रकार की आदत पड़ जाती है तब माता–पिता व शिक्षकों को चाहिए कि वे अप्रत्यक्ष उदाहरण के माध्यम से इसे समाप्त करने हेतु बालकों को अभिप्रेरित करें।

6. समूह परिवर्तन के द्वारा :– बाल्यवस्था में बालक जब समूह में खेलने के लिए घर से बाहर कदम रखता है तो समूह में कई प्रकृति के बालक होते हैं। बालक बुरे संगत के कारण कभी–कभी गलत आदतों को धारण कर लेता है। उदाहरण के लिए गाली देना, झूठ बालेना, चोरी करना, कक्षा से पलायन, मार–पीट करना इत्यादि। इस प्रकार की गलत आदतों को माता–पिता एवं अध्यापक बालकों के ऊपर नजर रखकर तथा गलत संगत में जाने से रोककर समाप्त कर सकते हैं।

7. नवीन आदत के विकास से :– बालकों के अन्दर व्याप्त गलत आदतों को समाप्त कर उसके स्थान पर अच्छी आदतों के सृजन के माध्यम से गलत आदतों को समाप्त किया जा सकता है।

भाटिया के शब्दों में :– ''अच्छी आदतों के करने से बुरी आदतें विकसित नहीं हो पाती ओर गलत आदतें स्वतः समाप्त हो जाती हैं।''

8. दण्ड के द्वारा :– अध्यापक एवं माता–पिता बालकों के अन्दर विकसित गलत आदतों को दण्ड के द्वारा भी समाप्त कर सकते हैं परन्तु दण्ड देते समय इस बात का ध्यान रखा जाय कि दण्ड उसी समय दिया जाय जब उसकी आवश्यकता प्रतीत हो रही हो, अत्यधिक समय व्यतित हो जाने के पश्चात दिए जाने वाला दण्ड बालकों के मस्तिष्क पर विपरित प्रभाव डाल सकते हैं।

9. पुरस्कार :– दण्ड की अपेक्षा बालक के अन्दर व्याप्त गलत आदतों को समाप्त करने के लिए पुरस्कार अधिक प्रभावी हो सकते हैं। बालकों को गलत आदत छोड़ने पर उनसे कहना चाहिए कि यदि आप ने ऐसा किया तो आपको ये पुरस्कार दिया जायेगा। बालक पुरस्कार प्राप्त करने की अभिलाषा में गलत आदतों को छोड़ देते हैं। इस सम्बन्ध में बोरिंग, लैंगफील्ड व वेल्ड का मत है –

''पुरस्कार, दण्ड से उत्तम है। प्रशंसा निन्दा से उत्तम है।''

बोध प्रश्न

टिप्पणी नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

11. बुरी आदतें समाप्त करने के दो उपायों के बारे में लिखिए।

____

____

____

11.15 अधिगम एवं शिक्षा में आदतों का महत्व

आदत का सीखने और शिक्षा में क्या महत्व है इसके सम्बन्ध में रेबर्न महोदय

का मत है – ''सीखना आदतों के निर्माण की महत्वपूर्ण क्रिया है।''

1. बालकों के सर्वांगीण विकास में अच्छी आदतें महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।
2. अच्छी आदतों के द्वारा बालक का शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक विकास अच्छी प्रकार से होता है।
3. अच्छी आदतों के द्वारा बालकों के अन्दर उत्तम चारित्रिक गुणों को विकसित करने में मदद मिलती है। चारित्रिक विकास से बालक को एक योग्य नागरिक बनने में मदद मिलती है। अन्त में किसी ने ठीक कहा है –''चरित्र आदतों का पुंज है।''
4. अच्छी आदतों के द्वारा ही बालक के व्यक्तित्व का सर्वोत्तम विकास होता है।
5. बालकों के स्वभाव को समाजोपयोगी बनाने में अच्छी आदतें प्रभावशाली कारक का कार्य करती है।
6. अच्छी आदतों के निर्माण से बालक उचित एवं अनुचित में अन्तर करते हुए अपने को एक सीमा में बाँधकर अनैतिक, समाजविरोधी, एवं धर्म के विपरित कार्य करने से अपने को दूर रखते हैं।
7. बालक के अन्दर जब अच्छी प्रवृत्ति का समावेश हो जाता है तब बालक किसी कार्य को बोझ स्वरूप नहीं लेता और उसके शरीर में थकान का अनुभव भी नहीं होता है।
8. अभ्यास के माध्यम से बालक जब किसी विषय वस्तु को सीख लेता है तब वह आदत के रूप में परिवर्तित हो जाती है और ऐसी प्रक्रिया के द्वारा वह उसे स्मृति में बनाए रखने के योग्य हो जाता है।
9. जब बालक के अन्दर किसी कार्य को जैसे पढ़ने एवं लिखने आदि की आदत पड़ जाती है तो वह किसी कार्य को सरलता, शीघ्रता एंव कुशलता के साथ पूर्ण कर लेता है।
10. आदत पड़ जाने के कारण व्यक्ति किसी भी कठिन से कठिन एंव दुरूह कार्य को भी आसानी से करने की क्षमता को अपने अन्दर विकसति कर लेता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

12. आदतों के निर्माण के किसी एक पक्ष को लिखिए।

11.16 अनुशासन

अनुशासन को अंग्रेजी भाषा में Discipline कहते हैं। यह Disciple से बना है जिसका अर्थ शिष्य या चेला होता है। अनुशासन शब्द के स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों के बीच बहुत मतभेद रहा है। विभिन्न शिक्षाविदों ने अनुशासन के अर्थ को अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है। अनुशासन की परिभाषा विभिन्न अर्थों में विभिन्न विद्वानों के द्वारा अलग–अलग व्यक्त की गई जो निम्नवत् है –

किण्डले के अनुसार – ''अनुशासन स्पष्टतः मनः शक्तियों का विकास है– तर्क शक्ति का विकास तथा ज्ञान की उपलब्धि है।''

रैण्डी के अनुसार – ''अनुशासन का अर्थ उचित तथा अनुचित की चेतना को विकसित करना अनुशासन है।''

उपरोक्त दोनों परिभाषाओं से अनुशासन का अर्थ सुस्पष्ट नहीं होता। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अनुशासन का अर्थ है आत्म–नियंत्रण तथा आत्म निर्देश का विकास से सम्बन्धित है।

स्टिवेस के अनुसार –''अनुशासन का तात्पर्य निपुण आत्म निर्देश के विकास से है।''

बोध प्रश्न

टिप्पणी नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

13. स्टिवेस के अनुसार अनुशासन को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

अनुशासन के प्रमुख उद्देश्य और लक्ष्य निम्नलिखित हैं–

स्व नियंत्रण की क्षमता का विकास – अनुशासन का प्रमुख उद्देश्य अपने आप पर नियंत्रण पाने की क्षमता से है। आत्म नियंत्रण के द्वारा बालकों में आत्म संयम जैसे गुणों का विकास होता है। आत्म नियंत्रण के द्वारा बालक आत्म अनुशासित होता है और उसके अन्दर शीलगुणों का विकास होता है।

(ii) बालकों की व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं का समाधान :– शिक्षक कक्षा में बालकों की प्रकृति व स्तर को समझकर विषय वस्तु को सरल, सुगम्य एवं उनकी रुचि के अनुसार प्रस्तुत करता है। ऐसा करने से बालक कक्षा में किसी शालीनता का व्यवहार प्रदर्शित करते हुए अनुशासित होकर शिक्षा ग्रहण करते हैं।

(iii) उदारता की प्रवृत्ति का विकास :– बालकों के प्रति माता–पिता, अध्यापक व अधिकारियों का उदार प्रवृत्ति भी उन्हें अनुशासित रहने हेतु अभिप्रेरित करता है।

(iv) अच्छे आचरण का विकास करना :– अनुशासन के द्वारा ही बालकों के अन्दर अच्छे आचरण एवं सद्‌गुणों का विकास किया जा सकता है। ऐसे आचरण के विकसित होने से वे कक्षा में व बाहर अनुशासित व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं।

(v) बालकों में समायोजन की प्रवृत्ति का विकास :–घर एवं स्कूल में जो अनुशासन बालकों को दिये जाते हैं उसका एक मात्र उद्देश्य बालकों के व्यहार में सकारात्मक प्रवृत्ति का विकास करना है जिससे वे समय के साथ अपने को समायोजित कर सकें।

11.17 अनुशासन को प्रभावित करने वाले कारक

अनुशासन को प्रभावित करने वाले कारकों को दो वर्गों में विभक्त किया गया है–

i. औपचारिक कारक

ii. अनौपचारिक कारक

(क) औपचारिक कारक –

औपचारिक कारक से आशय उन कारकों से है जो कक्षा में छात्रों के अनुशासन को प्रभावित करते हैं। अनुशासन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक निम्नवत् हैं –

(i) पाठ्‌यक्रम

(ii) शिक्षण विधि

(iii) शिक्षक के गुण

(iv) पुरस्कार

(v) दण्ड

(vi) विद्यालय का भौतिक वातावरण

(vii) पर्यवेक्षण

(viii) छात्रों की संख्या

(ix) पाठ्‌य पुस्तक

उपरोक्त सभी कारक बालकों के अनुशासन को प्रभावित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(ख) अनौपचारिक कारक

अनौपचारिक कारक से आशय उन कारकों से है जिसका प्रभाव शिक्षा तथा शिक्षालय पर अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। इस प्रकार के कारक स्कूल के अनुशासन पर परोक्ष रूप से प्रभाव डालते हैं। ये कारक निम्नवत् हैं –

(i) घर का वातावरण

(ii) परिवार की सामाजिक–आर्थिक स्थिति

(iii) पास–पड़ोस

(iv) खेल के साथी

(v) रीति रिवाज

(vi) कानून

बोध प्रश्न

टिप्पणी: नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

14. अनुशासन को प्रभावित करने वाले अनौपचारिक कारकों के नाम लिखिए।

____

____

____

11.19 अनुशासन को बनाए रखने के उपाय

अनुशासनहीनता की समस्या आजकल प्रायः विद्यालयों में देखने को मिलती है। इसे रोकने के लिए शिक्षकों के साथ–साथ माता–पिता को भी घर में अपने बालक को अनुशासित रखने के लिए प्रयास करना होगा। अनुशासनहीनता को रोकने के लिए निम्न उपाय किए जाने आवश्यक है–

(i) ज्ञानवान शिक्षक की नियुक्ति :– यदि योग्य शिक्षकों की नियुक्ति विद्यालय स्तर पर की जायेगी तो वे कक्षा में हर वक्त शिक्षार्थियों को पठन–पाठन में व्यस्त रखेंगे और शिक्षार्थी को शरारत करने के लिए समय ही नहीं बचेगा। इस प्रकार योग्य शिक्षकों की नियुक्ति करने से भी अनुशासनहीनता को रोका जा सकता है।

(ii) स्तरीय पाठ्यक्रम :– छात्रों के लिए निर्मित पाठ्यक्रम यदि स्तरीय होगा, तथा पाठ्यक्रम शिक्षार्थियों के रूचि, अभिरूचि एवं छात्रों का अधिकांश समय लिखने–पढ़ने व्यतीत हो जायेगा और गलत व्यवहार करने के लिए उनके पास समय ही नहीं बचेगा। पढ़ने–लिखने में अभिरूचि अधिक होने से अनुशासनहीन व्यवहार करने के लिए उनके पास समय ही नहीं बचेगा।

(iii) उपयोगी शिक्षण विधि :– अध्यापक कक्षा में उपयोगी शिक्षण विधि का प्रयोग कर शिक्षार्थियों की अभिरूचि को सीखने–सीखाने की प्रक्रिया में संलिप्त कर सकता है। अध्यापक को निष्क्रिय शिक्षण विधि का प्रयोग शिक्षण कार्य हेतु नहीं करना चाहिए। अध्यापक को विभिन्न प्रकार के रोचक उदाहरणों एवं चलचित्र इत्यादि

विधि के माध्यम से शिक्षण कार्य करना चाहिए। जिससे छात्र एकाग्रचित्त होकर प्रकरण को समझ सके। रोचकता के अभाव में अनुशासनहीनता की सम्भावनाएँ प्रबल हो जाती है। अतः शिक्षण ऐसा होना चाहिए जिससे शिक्षार्थियों का ध्यान बराबर शिक्षण को समझने में ही केन्द्रित हो।

(iv) विद्यालय का भौतिक वातावरण :– कक्षा का वातावरण आकर्षक होना चाहिए। छात्रों को बैठने की आदर्श व्यवस्था होनी चाहिए, कक्षा में पर्याप्त मात्रा में हवा एवं प्रकाश की व्यवस्था होनी चाहिए। ब्लैक बोर्ड साफ होना चाहिए उस पर लिखे गये शब्द पठनीय एवं सुन्दर होने चाहिए। इस प्रकार के वातावरण में छात्र अच्छे ढंग से प्रभावित होकर अधिगम करेंगे। इस प्रकार के वातावरण में शिक्षण होने से अनुशासनहीनता की सम्भावनाएँ नहीं के बराबर हो जाती हैं।

(v) पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन :– अनुशासनहीनता को रोकने के लिए पढ़ने के साथ–साथ विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं जैसे खेल–कूद, वाद–विवाद, नृत्य, नाटक, संगीत, कला प्रतियोगिता आदि का आयोजन भी समय–समय पर सम्पन्न कराए जाने चाहिए। इस प्रकार की गतिविधियों में भाग लेने से छात्रों में आत्म–सम्मान एवं आत्मविश्वास की वृद्धि होती है और उनके अन्दर आत्म नियंत्रण एवं सहयोग की भावना विकसित होती है।

(vi) बराबर निगरानी :– अध्यापक को कक्षा–कक्ष में अनुशासन को बनाए रखने के लिए उचित निगरानी करनी चाहिए। अध्यापक की नजर कक्षा के सभी छात्रों पर होनी चाहिए। ऐसा करने से वे सभी छात्रों के व्यवहार को समझ सकेंगे व उचित परामर्श के द्वारा उनका उचित मार्गदर्शन कर सकेंगे।

(vii) पुरस्कार के द्वारा :– प्रायः ऐसा देखा गया है कि छोटी कक्षा के बालकों को खिलौने, पेन्सिल, रबर, स्केल इत्यादि जैसे पुरस्कारों को देकर प्रोत्साहित किया जा सकता है और वे इससे अनुशासित होकर पढ़ने की ओर उत्सुक होते हैं जब कि ठीक इसके विपरित उच्च कक्षा के छात्र इस प्रकार के पुरस्कार से प्रभावित नहीं होते वरन प्रशंसा जैसे – अभिप्रेरक से ज्यादा प्रभावी होकर स्वयं अनुशासित होते हैं तथा अपने सहपाठियों को भी अनुशासित होने के लिए सलाह देते हैं।

(viii) स्तरीय पाठ्य–पुस्तक की व्यवस्था द्वारा :– विद्यालय में छात्रों की रूचि के अनुसार पढ़ने के लिए पुस्तकों की पर्याप्त मात्रा में व्यवस्था होनी चाहिए। पाठ्यपुस्तकें रोचक, आकर्षक, सरल एवं सुबोध भाषा में मुद्रित होनी चाहिए। ऐसी पुस्तकों की पर्याप्तता से छात्र शिक्षक की अनुपस्थिति में स्वयं रूचि दिखाते हुए पढ़ने के लिए अभिप्रेरित होते हैं।

(ix) कक्षा में छात्रों की बैठने की व्यवस्था :– कक्षा में शरारती तथा नटखट छात्रों को पहली या दूसरी कतार में बैठाना चाहिए। अगली पंक्ति में बैठने से अध्यापक की नजर बराबर ऐसे शिक्षार्थियों पर पड़ती है और छात्र एक मनोवैज्ञानिक दबाव के कारण अनुशासनहीनता नहीं कर पाते। अतः बैठने की व्यवस्था के आधार पर भी बालकों को अनुशासित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी: दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए तथा इकाई के अन्त में दिए गये उत्तर से उसका मिलान कर स्व–मूल्यांकन करें।

15. अनुशासन को बनाए रखने के लिए किसी एक उपाय को लिखिए।

____

____

____

11.19 सारांश

मनुष्य के संतुलित जीवन के लिए स्मृति तथा विस्मृति दोनों का ही महत्त्व है। पूर्व में अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान को आवश्यकतानुसार अवचेतन मन से चेतन मन में लाने को स्मृति कहते हैं। अनेक विद्वानों ने इसकी प्रकृति के अनुसार इसकी अलग–अलग परिभाषाएँ दी हैं। स्मृति की अधिगम, धारण, पुनःस्मरण तथा अभिज्ञान आदि कई अवस्थाएँ होती हैं तथा अच्छी स्मृति के लक्षण प्रकट होते हैं। इसके साथ ही कई ऐसे कारण या तत्त्व भी होते हैं जो स्मरण–क्षमता को प्रभावित करते हैं। विस्मृति भी स्मृति की तरह ही आवश्यक है। स्वास्थ्य की दृष्टि से एवं अप्रिय एवं निरर्थक बातों को भूलना व्यक्ति के जीवन की आवश्यकता है। विस्मृति इसमें सहायक होती है। अनेक ऐसी परिस्थितियाँ हैं जो इन दोनों को नकारात्मक या सकारात्मक बनाती है। बालक के सर्वांगिण विकास के लिए उसके अन्दर अच्छी आदतों का समावेश होना चाहिए। अच्छी आदतों का समावेश अभ्यास एवं नियमित जीवनचर्या के कारण ही सम्भव है। बालकों के अन्दर विभिन्न आदतों को विकसित करके उनके अन्दर अच्छी आदतों का विकास किया जा सकता है तथा उनके अन्दर व्याप्त गलत आदतों को समाप्त करने के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति, आत्मबोध, निरन्तर अभ्यास, आलोचनात्मक टिप्पणी, पुरस्कार दण्ड एवं नवीन आदतों के सृजन के द्वारा समाप्त किया जा सकता है। अनुशासन के द्वारा ही बालकों के चरित्र का निर्माण किया जा सकता है तथा उन्हें योग्य व सुसंस्कारीक नागरिक बनाया जा सकता है। बालकों के उचित विकास एवं बालक की आदत खराब न हो जाय इसके लिए परिवार, विद्यालय, पास–पड़ोस एवं शुभचिन्तकों

को चाहिए कि वे बालकों को हमेशा उचित व अनुचित का बोध कराते रहें। बालक के अन्दर सदाचार, देशप्रेम, सहिष्णुता, दया, सभ्यता एवं संस्कृति के माध्यम से सद्‌गुणों को बालक के अन्दर विकसित किया जा सकता है।

11.20 अभ्यास कार्य

(1) स्मृति किसे कहते हैं? उसकी अवस्थाओं का वर्णन कीजिए।

(2) स्मृति के विभिन्न प्रकारों की विवेचना कीजिए।

(3) अच्छे स्मरण की विधियों की व्याख्या कीजिए।

(4) अच्छी स्मृति के लक्षणों को स्पष्ट लिखिए।

(5) विस्मृति का सविस्तार वर्णन कीजिए।

(6) आदत के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।

(7) अच्छी आदत की विशेषताओं और बुरी आदतों को कैसे दूर किया जा सकता है लिखिए।

(8) अनुशासन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसके उद्देश्य एवं लक्ष्य की विवेचना कीजिए।

(9) अनुशासनहीनता को रोकने के उपायों का वर्णन कीजिए।

(10) अनुशासन को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।

11.21 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Agrawal, J.C. (1995) : Essentials of Educational Psychology, Vikas Publishing House Private Limited, New Delhi.

Bhatia, H.R. (1977) : A Text book of Educational Psychology, Macmillan, New Delhi.

Chauhan, S.S. (1988) : Advanced Educational Psychology, Vikas Publication, New Delhi.

सिंह, आर.एन. (2001) : आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

सिंह, अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी.बी. प्रिन्टर्स, पटना।

सुलेमान मुहम्मद (2007) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, मोतीलाल, बनारसी दास, दिल्ली – 110007

11.22 बोध प्रश्नों के उत्तर

1- स्मृति एक जटिल एवं मानसिक क्रिया है। भूतकाल में प्राप्त अनुभवों को वर्तमान

में लाना स्मृति है।

2- वुडवर्थ – ''पूर्व समय में सीखी हुई बातों को याद करना ही स्मृति है।''

3- स्मृति की मुख्य रूप से निम्नलिखित चार अवस्थाएँ हैं –

(i) अधिगम या सीखना

(ii) धारण या धारणा

(iii) पुनः स्मरण या प्रत्यास्मरण तथा

(iv) अभिज्ञान या पहचानना

4- पूर्व अनुभवों के आधार पर जानना ही, अभिज्ञान है।

5- स्मृति कई प्रकार की होती है। प्रत्येक व्यक्ति की स्मृति या स्मरण क्षमता भिन्न–भिन्न होती है। कुछ लोग एक बार में ही याद की गई बातों को लम्बे समय तक याद रखते हैं तो कुछ व्यक्ति बार–बार याद करने पर भी बातों को बार–बार भूलते हैं। व्यक्तियों में स्मृति की क्षमता एवं योग्यता के आधार पर स्मृति के प्रकारों को दो प्रकार से विभक्त किया जा सकता है–

स्मृति के प्रकार

वास्तविक स्मृति **आदतजन्य स्मृति**

वास्तविक स्मृति किसी संस्मरणों पर आश्रित नहीं होती है। बल्कि यह भूतकाल में किए गये अनुभवों पर आधारित होती है। जबकि आदतजन्य स्मृति कृत्रिम प्रयासों पर निर्भर करती है।

6- स्मरण के विकास की या स्मरण क्षमता को विकसित करने की निम्नलिखित विधियाँ हैं –

i) एकाग्रचित्तता,

ii) उद्देश्य का स्पष्ट होना,

iii) अभिव्यक्ति,

iv) सूचना को कूटबद्ध करना तथा संग्रह करना,

v) आवृत्ति,

vi) अविराम तथा विराम विधि

vii) पूर्ण या आंशिक विधि

7- स्मृति को प्रभावित करने वाले तत्त्व निम्नलिखित हैं –

(i) मानसिक स्थिति

(ii) प्रेरणा एवं रूचि

(iii) सार्थक विषय–वस्तु

(iv) दोहराना या अभ्यास

(v) स्वास्थ्य

(vi) अधिगम की विधियाँ

(vii) परीक्षण

(viii) पाठ्य–सामग्री

(ix) स्मरण की इच्छा

8- विस्मृति के सामान्य कारण निम्नलिखित हैं –

(i) निरर्थक सामग्री

(ii) अधिगम की मात्रा तथा विधि

(iii) मानसिक आघात तथा रोग

(iv) मादक द्रव्य

(v) समय का प्रभाव

9- गेट्स के अनुसार – ''आदत उस व्यवहार को दिए जाने वाला नाम है जो इतनी अधिक बार दोहराया जाता है कि यंत्रवत हो जाता है।''

10- (i) आदत सम्बन्धी कार्यों में समानता पाई जाती है।

(ii) यदि किसी कार्य एवं किसी व्यवहार की आदत बन जाती है तो वे कार्य शीघ्र सम्पन्न होते हैं।

11- (i) दृढ़ इच्छा शक्ति (ii) यदि किसी बालक को किसी बुरी आदत का परित्याग करना है तो उसे अपने दैनिक जीवन में प्रतिदिन उसका आत्मबोध होना चाहिए कि मेरी यह आदत गलत है और लोगों को उससे कष्ट मिलता है। इस प्रक्रिया के द्वारा भी वह गलत आदत को छोड़ सकता है।

12- यदि बालकों के अन्दर गलत अभ्यास के द्वारा कोई गलत आदत पड़ गई है तो उसका अन्त सही कार्य के अभ्यास से किया जा सकता है। यदि किसी बालक का उच्चारण गलत है तो वह उसे ठीक उच्चारण के बार–बार अभ्यास से पूर्व के सीखे गये गलत उच्चारण को समाप्त कर सकता है।

13- ''अनुशासन का तात्पर्य निपुण आत्म निर्देश के विकास से है।''

14- (i) घर का वातावरण

(ii) परिवार की सामाजिक, आर्थिक स्थिति

(iii) पास–पड़ोस

(iv) खेल के साथी

(v) रीति रिवाज

(vi) कानून

15- यदि योग्य शिक्षकों की नियुक्ति विद्यालय स्तर पर की जायेगी तो वे कक्षा में हर वक्त शिक्षार्थियों को पठन–पाठन में व्यस्त रखेंगे और शिक्षार्थी को शरारत करने के लिए समय ही नहीं बचेगा। इस प्रकार योग्य शिक्षकों की नियुक्ति करने से भी अनुशासनहीनता को रोका जा सकता है।

इकाई —12 तनाव, कुण्ठा और द्वन्द्व

इकाई की रूपरेखा —

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 तनाव

12.3.1 तनाव का अर्थ

12.3.2 तनाव की परिभाषाएँ

12.4 तनाव कम करने की विधियाँ

12.4.1 तनाव को कम करने की प्रत्यक्ष विधियाँ

12.4.2 तनाव को कम करने की अप्रत्यक्ष विधियाँ

12.5 कुण्ठा

12.5.1 कुण्ठा का अर्थ

12.5.2 कुण्ठा की परिभाषाएँ

12.6 कुण्ठा के प्रकार

12.7 कुण्ठा के कारण

12.8 कुण्ठा के कारण व्यक्ति का व्यवहार

12.9 द्वन्द्व

12.9.1 द्वन्द्व का अर्थ

12.9.2 द्वन्द्व की परिभाषाऍ

12.10 द्वन्द्व के प्रकार

12.11 द्वन्द्व के कारण

12.12 द्वन्द्व से बचने के उपाय

12.13 सारांश

12.14 अभ्यास कार्य

12.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.1 प्रस्तावना

शिशु इस संसार में जन्म लेता है और वातावरण के साथ समायोजन कर शैशवास्था से प्रौढ़ावस्था तक के सफर को तय करता है। व्यक्ति के जीवन में अच्छे एवं बुरे अनेकों प्रकार के उतार–चढ़ाव आते है। व्यक्ति हमेंशा सुख–सुविधा की आकांक्षा रखता है। व्यक्ति को सुखद जीवन जीने के लिए रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकता होती है। बालकों को प्रारम्भ से ही बड़े–बुजुर्गो के द्वारा बताया जाता है कि संतोष का फल मीठा होता है। व्यक्ति का मन एवं इच्छाएँ स्थिर नहीं होती हैं। आवश्यकता से अधिक प्राप्ति के लिए या तो व्यक्ति अपनी क्षमता से अधिक कार्य करके उसे प्राप्त करना चाहता है या फिर अनैतिक कार्यों के द्वारा उसे प्राप्त करना चाहता है। अनैतिक कार्य को करने से व्यक्ति के अन्दर तनाव एवं कुण्ठा की स्थिति उत्पन्न होती है। प्रस्तुत इकाई में तनाव व कुण्ठा के अर्थ, कारण एव उन्हें दूर करने के उपाय के सम्बन्ध में अध्ययन करेंगे। इसके साथ ही व्यक्ति के सामने कभी–कभी ऐसी परिस्थितियॉ आ जाती हैं कि वह अपने आप को विपरीत परिस्थिति में समायोजित नहीं कर पाता है। वह लोगों द्वारा आरोपित कार्यों एवं उनके विचारों का विरोध करता है जिससे द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस अध्याय में द्वन्द्व के अर्थ, परिभाषाओं एवं उससे से बचने के उपाय के सम्बन्ध में भी विस्तृत अध्ययन करेंगे।

12.2 उद्देश्य

आप इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त इस योग्य हो जायेंगे।

- तनाव, कुण्ठा एवं द्वन्द्व के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- तनाव को कम करने वाली विधियों के प्रयोग से परिचित हो सकेंगे।
- कुण्ठा के कारणों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- कुण्ठा के प्रकारों में विभेंद कर सकेंगे।
- द्वन्द्व से बचने के उपायों से भलि–भॉति अवगत हो सकेंगे।

12.3 तनाव

12.3.1 तनाव का अर्थ

तनाव मनुष्य की षारीरिक और मनोवैज्ञानिक दशा है। यदि मनुष्य को किसी कारणवश समस्या का सामना करना पड़ता है तो ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति के शरी र में उत्तेजना एवं असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। असन्तुलन की स्थिति के कारण व्यक्ति अत्याधिक क्रियाशील होकर तनाव को कम करने हेतु प्रयास करता है। उदाहरण के लिए जब मनुष्य को किसी वस्तु को क्रय करने के लिए रुपयों की

आवश्यकता होती है और उसका प्रबन्ध नहीं हो पाता तो ऐसी स्थिति में व्यक्ति के अन्दर तनाव उत्पन्न होता है। इस तनाव के कारण उसका संतुलन बिगड़ जाता है तथा वह किसी भी प्रकार से रुपयों का प्रबन्ध करने के लिए क्रियाशील हो जाता है। एक अवस्था ऐसी आती है कि व्यक्ति रुपयें का प्रबन्ध कर लेता है। रुपयों का प्रबन्ध हो जाने के परिणाम स्वरूप व्यक्ति का तनाव कम हो जाता है तथा उसमें असन्तुलित व्यवहार स्वतः संतुलित हो जाता है। मनुष्य में तनाव उत्पन्न होने के कई अन्य कारण भी हो सकते है। प्रमुख कारण निम्नवत है–

1. इच्छाओं की पूर्ति न होने के कारण।
2. लक्ष्य की प्राप्ति न होने के कारण।
3. तिरस्कार एवं अपमान के कारण।
4. शारीरिक व्याधियों के कारण।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी : (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।
(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. व्यक्ति में तनाव उत्पन्न होने के दो कारण लिखिए।

____

____

____

12.3.2 तनाव की परिभाषाएँ

तनाव की कुछ प्रमुख परिभाशाएँ निम्नवत् है–

1. गेट्स व अन्य के अनुसार – ''तनाव, असन्तुलन की दशा है, जो प्राणी को अपनी उत्तेजित दशा का अन्त करने के लिए कोई कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।''

"Tension is a state of disequilibrium, which disposes the organism to do something to remove the stimulating condition" **-Gates and others**

2. ड्रेवर के अनुसार – ''तनाव का अर्थ है सन्तुलन के नष्ट होने की सामान्य भावना और परिस्थिति के किसी अत्यधिक संकटपूर्ण कारक का सामना करने के लिए व्यवहार में परिवर्तन करने की तत्परता।''

"Tension means a general sense of disturbance of equilibrium and of readiness to alter behaviour to meet some almost distressing factor in the situation."

-Drever

बोध प्रश्न –

टिप्पणी : (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।
(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. तनाव की एक परिभाषा लिखिए।

____

____

____

12.4 तनाव कम करने की विधियॉ

व्यक्ति के तनाव को कम करने के लिए दो विधियों का प्रयोग किया जा सकता है–

1. तनाव कम करने की प्रत्यक्ष विधि
2. तनाव कम करने की अप्रत्यक्ष विधि

तनाव को कम करने के लिए उपयोग में लाई जाने वाली विधियाँ, व्यक्ति का अपने वातावरण के साथ सामन्जस्य बैठाने में उपयुक्त एवं अनुपयुक्त हो सकती है परन्तु इन विधियों का एक मात्र उद्देश्य तनाव को कम करने से है।

12.4.1 तनाव को कम करने की प्रत्यक्ष विधियॉ

इस विधि का प्रयोग समायोजन की समस्या के स्थायी समाधान के लिए किया जाता है। तनाव को कम करने की कुछ विधियों का वर्णन निम्नलिखित है–

(1) अवरोध को समाप्त करना

अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति अपने मार्ग में आने वाले अवरोध ा को जड़–मूल से समाप्त करता है। व्यक्ति इस विधि से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग में आने वाली समस्त बाधाओं को किसी भी प्रकार से पूर्णतया समाप्त कर लक्ष्य की प्राप्ति करता है।

उदाहरण के लिएः– ऐसे बालक जो शारीरिक रूप से अक्षम होते हैं वे भी कठिन कार्य को अभ्यास के माध्यम से पूर्ण करने में सफल होते हैं। ऐसा करने से उनके अन्दर जो हीनता के कारण तनाव उत्पन्न होता है उसे कुछ सीमा तक कम किया जा सकता है।

(2) विकल्प की तलाश

जब व्यक्ति अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर नहीं कर पाता है तो उस परिस्थिति में लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किसी दूसरे विकल्प की तलाश करता है। इस विधि के प्रयोग से भी तनाव को कम किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि अध्यापक किसी विषयवस्तु को व्याख्यान विधि से समझ नहीं पाता है तब ऐसी स्थिति में छात्रों को उसे समझाने के लिए दूसरी विधि से तब तक समझाना चाहिए जब तक उस विषय वस्तु का ज्ञान छात्रों को न हो जाय।

(3) लक्ष्य परिवर्तन के द्वारा

बालक या व्यक्ति जब पूर्व निर्धारित लक्ष्य को अवरोध के कारण पूर्ण नही कर पाते है तो ऐसी स्थिति में वे हार नहीं मानते बल्कि लक्ष्य को ही परिवर्तित करके अपने विकल्प आधारित लक्ष्य के द्वारा अपनी इच्छा की पूर्ति करते हुए तनाव को कम करते हैं।

उदाहरण के लिए :– बालक जब स्कूल जाने को तैयार होता है परन्तु उसकी बस किसी कारण से नही आती हैं तब स्कूल जाने के लिए किसी अन्य साधन की व्यवस्था करता है।

(4) अनुभव आधारित निर्णय के द्वारा

व्यक्ति जब किसी कार्य की योजना बनाता है तब कभी–कभी वांछनीय परन्तु दो विरोधी लक्ष्य एवं इच्छाएँ उसके समक्ष प्रकट हो जाती हैं। ऐसी परिस्थिति में वह विचार–विमर्श करता है और अपने जीवन में सीखे हुए अनुभवों के आधार पर दोनो परिस्थितियों अर्थात लक्ष्य में से किसी एक का चुनाव करता है।

उदाहरण के लिए :– कभी–कभी व्यक्ति के सामने दो विकल्प उपलब्ध होते हैं मगर उसे किसी एक विकल्प का चयन करना होता है जैसे– पिता ने अपने पुत्र को दस रुपये दिए पुत्र को आइसक्रीम खाने की इच्छा है और पढ़ने के लिए किताब की आवश्यकता है। उस परिस्थिति में बालक किसी एक कार्य को ही कर सकता है। ऐसे में बालक ने अपने भविष्य के निर्माण के लिए किताब को खरीदना उचित समझा और उसे अपने आइसक्रीम खाने की इच्छा का दमन करना पड़ा।

बोध प्रश्न –

टिप्पणीः (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. तनाव को कम करने की प्रत्यक्ष विधियों के नाम लिखिए।

____

____

____

12.4.2 तनाव को कम करने की अप्रत्यक्ष विधियॉ

अप्रत्यक्ष विधियों का प्रयोग दुख के कारण उत्पन्न में तनाव को कम करने के लिए किया जाता है। कुछ प्रमुख विधियॉ निम्नवत वर्णित है–

1. शोधन

जब व्यक्ति के अन्दर काम प्रवृत्ति की इच्छा जाग्रत होती है और व्यक्ति को संतुष्टि प्राप्त नहीं होती है तब उसके अन्दर तनाव उत्पन्न हो जाता है। ऐसी परिस्थिति से मुक्ति पाने के लिए व्यक्ति काम प्रवृत्ति की तरफ से ध्यान हटाने के लिए कई प्रकार के धार्मिक कार्यो एवं समाजपयोगी कार्यो में रुचि लेकर तनाव को कम करता है।

2. अलग करने की प्रवृत्ति से

इस विधि में व्यक्ति अपने को उस परिस्थिति या कार्य से अलग कर लेता है जो तनाव को उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी होती है। जब व्यक्ति को समाजपयोगी कार्य के लिए सम्मान नही मिलता है तब ऐसी परिस्थिति में वह अपने आप को उस कार्य से अलग कर लेता है।

3. पूर्व व्यवहार

जब एक परिवार में दो या दो से अधिक बच्चे होते हैं और किसी एक बच्चे को ऐसा अनुभव होता है कि उसके माता –पिता उसकों कम मानते है और छोटे भाई को अधिक मानते है। इस प्रकार की परिस्थिति में बालक, अपने माता–पिता का लाड–प्यार पाने के लिए बचपन की शरारतों या आदतों को उनके समक्ष प्रदर्शित करता है। इस प्रकार पूर्व के व्यवहार को प्रदर्शित करके बालक इस विधि के माध्यम से अपने तनाव को कम करता है।

4. दिवास्वप्न विधि के कारण

इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति अनेकों प्रकार की बातों को अपने जीवन में सोचता रहता है। तरह–तरह की नवीन परिकल्पनाओं के साथ कल्पनाओं की दुनियॉ में भ्रमण करता है। अतः हम कह सकते है कि व्यक्ति कल्पनाओं कि दुनिया में खोकर अपने पक्ष की बातो को सोचकर उसमें प्रसन्नचित रहकर अपने तनाव को कम करता है। उदाहरण के लिए ऐसे व्यक्ति जो अपने जीवन से परेशान हो चुके हैं काल्पनिक दुनिया में जाकर सुख का अनुभव प्राप्त करने का यत्न करते है। जैसे– यदि कोई बालक अपनी कक्षा में कम अंक पाता है तो वह दिवास्वप्न देखकर कि कक्षा में उसने सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया है। इस दिवास्वप्न के द्वारा बालक काल्पनिक दुनिया में विचरण कर खुश होकर तनाव को कम करता है।

5. आत्मीकरण

इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति समाज में रहने वाले किसी व्यक्ति के व्यवहार से प्रभावित होकर उसके व्यक्तित्व की बातों को स्वीकार कर लेता है। दूसरे शब्दों में हम कर सकते है कि व्यक्ति, शिक्षक, कलाकार, चित्रकार, राजनेता, महापुरूष तथा अभिनेता के समान व्यवहार करके उनके साथ आत्मीकरण कर लेने का अनुभव करता है। दूसरे के व्यवहार को अपने अन्दर समावेशित करने के कारण उसे सुख कि प्राप्ति होती है और इस प्रकार वह अपने तनाव को कम करता है।

6. दूसरो पर आश्रित होना

इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी जिम्मेदारियों को दूसरों को हस्तानान्तरित कर देता है तथा वह अपनी इच्छानुसार जीवन के पथ पर दूसरों के दिशा–निर्देशन, आदेश व उपदेश के अनुसार अपने जीवन को व्यतीत करता है।

7. इच्छाओं का दमन

इसके अन्तर्गत व्यक्ति अपनी अभिलाषाओं का दमन करके तनाव को कम करता है। व्यक्ति किसी बाग में सुन्दर फूलों को देखता है और उसे प्राप्त करना चाहता है। परन्तु नियमों के अन्तर्गत फूलों को तोड़ना व छूना मना है ऐसी स्थिति में वह अपनी इच्छाओं का दमन करता है।

8. आरोपण

इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी कमियों को छिपाने के लिए तरह – तरह के बहाने बनाता है तथा अपने द्वारा किए गये गलत कार्यों का दोष दूसरों के ऊपर आरोपित करता है। इस प्रकार की प्रवृत्ति के द्वारा भी व्यक्ति अपने तनाव को कम करता है। उदाहरण के लिए यदि कोई कुम्भकार मिट्टी का खिलौना बनाता है और उसमें कुछ कमी रह जाय तो वह उसे अपनी कमी न मानकर यह कहता है कि मिट्टी में कमी होने के कारण खिलौना अच्छा नहीं बना।

बोध प्रश्न –

टिप्पणीः (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. तनाव कम करने की किसी एक अप्रत्यक्ष विधि को लिखिए।

____

____

____

12.5 कुण्ठा

12.5.1 कुण्ठा का अर्थ

दबाव (Stress) कुण्ठा के कारण उत्पन्न होता है। कुण्ठा व्यक्ति में उस समय दिखाई पड़ती है जब व्यक्ति को किसी कार्य में सफलता नहीं मिलती है। अर्थात दूसरे शब्दों में हम कर सकते हैं जब व्यक्ति अपने द्वारा निर्धारित उद्देश्य एवं लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर पाते है तथा जब व्यक्ति द्वारा निश्चित किए गये लक्ष्य कि प्राप्ति में अनेकों प्रकार के गतिरोध उत्पन्न हो जाते है तब उन्हें असफलता प्राप्त होती है। असफलता के कारण व्यक्ति को दुःख मिलता है। व्यक्ति के अन्दर अप्रसन्नता एवं असुखद स्थिति के उत्पन्न होने के कारण ही कुण्ठा की भावना विकसित होती है।

12.5.2 कुण्ठा की परिभाषाएँ

कुण्ठा की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित है–

मार्क्स (1976) के अनुसार– ''लक्ष्य निर्देशित व्यवहार में अवरोध उत्पन्न होने से असुखद अनुभूति का होना ही कुण्ठा है।''

हिलगार्ड आदि के अनुसार– ''कुण्ठा को दो अर्थो में प्रयुक्त किया जाता है। इसकी पहली अवस्था वह है जिसमें लक्ष्य प्राप्ति में किसी वातावरणीय कारक द्वारा व्यवधान उत्पन्न किया जाता है और दूसरी अवस्था के कारण लक्ष्य प्राप्ति में बाधा उत्पन्न होने के कारण असुखद अनुभूति होती है''

बोध प्रश्न –

टिप्पणी: (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. कुण्ठा को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

12.6 कुण्ठा के प्रकार

कुण्ठा दो प्रकार के होते हैं जो निम्नवत है –

कुण्ठा

वाहय कुण्ठा | आन्तरिक कुण्ठा

(1) वाह्य कुण्ठाः– वाह्य कुण्ठा के अन्तर्गत व्यक्ति को वाह्य बाधाएँ लक्ष्य प्राप्त करने में अवरोध उत्पन्न करती है।

(2) आन्तरिक कुण्ठा :– आन्तरिक कुण्ठा के बाधक तत्व व्यक्ति के अन्दर ही निहित होते है जो व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्त करने में गतिरोध उत्पन्न करते है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणीः (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. कुण्ठा मुख्य रूप से कितने प्रकार के होते है उनके नाम लिखिए।

____

____

____

12.7 कुण्ठा के कारण

कुण्ठा उत्पन्न करने के कारणों को मुख्यतया तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है (i) भौतिक कारण (ii) सामाजिक कारण एवं (iii) निजी कारण।

इन तीन कारणो के अलावा भी कुछ अन्य कारणों को निम्नवत वर्णित किया जा रहा है–

(i) भौतिक कारण–

जब बालक किसी वस्तु को प्राप्त करने के लिए प्रयास करता है परन्तु भौतिक वातावरण के कारण वह उसे प्राप्त नहीं कर पाता तो उसके अन्दर निराशा का भाव उत्पन्न होता है। बाधाओं के कारण निराशा का उत्पन्न होना ही कुण्ठा का लक्षण है।

(ii) सामाजिक कारण

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य को समाज के द्वारा बनाए गये नियमों आदर्शो, सामाजिक प्रथाओं, रीति–रिवाजों के अनुसार कार्य करना होता है। कभी–कभी समाज के ये नियम मनुष्य को लक्ष्य तक पहुचने, इच्छाओं की पूर्ति होने तथा अपने ढ़ंग से जीवन जीने के उद्देश्य में बाधक तत्व के रूप में परिलक्षित होते हैं। इन बाधक तत्वों के द्वारा व्यक्ति की इच्छाओं का दमन होता है जिसके कारण उनके अन्दर कुण्ठा उत्पन्न हो जाती है।

(iii) निजी कारण

कभी–कभी व्यक्ति के निजी कारण भी व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्त करने में अवरोध उत्पन्न करते हैं। जैसे – कोई व्यक्ति तबला बजाना चाहता है परन्तु उसका

हाथ पोलियों ग्रस्त होता है। इस प्रकार की शारीरिक अक्षमता के कारण भी व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्त करने के लिए समस्या का सामना करना पड़ता है। शारीरिक अक्षमता के कारण बालक हीन भावना से ग्रसित हो जाता है और उनके अन्दर कुण्ठा उत्पन्न हो जाती है।

(iv) धनाभाव के कारण

कभी–कभी व्यक्ति अपनी आवश्यकतओं की पूर्ति धनाभाव के कारण नहीं कर पाता है। अर्थिक रूप से विपन्न व्यक्ति धन के अभाव के कारण जब अपने उद्देश्य या लक्ष्य को प्राप्त नही कर पाते हैं तब उनके अन्दर आत्मग्लानि का बोध होता है। कभी–कभी व्यक्ति रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था धनाभाव के कारण नहीं कर पाते हैं तब ऐसी स्थिति में उसके अन्दर कुण्ठा की भावना विकसित हो जाती है।

(v) नैतिक मूल्य

मनुष्य एक बुद्धिमान प्राणी है। व्यक्ति अपनी बुद्धि एवं विवेक के प्रयोग से कठिन से कठिन परिस्थितियों में विजय प्राप्त करता है। व्यक्ति के जीवन में अनेकों प्रकार के नैतिक मूल्यों का समावेश होता है जो उसे गलत कृत्य करने से रोकता है। परन्तु कभी–कभी ये नैतिक मूल्य व्यक्ति की इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति में अवरोध उत्पन्न करते है। जैसे किसी बालक के पिता जो कार्यालय में अल्प आय पर कार्य करते हैं और वह अपने पुत्र को अच्छे विद्यालय में प्रवेश दिलाना चाहता है परन्तु धनाभाव के कारण वह ऐसा नहीं कर पा रहे हैं। इस परिस्थिति में पिता अपने पुत्र को अच्छे विद्यालय में प्रवेश नही दिला पाने की दशा में गलत तरीके से धर्नाजन करना चाहता है परन्तु उसके नैतिक मूल्य उसे ऐसा करने से रोकते हैं। इस प्रकार की परिस्थिति व्यक्ति के अन्दर कुण्ठा को जन्म देती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी : (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. कुण्ठा उत्पन्न करने के कारणों को मुख्यतया कितने श्रेणियों मे विभक्त किया है उनके नाम भी लिखिए।

____

____

____

12.8 कुण्ठा के कारण व्यक्ति का व्यवहार

कुण्ठा की मनोदशा में व्यक्ति निम्नलिखित प्रकार के व्यवहार को प्रकट करते

हैं–

(i) आवश्यकताओं की पूर्ति न होने के कारण व्यक्ति आक्रमक व्यवहार को प्रदर्शित करने लगता है।

(ii) इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति न होने से व्यक्ति अपने जीवन से निराश होकर सघर्ष करने की क्षमता को छोड़कर आत्मसमर्पण कर देता है।

(iii) व्यक्ति जब अपने उद्देश्य एवं लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल हो जाता है तब वह हारकर कुछ समय के लिए अकेले रहना पसन्द करता है।

(iv) कुण्ठा से ग्रसित व्यक्ति जब अपनी इच्छाओं की पूर्ति नही कर पाता हैं तो वह स्वयं किसी रोग से ग्रसित होने की भावना का विचार करता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट नहीं है कि जिन व्यक्तियों में उपरोक्त वर्णित व्यवहार पाये जाते हो वह कुण्ठा से ग्रसित ही हो।

अन्त में निष्कर्ष स्वरूप कह सकते है कि कुण्ठा के कारण व्यक्ति का व्यवहार असंतुलित व असमायोजित हो सकता हैं। अतः व्यक्ति को चाहिए कि परिस्थितियों के अनुसार ही अपने लक्ष्य को निश्चित करें। जटिल अवरोधकों की अपेक्षा सरल अवरोध ाकों को दूर करना आसान होता है। जटिल अवरोधक व्यक्ति के व्यवहार को कुण्ठा के कारण असंतुलित कर देते है। कुण्ठा व्यक्ति के अन्दर विकसित न हो इसके लिए व्यक्ति को संयम से काम लेना चाहिए। व्यक्ति को अपनी दिनचर्या एवं आवश्यकताओं को अपनी स्थिति के अनुसार ही निश्चित करना चाहिए। व्यक्ति को अपने जीवन में संतुलन बनाए रखने के लिए आदर्श व्यवहार को प्रकट करना चाहिए ऐसा करने से कुण्ठा को कम किया जा सकता है।

12.9 द्वन्द्व

12.9.1 द्वन्द्व का अर्थ

द्वन्द्व की स्थिति में मनुष्य वातावरण के साथ अपना सामन्जरस्य स्थापित नहीं कर पाता है। व्यक्ति के अन्दर द्वन्द्व उस समय दिखाई देता है जब व्यक्ति के सामने आवश्यकताओं या इच्छाओं की पूर्ति के लिए एक से अधिक लक्ष्य उपलब्ध होते हैं। इस दशा में व्यक्ति को किसी एक लक्ष्य का चयन करना होता है। इस प्रकार के लक्ष्य के प्रति व्यक्ति की सोच सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार की हो सकती है।

12.9.2 द्वन्द्व की परिभाषाऍ

द्वन्द्व की प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत् वर्णित है–

मार्क्स (1976) के अनुसार– ''द्वन्द्व को एक ऐसी दशा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें परस्पर विरोधी प्रेरक सक्रिय होते हैं, जिसमे सभी की पूर्ति नहीं की जा सकती है।''

रच (1967) के अनुसार– ''जब कोई व्यक्ति दो में से कोई एक लक्ष्य चुनने को बाध्य होता है या किसी एक लक्ष्य के प्रति धनात्मक या नकारात्मक भाव रखता है, तो उसे द्वन्द्व कुण्ठा का सामना करना पड़ता है।''

बोध प्रश्न –

टिप्पणी : (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. द्वन्द्व की परिभाषा लिखिए।

____

____

____

12.10 द्वन्द्व के प्रकार

लक्ष्यों या उद्देश्यों के आधार पर द्वन्द्व को विभाजित किया जा सकता है। लक्ष्य धनात्मक या नकारात्मक दोनों प्रकार के हो सकते है।

(1). उपगमन–उपगमन द्वन्द्व

इस प्रकार के द्वन्द्व के अन्तर्गत व्यक्ति के समक्ष दो प्रकार के लक्ष्य उपलब्ध होते है। परन्तु व्यक्ति इन दोनों लक्ष्यों को ग्रहण नहीं कर सकते हैं। ये लक्ष्य धनात्मक प्रकार के होते हैं और इन्हें ग्रहणीय द्वन्द्व की संज्ञा दी जाती है। दोनों लक्ष्यों में से व्यक्ति को किसी एक प्रकार के लक्ष्य का चयन करना होता है। दोनो लक्ष्य धनात्मक प्रवृत्ति के होते हैं और उनमें आकर्षण पाया जाता है। इसके कारण व्यक्ति को लक्ष्य चयन में कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। जब कि ठीक इसके विपरीत जब दोनों लक्ष्यों का महत्व अधिक होता है तो इनमें से किसी एक को चयन करने में कठिनाई की अनुभूति होती है।

(2). परिवर्जन –परिवर्जन द्वन्द्व

जब व्यक्ति को दो निषेधात्मक लक्ष्यों में से किसी एक का चयन करना होता है ओर व्यक्ति दोनो लक्ष्यों में से किसी का भी चयन नहीं करना चाहता तो इस प्रकार के द्वन्द्व को परिवर्जन–परिवर्जन द्वन्द्व कहते है।

(3). उपगमन–परिवर्जन द्वन्द्व

इस प्रकार के द्वन्द्व के अन्तर्गत व्यक्ति को आकर्षण एवं विकर्षण दोनो प्रकार के व्यवहारों का बोध होता है। दो विरोधी प्रकृति के द्वन्द्व जब एक साथ सम्पर्क में आते है तो इस दशा में उपगमन–परिवर्जन द्वन्द्व का उद्‌भव होता है। उदाहरण– व्यक्ति

किसी भंयकर बीमारी से ग्रसित है और इसके लिए उसे डाक्टर से परामर्श लेने की आवश्यकता है परन्तु वह डॉक्टर के पास इसलिए नही जाता है कि कही डॉक्टर यह न कह दे कि इस रोग के निदान के लिए तत्काल आपरेशन की आवश्यकता है। न कह दे तत्काल आपरेशन कराना है। इस प्रकार का डर व्यक्ति के अन्दर उपगमन–परिवर्जन द्वन्द्व को जन्म देता है।

(4). दोहरा उपगमन – परवर्जन द्वन्द्व

इस प्रकार के द्वन्द्व का रूप अन्य 'द्वन्द्वों की अपेक्षा जटिल होता है। जब व्यक्ति को दो विकल्पों में से किसी एक को चयन करने की बाध्यता होती है और दोनों विकल्पों/लक्ष्यों में लाभ–हानियाँ परिलक्षित होती हैं तब ऐसी स्थिति में व्यक्ति को विकल्प चयन में जटिलता का अनुभव होता है जिसके कारण दोहरा उपगमन–परिवर्जन द्वन्द्व का प्रादुर्भाव होता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी : (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. द्वन्द्व के प्रकारों के नाम लिखिए।

____

____

____

12.11 द्वन्द्व के कारण

व्यक्ति के अन्दर द्वन्द्व व्यक्तिगत कारकों, पारिवारिक एवं सामाजिक रीति–रिवाजों, सामाजिक नियमों एवं बन्धनों के द्वारा उत्पन्न होती है। सामाजिक जीवन में व्यक्तियों के अन्दर उपगमन–परिवर्जन द्वन्द्व की बहुलता होती है। द्वन्द्व के प्रमुख कारण निम्न वत वर्णित है–

(1). आश्रित होने की प्रवृत्ति के कारण

बच्चा जब जन्म लेता है तो वह अपने विकास के लिए अपने मॉ पर आश्रित होता है तथा जैसे – जैसे वह बढ़ता जाता है लोगों की देख–रेख धीरे–धीरे कम होती जाती है। जब बालक बड़ा हो जाता है तब भी वह लोगो के सहयोग से कार्य को सम्पन्न करना चाहता है। जब कि बड़े होने पर लोग बालक से अपेक्षा करने लगते है कि वह अपने कार्य को स्वयं करके अपने लक्ष्य को प्राप्त करे।

(2). प्रतिस्पर्धा के कारण

आज के इस दौर में लगभग सभी क्षेत्रों में व्यक्तियों के अन्दर एक–दूसरे को पीछे छोड़ने की होड़ मची हुयी है। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने से आगे बढ़ते हुए देखना नहीं चाहता है। बालकों के अन्दर इस प्रकार की प्रवृत्ति का विकास दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। बालक एक दूसरे की सफलता को देखकर ईष्या करने लगते है। समाज का प्रबुद्ध वर्ग सभी नागरिकों से अपेक्षा करता है कि लोग एक दूसरे का सहयोग करे। आज कल माता–पिता, अध्यापक, समाज के प्रबुद्ध वर्ग के नागरिक बालक से यह अपेक्षा करते हैं कि उसके अन्दर सहयोग एवं प्रतिस्पर्धात्मक प्रवृत्ति का विकास एक साथ हो। इस प्रकार की स्थिति में से बालक के अन्दर द्वन्द्व की भावना का विकास होता है।

(3). सामाजिक मान्यताएँ

समाज में रहने के लिए प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आवश्यकताएँ होती हैं। व्यक्ति अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति चाहता है। यदि ऐसा हो जाता है तो उसे संतुष्टि की प्राप्ति होती है। प्राय ऐसा देखा गया है कि सामाजिक नियमों, बन्धनों और मान्यताओं के कारण कई ऐसे कार्य हैं जिन्हें व्यक्ति चाहकर भी नहीं कर पाता है। व्यक्ति समाज के द्वारा बनाऐ गये कठोर नियमों को तोड़ने की दशा में स्वयं को तनाव में पाता है। तनाव के कारण व्यक्ति के अन्दर द्वन्द्व का अनुभव प्रकट होता है। व्यक्ति उचित और अनुचित की दशा में कार्य को करना नही चाहता है। इस प्रकार की परिस्थितियाँ व्यक्तियों के अन्दर द्वन्द्व को उत्पन्न करती हैं।

12.12 द्वन्द्व से बचने के उपाय

द्वन्द्व से बचने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं–

1. व्यक्ति के सामने समस्यात्मक दशा को प्रदर्शित नहीं करना चाहिए।
2. बालकों के अन्दर व्याप्त तनाव को प्रशिक्षण के माध्यम से समाप्त किया जाना चाहिए।
3. बालकों के समक्ष नकारात्मक परिस्थितियों को उत्पन्न नहीं होने देना चाहिए।
4. बालकों के समक्ष उच्च विचार एवं और आदर्श प्रस्तुत नहीं करना चाहिए
5. बालकों में व्याप्त असंतोष को समाप्त करने के लिए एवं परिस्थिति के साथ समायोजन करने के लिए प्रशिक्षण इत्यादि की व्यवस्था होनी चाहिए।
6. परिवार एवं विद्यालय का वातावरण आकर्षक एवं शान्त होना चाहिए।
7. परिवार एवं विद्यालय का वातावरण तनावपूर्ण नहीं होना चाहिए क्योंकि तनावपूर्ण वातावरण द्वन्द्व को उत्पन्न करते है।

8. द्वन्द्व से बचने के लिए बालकों के अन्दर व्याप्त डर और चिन्ता को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी : (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. द्वन्द्व से बचने के दो उपायों को लिखिए

____

____

____

12.13 सारांश

मानव को अपने जीवन काल में ऐसी परिस्थितियों का सामान्य करना पड़ता है कि वे कभी–कभी अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं को पूर्ण नही कर पाते। मानव बहुत ही सहृदय प्राणी होता है उसे कभी–कभी छोटी बात से भी गहरा आघात लगता है। व्यक्ति जब किसी कार्य को करना चाहता है और उसे नही कर पाता है तो उसके अन्दर प्रतिबल उत्पन्न हो जाता है। इस प्रतिबल के कारण मनुष्य को तनाव, कुण्ठा व द्वन्द्व की स्थिति से गुजरना पड़ता है। इन परिस्थितियों के कारण मनुष्य का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित होता है। प्रस्तुत इकाई में तनाव, तनाव के कारण, तनाव को दूर करने की विधियों के साथ–साथ कुण्ठा एवं द्वन्द्व की परिभाषाएँ, इनमे उत्पन्न होने के कारण, तथा इन्हे कैसे कम या दूर किया जा सकता है इसका विवेचन किया गया है। निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते है की अच्छे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए इस प्रकार के व्याधियों को दूर करने के उपाय किए जाने चाहिए।

12.14 अभ्यास कार्य

1. तनाव के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसे परिभाषित कीजिए।
2. तनाव को कम करने की विधियों का सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. कुण्ठा के अर्थ के स्पष्ट करते हुए कुण्ठा के कारणों की विवेचना कीजिए।
4. द्वन्द्व के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उनकें प्रकारों का वर्णन कीजिए।
5. द्वन्द्व के कारण एवं उनसे बचने के उपायो को लिखिए।

12.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

सिंह आर0 एन0 (2001): आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा –2

12.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1- (i) इच्छाओं की पूर्ति न होने के कारण। (ii) लक्ष्य की प्राप्ति न होने के कारण।

2. **गेट्स व अन्य के अनुसार –** ''तनाव, असन्तुलन की दशा है, जो प्राणी को अपनी उत्तेजित दशा का अन्त करने के लिए कोई कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।''

3. **(अ) प्रत्यक्ष विधि**

(i) अवरोध को समाप्त करना (ii) विकल्प की तलाश

(iii) लक्ष्य परिवर्तन के द्वारा (iv) अनुभव आधारित निर्णय के द्वारा

4. **दूसरो पर अश्रित होना :** इस विधि के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी जिम्मेदारीयों को दूसरों को हस्तानान्तरित कर देता है तथा वह अपनी इच्छानुसार जीवन के पथ पर दूसरों के दिशा–निर्देशन, आदेश व उपदेश के अनुसार अपने जीवन को व्यतीत करता है।

5. **मार्क्स (1976) के अनुसार–** ''लक्ष्य निर्देशित व्यवहार में अवरोध उत्पन्न होने से असुखद अनुभूति का होना ही कुण्ठा है।''

6. कुण्ठा मुख्य रूप से दो प्रकार के होते है।

(i) बाह्रय कुण्ठा (ii) आन्तरिक कुण्ठा

7. कुण्ठा को मुख्यतया तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है।

(i) भौतिक कारण (ii) सामाजिक कारण (iii) नीजी कारण

8. **मार्क्स (1976) के अनुसार–** ''द्वन्द्व को एक ऐसी दशा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें परस्पर विरोधी प्रेरक सक्रिय होते है, जिसमे सभी की पूर्ति नही की जा सकती है।''

1. द्वन्द्व के प्रकार

(i) उपगमन –उपगमन द्वन्द्व

(ii) परिवर्जन – परिवर्जन द्वन्द्व

(iii) उपगमन – परिवर्जन द्वन्द्व

(iv) दोहरा उपगमन – परिवर्जन द्वन्द्व

2- (i) व्यक्ति के सामने समस्यात्मक दशा को प्रदर्शित नहीं करना चाहिए।

(ii) बालकों के अन्दर व्याप्त तनाव को प्रशिक्षण के माध्यम से समाप्त किया जाना चाहिए।

खण्ड : पाँच

विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

इकाई - 13 — 7
विशिष्ट बालक

इकाई - 14 — 33
मानसिक स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य विज्ञान और समायोजन

इकाई - 15 — 56
समूह मनोविज्ञान

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0 पी0 दुबे	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	पूर्व निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 अखिलेश चौबे	पूर्व आचार्य, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
प्रो0 विद्या अग्रवाल	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 प्रतिभा उपाध्याय	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डा0 गिरीश कुमार द्विवेदी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 के0एस0मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0उषा मिश्रा	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समन्वयक

डॉ0 रंजना श्रीवास्तव	प्रवक्ता, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

ISBN-UP-978-93-83328-00-0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक ; कुलसचिव, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज-2019

मुद्रक : **d0l h0fifVx ,.M ,ykbM oDl] ipoVh] eFkjk&281003-**

B.Ed.-01 : शैशवकाल और उसका विकास

खण्ड—एक शिक्षा मनोविज्ञान के आधार

इकाई—1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ एवं अवधारणा

इकाई—2 शिक्षा मनोविज्ञान के सम्प्रदाय और अध्ययन की विधियॉ

इकाई—3 वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्त एवं अवस्थाएं

खण्ड—दो शिक्षा मनोविज्ञान का विकास

इकाई—4 शारीरिक और संवेगात्मक विकास

इकाई—5 संज्ञानात्मक विकास एवं भाषा विकास

इकाई—6 सामाजिक एवं नैतिक विकास

खण्ड—तीन बुद्धि, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता

इकाई—7 बुद्धि सम्प्रत्यय सिद्धान्त एवं मापन

इकाई—8 व्यक्तित्व सम्प्रत्यय एवं मापन

इकाई—9 सृजनात्मकता : अवधारणा एवं मापन

खण्ड—चार अभिप्रेरणा, स्मृति एवं द्वन्द्व

इकाई—10 अभिप्रेरणा, तर्क एवं समस्या समाधान

इकाई—11 स्मृति, विस्मृति, आदत निर्माण एवं अनुशासन

इकाई—12 तनाव, कुण्ठा और द्वन्द्व

खण्ड—पॉच विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

इकाई—13 विशिष्ट बालक

इकाई—14 मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान तथा समायोजन

इकाई—15 समूह मनोविज्ञान

खण्ड–पॉच : विशिष्ट बालक, मानसिक स्वास्थ्य एवं समूह मनोविज्ञान

खण्ड परिचय

विश्व पटल पर भारत को अपना स्थान बनाये रखने के लिए अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। शिक्षा ही एक ऐसा सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा हम भारत की एकता, अखण्डता, अस्मिता, शुचिता, सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण, जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, लोकतांत्रिक मूल्यों का विस्तारीकरण, पर्यावरण नियंत्रण व संरक्षण इत्यादि को संरक्षित रख सकते हैं। भारत का प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह सामान्य वर्ग का हो अनुसूचित जाति का हो, अनुसूचित जनजाति का हो, पिछड़ी जाति हो या विकलांग हो सबको शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने होंगे। इस दिशा में भारत सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के द्वारा अनेक योजनाएं आयोजित की जा रही हैं। इसके लिए सभी को जागरूक करना होगा।

इकाई – 13 प्रस्तुत इकाई के अन्दर विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला गया है। बालक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक रूप से सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं। इस भिन्नता के कारण विशिष्ट बालकों की श्रेणी के अन्तर्गत मानसिक दृष्टि से मन्द बुद्धि बालक पाये जाते हैं। प्रतिभाशाली बालकों की विवेचना बुद्धि लब्धि के आधार पर की जाती है। जिन बालकों की आई.क्यू. 130 के ऊपर होती है, प्रतिभाशाली बालकों की श्रेणी में आते हैं जबकि 70 से नीचे की आई.क्यू. वाले बालक मन्द बुद्धि की श्रेणी में आते हैं। मानसिक मन्दता का आधार, आई.क्यू. की न्यूनता मानसिक बीमारियों के कारण भी होती है। पिछड़े बालकों की शैक्षिक प्रगति सामान्य बालकों की अपेक्षा कम होती है। इसके अन्तर्गत सामान्य आई.क्यू. वाले बालक भी आते हैं। इनके पिछड़े पन का आधार आई.क्यू. नहीं है। बल्कि शारीरिक, मानसिक योग्यता है जो जन्म के उपरान्त दुर्घटना, बीमारी, पारिवारिक कलह, दूषित वातावरण, अशिक्षा, उचित मार्गदर्शन के अभाव के कारण शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन में परिणित हो जाती है। विशिष्ट बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए विशेष कक्षा में प्रशिक्षित अध्यापकों के द्वारा उचित पाठ्यक्रम और शिक्षण प्रविधियों के प्रयोग द्वारा शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। विशिष्ट बालक भी प्रतिभा के धनी होते हैं, लेकिन उनकी योग्यता का सदुपयोग नहीं हो पाता है।

इकाई – 14. जब बालक का शरीर स्वस्थ होगा तो उसका मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा होगा मानव सभ्यता का विकास जब से हुआ है तब से मानव दिन–प्रतिदिन विकास करता चला जा रहा है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति को

मानसिक रोग से कैसे मुक्ति दिलाई जा सकती है इसका अध्ययन किया जाता है। इस इकाई में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान एवं मानसिक स्वास्थ्य के अर्थ एवं परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर मानसिक स्वास्थ्य के महत्व को अच्छी प्रकार से समझा जा सकता है। इस इकाई के अन्तर्गत ही अच्छे मानसिक स्वास्थ्य की विशेषताएॅ उन्हें प्रभावित करने वाले कारकों, मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति में परिवार विद्यालय एवं समाज की क्या भूमिका होनी चाहिए इसका विस्तृत वर्णन किया गया है।

इकाई–15 मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । प्रस्तुत इकाई में समूह मनोविज्ञान के अर्थ, विशेषताओं एवं प्रकारों को विवेचित किया गया है। समूह के द्वारा ही आवश्यकताओं की पूर्ति एवं उत्पत्ति होती है। कक्षा में छात्र एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करना समूह के माध्यम से ही सीखते हैं। समूह गतिकी का अध्ययन शिक्षार्थियों के लिए आवश्यक है जिससे वे समूह के महत्व इत्यादि को समझ सकें। समूह गतिकी का अभिप्राय व्यक्ति का समूह में व्यवहार परिवर्तन से है। समाज में कुछ व्यक्ति इस प्रकार के होते हैं जो दूसरों के कार्यों की प्रशंसा नहीं करते अपितु अपने कार्य से दूसरों को अवश्य प्रभावित करते हैं। शिक्षा ही एक ऐसा सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा बालक का सामाजिक विकास किया जा सकता है। समूह मनोविज्ञान की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ही शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत समूह मनोविज्ञान की शिक्षा प्रदान करने की अनुशंसा की गई। समूह में कार्य करने के कारण बालकों के व्यवहार में अप्रत्याशित परिवर्तन देखे जाते हैं।

इकाई – 13 विशिष्ट बालक

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 विशिष्ट बालक

13.3.1 विशिष्ट बालक का अर्थ

13.3.2 विशिष्ट बालक की परिभाषाएँ

13.4 विशिष्ट बालकों का विभेदीकरण

13.5 प्रतिभाशाली बालक

13.5.1 प्रतिभाशाली बालकों की विशेषताएँ

13.5.2 प्रतिभाशाली बालकों की पहचान

13.5.3 प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा व्यवस्था एवं समायोजन

13.6 मन्द बुद्धि बालक

13.6.1 मन्द बुद्धि बालकों की विशेषताएँ

13.6.2 मन्द बुद्धि बालकों के पहचान के लक्षण

13.6.3 मन्द बुद्धि बालकों की शिक्षा व्यवस्था

13.7 पिछड़ा बालक

13.7.1 पिछड़े बालकों की विशेषताएँ

13.7.2 पिछड़े बालकों की शिक्षा व्यवस्था

13.8 शारीरिक दृष्टि से विकलांग बालक

13.8.1 विकलांगता के प्रकार

13.8.2 विकलांग बालकों की शिक्षा व्यवस्था

13.9 समस्यात्मक बालक

13.9.1 समस्यात्मक बालक की विशेषताएँ

13.9.2 समस्यात्मक बालकों के प्रकार

13.9.3 समस्यात्मक बालकों की शिक्षा व्यवस्था

13.10 सारांश

13.11 अभ्यास के प्रश्न

13.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.1 प्रस्तावना

विश्व पटल पर भारत को अपना स्थान बनाये रखने के लिए अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। षिक्षा ही एक ऐसा सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा हम भारत की एकता, अखण्डता, अस्मिता, शुचिता, सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण, जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, लोकतांत्रिक मूल्यों का विस्तारीकरण, पर्यावरण नियंत्रण व संरक्षण इत्यादि को संरक्षित रख सकते हैं। भारत का प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह सामान्य वर्ग का हो अनुसूचित जाति का हो, अनुसूचित जनजाति का हो, पिछड़ी जाति का हो या विकलांग हो सबको शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने होंगे। इस दिशा में भारत सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के द्वारा अनेक योजनाएँ आयोजित की जा रही है। इसके लिए सभी को जागरूक करना होगा।

शारीरिक रूप से निशक्त बालकों में हीनता का भाव न आये, किसी के ऊपर अपने को बोझ न समझें, उन्हें शिक्षा का समान अवसर मिले व सामान्य बालकों के साथ ही उनके पढ़ने का अवसर प्राप्त हो ऐसी शिक्षा व्यवस्था उपलब्ध करानी होगी। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भारतीय पुनर्वास परिषद् अन्यतर योग्य व्यक्तियों के सर्वांगीण विकास के लिए विशिष्ट शिक्षा सर्व सुलभ हो, सतत् प्रयत्नशील है। विशिष्ट शिक्षा एक सशक्त एवं आवश्यक साधन के रूप में अन्यतर योग्य बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए बहुत ही आवश्यक है। इसलिए निःशक्त लोगों की शिक्षा के लिए विशिष्ट शिक्षा की अधिकाधिक व्यवस्था हेतु कार्य किए जाने चाहिए।

विशिष्ट शिक्षा कार्यक्रम को संचालित करने में अनेक प्रकार की समस्याएँ आ रही हैं। इन समस्याओं के निदान के लिए वैज्ञानिक तकनीकों, अत्याधुनिक शिक्षण सामग्री की उपलब्धता एवं उनके अधिकाधिक उपयोग पर बल देना चाहिए।

आज समय की मांग है कि भारत का प्रत्येक बालक/बालिका शिक्षित हो इसके लिए शिक्षा का अवसर सामान्य रूप से सभी को मिलना चाहिए चाहे वे सामान्य बालक हों या अन्यतर योग्य। अन्यतर योग्य बालकों को सामान्य बालकों के साथ सामान्य कक्षा

में शिक्षा उपलब्ध नहीं होने से ऐसे बालकों में शारीरिक, मानसिक सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास पर नकारात्मक प्रभाव स्पष्ट रूप में दिखाई देता है, जिसके कारण ऐसे बालक चिन्ता, कुण्ठा, भग्नाशा, अपराध प्रवृत्ति जैसी कुंठित ग्रन्थियों से ग्रसित हो जाते हैं। इसलिए आवश्यक है कि विशिष्ट बालकों को भी सामान्य बालकों के साथ सामान्य कक्षा में शिक्षित किया जाय। वैयक्तिक विभिन्नता के कारण कुछ बालक, प्रतिभाशाली, कुछ बालक सामान्य बुद्धि वाले, कुछ बालक अल्प बुद्धि वाले तथा कुछ बालक शारीरिक दृष्टि से सामान्य बालकों की अपेक्षा अन्तर रखते हैं जैसे दृष्टिदोष, श्रवण दोष, एवं मानसिक मन्दता। इस प्रकार के बालक जो सामान्य बालकों से पर्याप्त भिन्नता रखते हैं अन्यतर योग्य बालक या विशिष्ट बालक की श्रेणी में आते हैं। प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत उनकी विशेषताओं, पहचान के लक्षण उनकी शैक्षिक व्यवस्था को दृष्टिगत रखते हुए कैसे उनका सर्वांगीण विकास किया जा सकता है इसकी चर्चा करेंगे।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- सामान्य एवं विशिष्ट बालकों में विभेद कर सकेंगे।
- विशिष्ट शिक्षा की संकल्पना एवं अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- विशिष्ट बालकों की श्रेणी को वर्गीकृत कर सकेंगे।
- विशिष्ट अवश्यकता वाले बालकों की विशेषताओं एवं पहचान के लक्षणों को समझ सकेंगे।
- विशिष्ट बालकों की शिक्षा व्यवस्था से परिचित हो सकेंगे।

13.3 विशिष्ट बालक

13.3.1 विशिष्ट बालक का अर्थ

बालक जन्म से ही शारीरिक एवं बौद्धिक दृष्टि से अन्तर रखते हैं। बालकों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है– (क) सामान्य बालक (ख) विशिष्ट बालक। विशिष्ट बालक की श्रेणी में वे बालक आते हैं जो अपनी योग्यताओं, क्षमताओं, व्यक्तित्व तथा व्यवहार सम्बन्धी विशेषताओं में अपनी उम्र के सामान्य बालकों से अन्तर रखते हैं। बालकों के अन्दर यह विभिन्नता, वैयक्तिक विभिन्नता के कारण पायी जाती है। विशिष्ट बालक सामान्य बालकों से शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक रूप से अन्तर रखने के कारण विशिष्ट बालक कहलाते हैं। विशिष्ट बालक शब्द का प्रयोग

असाधारण प्रतिभा वाले बच्चों के लिए, मन्द बालकों के लिए तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े बालकों के लिए प्रयोग किया जाता है।

विशिष्ट बालक से तात्पर्य उस बालक से होता है जो मानव विकास के विभिन्न पक्षो, शारीरिक, मानसिक, एवं संवेगात्मक दृष्टि से सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं, जिन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. विशिष्ट बालक के अर्थ को लिखिए।

____

____

____

13.3.2 विशिष्ट बालक की परिभाषाएँ

मनोवैज्ञानिकों, शिक्षाविदों एवं उनके लिए कार्य करने वाली संस्थाओं द्वारा विशिष्ट बालकों की भिन्न–भिन्न परिभाषाएँ जो दी गई हैं वे निम्नलिखित हैं –

क्रो और क्रो के अनुसार – '' विशिष्ट शब्द ऐसे विशेषक या उन विशेषकों से युक्त व्यक्ति पर लागू होता है जिसके कारण व्यक्ति अपने आस–पास के लोगों का ध्यान अपनी ओर विशेष रूप से आकृष्ट करता है।''

"The term exceptional is applied to traits or to a person possessing the traits, because of it the individual receives special attention from his fellows."

-Crow and Crow

क्रुकशैंक के अनुसार – '' विशिष्ट बालक वह है जो बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक अथवा संवेगात्मक दृष्टि से सामान्य समझी जाने वाली वृद्धि तथा विकास से इतना भिन्न है कि वह नियमित विद्यालय कार्यक्रम से पूर्ण लाभ नहीं उठा सकता है तथा विशिष्ट कक्षा अथवा पूरक शिक्षण व सेवा चाहता है।''

"An exceptional child is one who deviates intellectually, physically, socially or emotionally so much from what is considered to be normal

growth and development, that he cannot receive maximum benefit from a regular school programme and requires a special class or supplementary instruction and services."

- **William M. Cruickshank**

डन के अनुसार – ''विशिष्ट बालक वे हैं जो सामान्य से शारीरिक अथवा मनोवैज्ञानिक विशेषताओं में इतने भिन्न हैं कि बहुसंख्यक बालकों के लिए बनाया गया विद्यालय कार्यक्रम उनको सर्वांगीण समायोजन व अनुकूलतम विकास के अवसर उपलब्ध नहीं करा पाता है तथा इसलिए अपनी योग्यताओं के अनुरूप उपलब्धि प्राप्त कर सकने के लिए वे विशेष शिक्षण अथवा कुछ स्थितियों में विशेष सहायक सेवायें अथवा दोनों चाहते हैं।''

विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर विशिष्ट बालक की अवधारणा को इस प्रकार वर्णित किया है – ''वह बालक जो शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, शैक्षिक विशेषताओं एवं अपने अन्दर पाए जाने वाले विशेष व्यवहार के कारण सामान्य बालकों से उस सीमा तक भिन्न होते हैं कि उन्हें अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों के समुचित उपयोग एवं विकास के लिए विशेष प्रकार की कक्षाओं, शिक्षण प्रविधियों, प्रशिक्षित अध्यापकों एवं विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता प्रतीत होती है, इस प्रकार की आवश्यकता वाले बालकों को 'विशिष्ट बालक' कहते हैं।''

13.4 विशिष्ट बालकों का विभेदीकरण

सामान्य बालकों से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से इतर होने के कारण विशिष्ट बालकों को उनकी इन विशिष्टताओं के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। विशिष्ट बालकों के वर्गीकरण का रेखीय निरूपण निम्नांकित प्रकार से है –

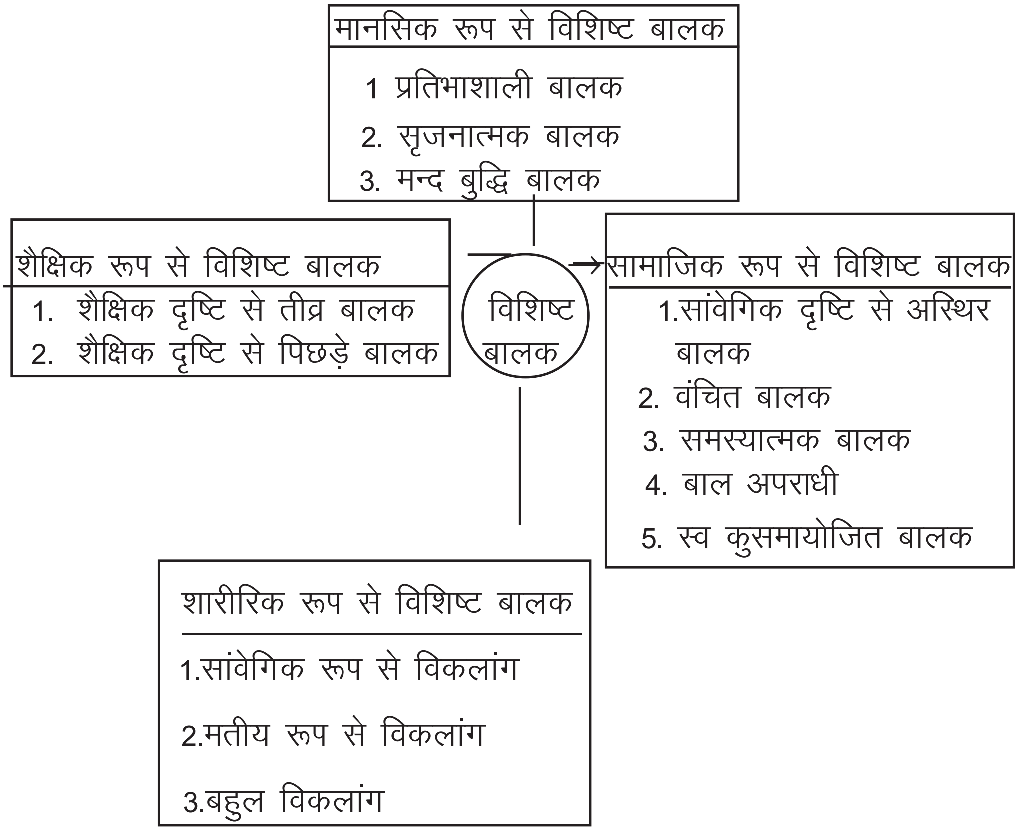

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क)नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. विशिष्ट बालक को वर्गीकृत कीजिए।

13.5 प्रतिभाशाली बालक

प्रतिभाशाली बालक, सामान्य बालकों से सभी क्षेत्रों में उत्कृष्ट होता है। जिन बालकों की बुद्धि सामान्य बालकों से अधिक होती है उन्हें प्रतिभाशाली बालक कहते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि लब्धि के आधार पर प्रतिभाशाली बालकों को सामान्य बालकों

से अलग किया है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने प्रतिभाशाली बालकों के लिए अलग–अलग बुद्धि लब्धि का वर्णन किया है परन्तु सामान्यतया 130 से ऊपर आई0 क्यू0 वाले बालक प्रतिभाशाली बालकों की श्रेणी में आते हैं।

नेशनल सोसाइटी फार द स्टडी आफ एजुकेशन की 57वीं वार्षिक पुस्तिका (1958) के अनुसार प्रतिभाशाली बालक को इस प्रकार परिभाषित किया गया है –

''एक गुणी या प्रतिभाशाली बालक वह है, जो व्यवहार के किसी भी उपयोग क्षेत्र में एक जैसा किन्तु विलक्षण निष्पादन व्यक्त करता है। इस परिप्रेक्ष्य में इस प्रकार की श्रेणी में न केवल बौद्धिक दृष्टि से प्रतिभा – सम्पन्न बालक ही रखे जायेंगे, बल्कि वे भी शामिल किये जा सकते हैं, जो संगीत, चित्रकला, सर्जनात्मक लेखन, नाट्य, यांत्रिक कुशलता तथा सामाजिक नेतृत्व प्रदर्शित करते हैं।''

"A talented or gifted child is one, who shows consistently remarkable performance in any worthiness in the field of behavior. Thus we shall include not only the intellectually gifted, but also those who show performance in music, the graphic arts, creative writing, dramatics, mechanical skills and social leadership."

टरमन व ओडन के अनुसार – '' प्रतिभाशाली बालक शारीरिक गठन, सामाजिक समायोजन, व्यक्तित्व के लक्षणों, विद्यालय उपलब्धि, खेल की सूचनाओं और रुचियों की बहुरूपता में सामान्य बालकों से अधिक श्रेष्ठ होते हैं।''

"Gifted children rate for above the average in physique, social adjustment, personality traits, school achievement, play information and versatility of interests."

13.5.1 प्रतिभाशाली बालकों की विशेषताएँ

- प्रतिभाशाली बालकों की अभिरूचि पठन–पाठन एवं लेखन के क्षेत्र में अत्यधिक होती है।
- प्रतिभाशाली बालकों में अत्यधिक चिन्तन, मनन एवं अध्ययन करने की आदत होती है। अत्यधिक अध्ययन करने के कारण इनके अन्दर शब्दकोषीय ज्ञान का भण्डार पाया जाता है।
- प्रतिभाशाली बालक समस्यात्मक कार्यों में अधिक रुचि रखते हैं।
- प्रतिभाशाली बालकों का शारीरिक विकास सामान्य बालकों की अपेक्षा तीव्र गति से होता है।

- प्रतिभाशाली बालकों ज्ञानेन्द्रियों का विकास शीघ्र एवं ठीक ढंग से होता है।
- प्रतिभाशाली बालकों के अन्दर किशोरावस्था के गुण जल्दी विकसित हो जाते हैं।
- प्रतिभाशाली बालकों की आई0 क्यू0 (बुद्धि लब्धि) अधिक होने के कारण इनके अन्दर तर्क–वितर्क, विश्लेषण–संश्लेषण, एवं स्मरण करने की योग्यताओं का समुचित विकास होता है।
- प्रतिभाशाली बालकों की अन्तर्दृष्टि क्षमता सामान्य बालकों की तुलना में अधिक पायी जाती है।
- इनमें अवधान केन्द्रित करने की क्षमता अधिक होती है।
- प्रतिभाशाली बालक एक ही समय में एक से अधिक क्षेत्रों में विशिष्ट योग्यता रखने की क्षमता पायी जाती है।
- प्रतिभाशाली बालकों की कक्षा में नियमित उपस्थिति, गृहकार्य को नियमित करने की प्रवृत्ति, कक्षा में जाने से पूर्व विषय की पुनारावृत्ति प्रवृत्ति, पाठ्यक्रम के अतिरिक्त पाठ्यसहगामी क्रियाओं जैसे खेल कूद, संगीत, कला एवं ज्ञानवर्धक पुस्तकों को पढ़ने की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है।
- प्रतिभाशाली बालक प्रतिस्पर्धा की भावना से पूर्ण होते हैं।
- प्रतिभाशाली बालकों का चरित्र एवं व्यक्तित्व बहुत ही अच्छा होता है।
- प्रतिभाशाली बालक साहसी, आत्मविश्वास से परिपूर्ण एवं स्वाभिमानी होते हैं।
- प्रतिभाशाली बालकों में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता की योग्यता पायी जाती है।
- प्रतिभाशाली बालकों में नेतृत्व क्षमता पायी जाती है।
- प्रतिभाशाली बालक मृदुभाषी एवं रचनात्मक प्रवृत्ति के होते हैं

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क)नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. टरमन व ओडन के अनुसार प्रतिभाशाली बालकों को परिभाषित कीजिए।

___

___

___

13.5.2 प्रतिभाशाली बालकों की पहचान

प्रतिभाशाली बालकों को देखकर पहचानना अत्यन्त कठिन है। क्योंकि शारीरिक रूप से वे सामान्य बालकों के समान ही होते हैं। सामान्य बालकों और प्रतिभाशाली बालकों में अन्तर आई0 क्यू0 के आधार पर किया जा सकता है। बालक घर में, समाज में या विद्यालय में अपने अन्दर छिपी प्रतिभा का प्रकटीकरण होता है, इसके फलस्वरूप वह अपने व्यवहार के द्वारा पहचाना जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि प्रतिभाशाली बालक को पहचानने के लिए अवलोकन एवं मानकीकृत परीक्षण विधि का प्रयोग करते है। प्रतिभाशाली बालकों की पहचान के लिए उपयोग में लायी जाने वाली अवलोकन विधि के अन्तर्गत अध्यापक के निर्णय एवं कक्षा में पढ़ने वाले साथियों या समाज में उनके साथ रहने वाले साथियों से भी मदद मिलती है। मानकीकृत परीक्षणों के अतिरिक्त प्रतिभाशाली बालकों की पहचान करने में अध्यापक एवं मित्रों की राय की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। कुछ विशेष प्रकार के मानकीकृत परीक्षणों के प्रयोग द्वारा भी इनकी पहचान सम्भव है। कुछ विशिष्ट मानकीकृत परीक्षणों के नाम निम्नवत् वर्णित है–

मानकीकृत परीक्षण

- समूह बुद्धि परीक्षण
- व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण
- सम्प्राप्ति परीक्षण
- व्यक्तित्व परीक्षण

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क)नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. प्रतिभाशाली बालकों की पहचान का उत्तम माध्यम क्या है?

___

___

___

13.5.3 प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा व्यवस्था एवं समायोजन

प्रतिभाशाली बालकों को चिन्हित करने या पहचानने के पश्चात उनके लिए किस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए इस पर ध्यान देना आवश्यक है। प्रतिभाशाली बालक विषयवस्तु को अच्छी तरह से और जल्दी सीख लेते हैं। इसलिए उनकी शिक्षा व्यवस्था करना कठिन कार्य नहीं है। इस प्रकार के बालकों की योग्यता एवं क्षमता का पूर्ण लाभ मिले इसके लिए आवश्यक है कि इन्हें विशेष कक्षा में विशेष शिक्षकों के माध्यम से शिक्षा उपलब्ध कराई जाय। इस सन्दर्भ में **हैवीघर्स्ट** ने अपनी पुस्तक में लिखा है –'' प्रतिभाशाली बालकों के लिए शिक्षा का सफल कार्यक्रम वहीं हो सकता है जिसका उद्देश्य उनकी विभिन्न योग्यताओं का विकास करना है।''

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा व्यवस्था एवं उनके उचित समायोजन के लिए निम्नानुसार उपाय किये जा सकते हैं –

1. **कक्षा से प्रोन्नति –** कुछ विद्वानों के अनुसार प्रतिभाशाली बालकों को एक ही शैक्षिक सत्र में दो बार प्रोन्नति देनी चाहिए। परन्तु कुछ विद्वान इस संस्तुति से सहमत नहीं हैं क्योंकि इसके सम्बन्ध में उनका विचार है कि बालक एक साथ कई विषयों में योग्य नहीं हो सकते अतः प्रोन्नति देना उचित नहीं है। इस प्रकार के निर्णय से बालकों के सीखने की मात्रा एवं उनका समायोजन भी प्रभावित होता है। इस सम्बन्ध में **क्रो एण्ड क्रो** का मत है – ''प्रतिभाशाली बालक को सामान्य रूप से विभिन्न कक्षाओं में अध्ययन करना चाहिए।''

2. **विशेष कक्षा का प्रबन्धन –** सामान्य कक्षा में विशिष्ट बालकों को शिक्षा देने से अध्यापकों को विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। प्रतिभाशाली बालकों का आई0 क्यू0 सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक होता है जिसके कारण अध्यापक द्वारा पढ़ाई गयी बातों को प्रतिभाशाली बालक सामान्य बालकों की अपेक्षा कक्षा में विषय वस्तु को जल्दी व आसानी से सीख लेते हैं जब कि सामान्य बालकों को सीखने में अधिक समय लगता है। ऐसी स्थिति में प्रतिभाशाली बालक सामान्य छात्रों के साथ अपने को समायोजित नहीं कर पाते जिसके कारण उनके अन्दर तनाव, खीझ, बेचैनी एवं एक प्रकार के अवसाद से ग्रसित हो जाते हैं। इसलिए आवश्यक है कि ऐसी स्थिति से बचने के लिए एवं प्रतिभाशाली बालकों के उचित समायोजन एवं सर्वांगीण विकास के लिए विशेष कक्षा की आवश्यकता एवं व्यवस्था की ओर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है।

3. **समसामयिक पाठ्यक्रम –** प्रतिभाशाली बालकों की बुद्धि लब्धि सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक होता है इसलिए उनके लिए समसामयिक पाठ्यक्रम की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे व उसमें रूचि लेकर अध्ययन कर सकें। इस

प्रकार के बालकों के पाठ्यक्रम ऐसे होने चाहिए जिससे सभी मौखिक योग्यता, मानसिक योग्यता, तर्क, चिन्तन एवं रचनात्मक शक्तियों का उनके अन्दर उत्कृष्ट विकास विकास कर सके।

4. **प्रशिक्षित अध्यापकों के माध्यम से शिक्षण –** प्रतिभाशाली बालकों को शिक्षण देने वाले अध्यापकों को प्रशिक्षित होना चाहिए तथा बालक को मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए। ऐसे अध्यापकों के सम्पर्क में आने पर वे अपनी क्षमताओं, योग्यताओं में अभिवृद्धि कर सकते हैं।

5. **पाठ्य सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था –** प्रतिभाशाली बालक एक साथ कई कलाओं में निपुण हो सकते हैं। प्रतिभाशाली बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए विद्यालय को पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन समय–समय करना चाहिए। पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने से उनका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक विकास अच्छी प्रकार से होता है और उनकी सम्पूर्ण प्रतिभा निखर कर सामने परिलक्षित होती है।

प्रशंसा– प्रतिभाशाली बालकों के शैक्षिक उन्नयन के लिए समय–समय पर उनकी प्रशंसा करनी चाहिए। माता–पिता एवं अध्यापकों को प्रतिभाशाली बालकों के विकास में रूचि लेते हुए उन्हें ऐसे अवसर उपलब्ध कराने चाहिए जिससे वे प्रोत्साहित होकर मेहनत के साथ अपने कार्य को करते हुए अपना सर्वांगीण विकास कर सकें।

13.6 मन्द बुद्धि बालक

मानसिक रूप से मन्द बुद्धि बालकों से आशय ऐसे बालकों से है जो जन्म से या शारीरिक एवं मानसिक बीमारियों के कारण कम बुद्धि लब्धि वाले होते हैं। मानसिक मन्द बालक अपनी आयु तथा सामान्य स्तर के कार्य को करने में भी समस्या का अनुभव करते हैं। मानसिक मन्द बालक घर, समाज, एवं विद्यालय में अपने को समायोजित नहीं कर पाते हैं। जिसके कारण उनके अन्दर हिनता की भावना विकास हो जाता है तथा वे कुंठित हो जाते हैं। परिवार, समाज एवं विद्यालय में अपने को तिरस्कृत समझने के कारण मन्द बुद्धि बालक सभी से घृणा करने लगते हैं।

मन्द बुद्धि बालक उसे कहते हैं जिनकी आई. क्यू. औसत से कम पायी जाती है। 80 से कम बुद्धि लब्धि वाले बालकों को मानसिक मन्दता की श्रेणी में रखा जाता है।

स्किनर ने इन बालकों को मन्द बुद्धि, अल्पबुद्धि, विकल बुद्धि, धीमी गति से सीखने वाले, पिछड़े हुए और मूढ़ बालक की संज्ञा दी है। **क्रो एण्ड क्रो** के शब्दों में जिनकी बुद्धि लब्धि 70 से कम होती है उन्हें मन्द बुद्धि बालक कहते हैं।

अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ मेण्टल डेफिशिएन्सी ने 1973 में मानसिक मंदता के अर्थ को इस प्रकार वर्णित किया है – ''मानसिक मन्दता सामान्य बौद्धिक कार्यकारिता में सार्थक रूप से उप–औसत को व्यक्त करती है, जो अनुकूलित व्यवहार में कमियों के साथ–साथ विद्यमान रहती है और विकासात्मक अवधि में प्रकट होती है।''

"Mental retardation fefers significantly sub average in general intellectual functioning existing concurrently with deficits in adaptive behaviour and manifested during developmental period."

मानसिक मन्दता के अर्थ को शिक्षा कोष में निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है।

''मानसिक रूप से मन्दित बालक एक बालक है जो एक अवरुद्ध की दशा अथवा अपूर्ण विकास द्वारा वैशिष्टय प्राप्त करता है अथवा जो मात्रा के प्रति उस दशा को प्रकट करता है, जिसमें विशिष्ट शैक्षिक सेवाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

> "Mentally retarded child is a child who is characterized by a condition of arrested or incomplete dvelopment or who manifests this condition to the degree that special education services shuld be provided."

Dictionary of Education p-95

बेन्डा के अनुसार – ''एक मानसिक दोष वाला व्यक्ति वह है जो अपने आपको तथा अपने क्रिया–कलापों को व्यवस्थित करने में असमर्थ होता है या उसे यह सब सीखना पड़ता है तथा जिसको स्वयं के और समुदाय के कल्याण के लिए निरीक्षण, नियंत्रण तथा देख–भाल की आवश्यकता है।''

"A mentally defective person who is incapable of managing himself and his affairs, or being taught to do so, and who requires supervision, control and care for his own welfare and welfare of the community."

-Benda

13.6.1 मन्द बुद्धि बालकों की विशेषताएँ

मानसिक रूप से मन्द बालकों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

- मानसिक रूप से मन्द बालकों का शारीरिक विकास बहुत ही धीमी गति से होता है।
- मानसिक रूप से मन्द बालकों की बुद्धि लब्धि 70 से कम होती है।
- मन्द बुद्धि बालकों के अन्दर आत्मविश्वास का अभाव होता है।
- मानसिक रूप से मन्द बालकों को शिक्षित करना एक कठिन कार्य है। इस प्रकार के बालक बहुत धीमी गति से सीखते हैं।
- मानसिक रूप से मन्द बुद्धि बालकों का सांवेगिक विकास बहुत कम का होता है।
- मन्द बुद्धि बालक परिस्थितियों के साथ अपना उचित समायोजन नहीं कर पाते हैं।
- मन्द बुद्धि बालकों में भाषायी ज्ञान कम एवं इनमें शब्द कोश का सर्वथा अभाव पाया जाता है।
- मानसिक रूप से मन्द बालक किसी अन्य बालक से प्रतिस्पर्धा नहीं रख सकते हैं।
- इस प्रकार के बालक शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े होते हैं।
- मानसिक रूप से मन्द बालकों में आत्मनिर्भरता की कमी पायी जाती है।

13.6.2 मन्द बुद्धि बालकों के पहचान के लक्षण

मानसिक रूप से मन्द बालकों की पहचान के लक्षण निम्नलिखित प्रकार से हैं—

- मानसिक रूप से मन्द बालकों के अन्दर शारीरिक रूप से कार्य करने की क्षमता का विकास कम होता है।
- मानसिक रूप से मन्द बुद्धि बालकों के अन्दर बौद्धिक क्षमताओं का अभाव होता है। 0 से 24 तक बुद्धि लब्धि वाले बालक जड़ बुद्धि, 25 से 49 तक बुद्धि लब्धि वाले बालक मूढ़ बुद्धि, 50 से 70 तक बुद्धि लब्धि वाले बालक मूर्ख बुद्धि एवं 70 से 85 बुद्धि लब्धि वाले बालक मन्द बुद्धि के अन्तर्गत आते हैं, इस प्रकार के बालकों की गतिविधियों एवं हाव–भाव एवं क्रिया–कलाप इत्यादि लक्षणों के माध्यम से तथा परीक्षणों के द्वारा मापन कर उनकी पहचान करते हैं।
- मन्द बुद्धि बालकों के अन्दर चिन्तन एवं मनन करने की योग्यता नहीं पायी जाती है।

- मानसिक मन्द बद्धि बालक आयु के अनुपात में शैक्षिक योग्यता नहीं रखते हैं।
- मानसिक मन्द बालक के सामाजिक तथा व्यवहार कुशल नहीं होते।
- मानसिक मन्द बालक अपने कार्यों को तथा दूसरों द्वारा दिये गये कार्य को निष्पादित करने में अक्षम होते हैं।
- मानसिक मन्द बुद्धि बालकों के अन्दर सीखने की क्षमता अत्यन्त न्यून स्तर की होती है।
- मानसिक मन्द बुद्धि बालकों के अन्दर संवेगात्मक दृष्टि से कमियाँ पायी जाती हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क)नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. मन्द बुद्धि बालकों की दो विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

13.6.3 मन्द बुद्धि बालकों की शिक्षा व्यवस्था

मानसिक रूप से मन्द बालकों को शिक्षा कैसे प्रदान की जाय यह एक विचार करने का प्रश्न है क्योंकि कुछ मन्द बुद्धि बालक शिक्षा ग्रहण करने के योग्य और कुछ प्रशिक्षण के योग्य होते हैं। मानसिक रूप से मन्द बालक को प्रशिक्षण देकर केवल इस योग्य बनाया जा सकता है कि वे अपने दैनिक जीवन के क्रिया कलापों को स्वयं कर सकें। ऐसा करने से मन्द बुद्धि बालकों के अन्दर आत्म विश्वास के स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है जिससे वे आत्मनिर्भर बन सकें जबकि अन्य प्रकार के मानसिक मन्द बालकों को किसी भी प्रकार से शिक्षित एवं प्रशिक्षित नहीं किया जा सकता है। मानसिक दृष्टि से मन्द बुद्धि बालकों को शिक्षित एवं प्रशिक्षित करने के लिए निम्नलिखित प्रयास उपयोगी हो सकते हैं :–

विशेष आवासीय विद्यालयों के द्वारा

सामान्य विद्यालयों की अपेक्षा इस प्रकार के विद्यालयों में इनकी देखभाल भली–भाँति की जा सकती है। आवासीय विद्यालयों की प्रत्येक कक्षा में सीमित छात्रों

के होने के कारण अध्यापक व्यक्तिगत रूप से सभी छात्रों की गतिविधियों पर नजर रख सकता है और उनकी व्यक्तिगत समस्याओं का निदान आसानी से कर सकता है ऐसा करने से मन्द बुद्धि बालकों का समुचित विकास कर उन्हें दैनिक कार्य करने के योग्य बनाया जा सकता है।

लक्ष्य आधारित शिक्षा व्यवस्था

मन्द बुद्धि बालकों की शिक्षा व्यवस्था इस प्रकार से संगठित होनी चाहिए जिससे वे अपने दैनिक जीवन में आने वाली आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकें एवं स्वयं अपनी दैनिक जीवन की समस्याओं का समाधान कर सकें। अतः इसके लिए आवश्यक है कि मन्द बुद्धि बालकों के लिए शिक्षा का उद्देश्य उनके शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने, उनके अन्दर अच्छी आदतों का विकास करने से सम्बन्धित होनी चाहिए।

आत्मनिर्भरता की शिक्षा

मानसिक रूप से मन्द बुद्धि बालकों के लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए कि वे स्वयं सीख कर अपने कार्य को सम्पादित कर सकें। इस प्रकार की शिक्षा से उनके अन्दर आत्मविश्वास की वृद्धि होगी और वे आत्म निर्भर बन सकेंगें। इनके लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए जिससे वे अपने जीवन के कार्यों को स्वयं करे आर्थिक दृष्टि से मजबूत होकर स्वावलम्बी बन सकें।

स्वयं की देखभाल का प्रशिक्षण

बुद्धि के अभाव के कारण मन्दबुद्धि बालक मानसिक रूप से विक्षिप्त होते हैं। उनके क्रिया–कलाप पागलों जैसी होती है। उन्हें स्वयं के बारे में कोई जानकारी नहीं होती कि उन्हें स्वच्छ कपड़ा पहनना है, स्वच्छ भोजन करना है, अपनी वस्तुओं को निश्चित स्थान पर रखना है इत्यादि। इस प्रकार की आदतों का विकास मन्द बुद्धि बालकों से करने के लिए उनके लिए विशेष प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

विशिष्ट शिक्षण प्रविधियों का प्रयोग

सामान्य बालकों को शिक्षित करने के लिए जो शिक्षण विधियाँ प्रयोग में लाई जाती है, ठीक उसी प्रकार के शिक्षण विधियों का प्रयोग विशिष्ट बालकों के ऊपर करने से उनको कोई लाभ नहीं होता है और न ही उनके व्यवहार में किसी प्रकार परिवर्तन किया जा सकता है। अतः इस प्रकार के बालकों के लिए विशिष्ट शिक्षण प्रविधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए। इस प्रकार ऐसे बालकों के लिए प्रदर्शन–

विधि, क्रिया–विधि एवं माण्टेसरी विधि का प्रयोग करे शिक्षण प्रक्रिया को संचालित किया जाना चाहिए।

13.7 पिछड़ा बालक

पिछड़ा बालक से आशय उन बालकों से है जिनकी शैक्षिक क्षमता अत्यन्त अल्प होती है। इस प्रकार के बालक शैक्षिक दृष्टि से सामान्य बालकों से बहुत पीछे होते हैं। आर्थिक व्यवस्था, घर के कलह, अशिक्षा, बुरी संगति, अप्रशिक्षित एवं अयोग्य अध्यापक द्वारा शिक्षण समायोजन क्षमता की न्यूनता इत्यादि के कारण इस प्रकार के बालक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते और वे अन्य बालकों से पिछड़ जाते हैं। जब किसी कक्षा में अध्यापक द्वारा किसी विषय वस्तु को बार बार पढ़ाया जाता है और इस प्रकार के बालक उसे सीखने में असमर्थ होते हैं। बालकों का सामान्य ज्ञान या उपलब्धि की दृष्टि से पिछड़ा कह सकते हैं। पिछड़े बालकों के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए अनेक विद्वानों ने अलग अलग परिभाषाएँ दी हैं। जो निम्नलिखित है –

शोरेल के अनुसार – '' पिछड़ा छात्र वह है जो अपनी ही आयु के अन्य बालकों की अपेक्षा उल्लेखनीय शैक्षिक न्यूनता प्रदर्शित करता है।''

"Backward pupil is one who compared with other pupils of the same chronological age shows marked educatonal deficiency."

-Schorell

सिरिल बर्ट के अनुसार – '' पिछड़ा बालक वह है, जो विद्यालय जीवन के मध्य में (अर्थात लगभग 10 वर्ष की उम्र में) अपनी कक्षा से नीचे की कक्षा के काम को करने में अक्षम है, जो उसकी उम्र के बालकों के लिए सामान्य काम है।''

"The backward child is one who is unable to do the work of the class next below that which is normal for his age."

- Cyril Burt

शिक्षा शब्द कोश में पिछड़ा बालक के अर्थ को इस प्रकार परिभाषित किया गया है – '' पिछड़ा बालक एक बालक है, जो शैक्षिक स्तर के स्थान निर्धारण में एक से दो वर्ष मंदित है।''

"The backward child is a child who is one to two years retarded in academic grade placement."

-Dictionary of Education, p.94

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क)नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. शिक्षा शब्द कोश के अनुसार पिछड़े बालक के अर्थ को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

13.7.1 पिछड़े बालकों की विशेषताएँ

पिछड़े बालकों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

- पिछड़े बालकों की शैक्षिक योग्यताएँ सामान्य या औसत बालकों से न्यून होती है।
- पिछड़े बालकों की कक्षा में शैक्षिक प्रगति सामान्य बालकों की अपेक्षा काफी कम होती है।
- पिछड़े बालकों में सीखने की क्षमता अत्यन्त न्यून होती है।
- सामान्य बालकों के लिए प्रयुक्त शिक्षण प्रतिधियों द्वारा पिछड़े बालकों को शिक्षित करने पर उन्हें इसका लाभ प्राप्त नहीं होता है।
- शारीरिक और मानसिक दृष्टि से पिछड़े बालकों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता है।
- पिछड़े बालक अपने व्यवहार के कारण वातावरण के साथ अनुकूलन न हो पाने से अपने को समायोति नहीं कर पाते हैं।
- पिछड़े बालकों का अपने जीवन के प्रति कोई उत्साह नहीं होता जिसके कारण ये निराशावादी होते हैं।

13.7.2 पिछड़े बालकों की शिक्षा व्यवस्था

केवल मन्द बुद्धि बालक ही पिछड़े बालक की श्रेणी में नहीं आते बल्कि उच्च आई. क्यू. वाले बालक भी शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हो सकते हैं। बालकों के पिछड़ने के मुख्य कारणों में घर–परिवार की आर्थिक स्थिति, विद्यालय का दूषित वातावरण, बुरी संगत,। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक विकास दर भी बालकों क शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ने के लिए मुख्य कारण होते हैं। यदि इन कमियों को दूर कर

लिया जाय तो शैक्षिक दृष्टि से इन बालकों को भी शिक्षित किया जा सकता है। स्टोन्स के अनुसार – ''आजकल पिछड़ेपन के क्षेत्र में किया जाने वाला अधिकांश अनुसंधान यह सिद्ध करता है कि उचित ध्यान दिये जाने पर पिछड़े बालक, शिक्षा में प्रगति कर सकते हैं।'' पिछड़े बालकों को उन्नत करने के कुछ प्रमुख सुझाव व उपाय निम्नलिखित हैं –

1. पिछड़े बालकों में यदि किसी प्रकार का शारीरिक विकार है तो उनके उचित निदान एवं उपचार की व्यवस्था होनी चाहिए। दृश्य दोष एवं श्रवण दोष वाले बालकों को कक्षा में अगली पंक्ति में बैठाने की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
2. ऐसे पिछड़े बालक जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है और वे शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ है उनके लिए निःशुल्क शिक्षा, निःशुल्क भोजन, निःशुल्क वस्त्र एवं छात्रवृत्ति देने की व्यवस्था सरकार के स्तर से उपलब्ध कराई जानी चाहिए।
3. पिछड़े बालकों के साथ भी सामान्य बालकों के समान ही संतुलित एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। इस प्रकार के बालकों के साथ माता–पिता, मित्र, एवं अध यापकों को भेदभाव पूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए।
4. इस प्रकार के छात्रों के लिए विशिष्ट विद्यालय खोले जाने चाहिए। उन्हें इस प्रकार के विद्यालयों में एक ही समान बालकों के समूह में शिक्षा देनी चाहए। सामान्य कक्षा में औसत से अधिक एवं तीव्र बुद्धि वाले छात्रों के साथ शिक्षा प्राप्त करने में वे कठिनाई अनुभव करते हैं और अध्यापक भी पूरी कक्षा क छात्रों पर नजर नहीं रख पाते छात्रों पर नजर नहीं रख पाते, जिसके कारण इन छात्रों पर ध्यान नहीं दिया जा सकता जिसके कारण इस प्रकार के छात्रों की किमयों को दूर नहीं किया जा सकता। ऐसी परिस्थितिय में बालक निराश होकर शैक्षिक दृष्टि से सामान्य छात्रों की अपेक्षा पिछड़ जाते हैं।
5. यदि विशिष्ट विद्यालयों की स्थापना करने में समस्याएँ आ रही हो तो तो ऐसी स्थिति में सामान्य विद्यालयों में ही विशिष्ट कक्षाओं की व्यवस्था कर देनी चाहिए। विशिष्ट कक्षाओं में एक समान छात्रों के होने के कारण एवं छात्रों की संख्या सीमित (लगभग 20 या इससे कम) होने के कारण अध्यापक व्यक्तिगत रूप से बालकों के सम्पर्क में जाकर उनकी कमियों को समझकर उनकी समस्या का समाधान करते हैं। ऐसा करके पिछड़े बालकों को सामान्य वर्ग के छात्रों की श्रेणी में लाया जा सकता है।
6. ऐसे बालकों को शिक्षित करने के लिए योग्य, कुशल, विषय विशेषण एवं प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे इन्हें उचित शिक्षा प्रदान कर सामान्य शैक्षिक स्तर पर लाया जा सके।

7. इस प्रकार के बालकों को शिक्षा देने के लिए रोचक, सरल एवं सुबोध पाठ्यक्रम की संरचना करनी चाहिए। इस प्रकार के बालकों के लिए पाठ्यक्रम जीवनोपयोगी और व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला होना चाहिए।

13.8 शारीरिक दृष्टि से विकलांग बालक

जब बालकों में जन्म से ही शरीर के किसी भाग में कमी पायी जाती है, या जन्म लेने के पश्चात किसी दुर्घटना या बीमारी के कारण उसके शरीर के किसी एक अंग या एक से अधिक अंग में क्षति हो जाती है, उन्हें विकलांग बालक कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि जब तक बालक का शरीर स्वस्थ्य नहीं होगा वह किसी भी कार्य को करने में अक्षम होगा अर्थात वह विकलांगता की श्रेणी में रखा जाएगा। शारीरिक अपंगता होने के कारण बालक समान्य बालकों के समान क्रिया–कलाप करने में समर्थ नहीं होगा और ऐसे बालकों का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। विकलांगता किसी भी व्यक्ति को किसी भी अवस्था में उसके सामान्य व्यवहार, कार्य करने की क्षमता, विचार एवं नियमित क्रिया–कलाप को प्रभावित कर शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व भावनात्मक रूप से असंतुलित कर देते हैं।

क्रो एण्ड क्रो के अनुसार – "एक व्यक्ति जिसमें कोई इस प्रकार का शारीरिक दोष होता है जो किसी भी रूप में उसे सामान्य क्रियाओं में भाग लेने से रोकता है, या उसे सीमित रखता है, उसको विकलांग व्यक्ति कह सकते हैं।"

13.8.1 विकलांगता के प्रकार

विकलांग बालक

- अपंग
- चक्षु विकलांग बालक
- श्रवण विकलांग बालक
- वाक–विकलांग बालक
- विरूपित बालक

13.8.2 विकलांग बालकों की शिक्षा व्यवस्था

शारीरिक रूप से विकलांग बालक वे बालक हैं जो शारीरिक निःशक्तता के कारण सामान्य बालकों से इतर होते हैं।

1. विकलांग बालकों के लिए विशिष्ट विद्यालयों की व्यवस्था होनी चाहिए।
2. विकलांग बालकों को शिक्षा विद्यालय में मनोचिकित्सकों की सलाह के आधार पर दी जानी चाहिए।

3. विकलांग बालकों के प्रति सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करना चाहिए जिससे उनके अन्दर आत्मबल और सम्मान को बढ़ाया जा सके।

4. विकलांग बालक शारीरिक रूप से कमजोर एवं अपंग तो हो सकते हैं लेकिन स्वाभिमानी प्रवृत्ति के होते हैं। विकलांग बालकों को इस बात का अहसास नही करना चाहिए कि उनके अन्दर जो कमी है उसके कारण लोग उनके ऊपर दया करते हैं।

5. विकलांग बालकों की योग्यताओं के अनुसार ही पाठ्यक्रम का निर्माण कराया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम सरल, सुगम, सुबोध तथा कम विस्तृत होने चाहिए।

6. कक्षा में बालक की शारीरिक अवस्था को दृष्टिगत रखते हुए उन्हें बैठने के लिए उचित फर्नीचर, स्वच्छ हवा, प्रकाश, पानी इत्यादि की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

7. विकलांग बालकों के मानसिक विकास के लिए उचित एवं स्तरीय शिक्षा का नियोजन किया जाना चाहिए।

8. विकलांग बालकों के लिए शिक्षण धीमि गति से आयोजित कराई जानी चाहिए। वे तथ्यों को आसानी से समझकर और उसमें रूचि लेकर पढ़ने के लिए अभिप्रेरित हो सकें।

9. चक्षु विकलांग बालकों को ब्रेल विधि के द्वारा शिक्षित किया जाना चाहिए।

10. कम श्रवण क्षति वाले बालकों को सामान्य बालकों के साथ कक्षा मे अगली पंक्ति में बैठा कर श्रवण यंत्र की सहायता से शिक्षित किया जा सकता है।

11. तुतलाने एवं हकलाने दोष को अभ्यास के माध्यम से या चिकित्सकीय सुविधा उपलब्ध कराकर कुछ सीमा तक दूर किया जा सकता है। ऐसे बालकों के लिए मनोविज्ञानशाला की व्यवस्था होनी चाहिए एवं मनोचिकित्सक के द्वारा उनकी समस्याओं को दूर करने के प्रयास बराबर किए जाने चाहिए।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. शारीरिक रूप से विकलांग बच्चों के लिए क्रो एण्ड क्रो के द्वारा दी गई परिभाषा को लिखिए।

____

____

13.9 समस्यात्मक बालक

समस्यात्मक बालक घर, परिवार, समाज तथा विद्यालय में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न करते रहते हैं। कक्षा में समस्यात्मक बालकों का समायोजन सामान्य बालकों के साथ ठीक ढंग से नहीं हो पाता और वे कक्षा में विभिन्न प्रकार की समस्याओं को उत्पन्न करते रहते हैं। इस प्रकार के बालकों का व्यवहार सामान्य नहीं होता इसलिए इन्हें समस्यात्मक बालक कहा जाता है। शिक्षकों, अभिभावकों एवं माता–पिता को चाहिए कि वे बालकों के समस्यात्मक पक्ष का सक्षमता के साथ निरीक्षण करे तथा यह जानने का प्रयास करें कि ये बालक किन परिस्थितियों के कारण समस्या उत्पन्न करते हैं। समस्या उत्पन्न करने के कारणों को दूर करके इनके व्यवहार में परिवर्तन किया जा सकता है। अधिक प्यार, अत्यधिक नियंत्रण, इच्छाओं की पूर्ति नहीं होने के कारण एवं असुरक्षा की भावना के कारण बालक समस्यात्मक हो जाते हैं।

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर समस्यात्मक बालकों के अर्थ को स्पष्ट करने का प्रयास किया। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत् वर्णित है–

वेलेन्टाइन के अनुसार – '' समस्यात्मक बालक वे बालक हैं जिनका व्यवहार अथवा व्यक्तित्व किसी बात में गम्भीर रूप से असाधारण होता है।''

"Problem Children are generally used to describe chilren whose behaviour or personality in something is seriously abnormal."

-Valentime

कॉफमैन के अनुसार – ''समस्यात्मक बच्चे वे हैं जो अपने वातावरण के प्रति सामाजिक रूप से अस्वीकार्य अथवा व्यक्तिगत रूप से असंन्तोषजनक ढंग से काफी समय से और पर्याप्त रूप में अनुक्रिया करते हैं, परन्तु जिन्हें सामाजिक रूप से अधिक स्वीकार्य और व्यक्तिगत रूप से संतुष्टि प्रदान करने वाले व्यवहार को पढ़ाया जा सकता है।''

"Problem children are those who chronically and markedly respond to their evironment is specially unacceptable and/or personaly unsatisfying ways but who can be taught more socially acceptable and personally gratifying behaviour."

-Kauffiman

13.9.1 समस्यात्मक बालक की विशेषताएँ

समस्यात्मक बालकों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

– इनके व्यवहार में असामान्यता पायी जाती है।

– इस प्रकार के बालक असमाजिक होते हैं ये अपने आप में प्रसन्न रहते हैं। समाज के सदस्यों के क्रिया कलापों में इनकी रुचि नहीं होती है।

– विद्यालय एवं समाज में अपने शिक्षकों एवं दोस्तों के साथ अन्तःक्रियाएँ नहीं करते हैं और उनके साथ ठीक ढंग से समायोजन भी नहीं कर पाते हैं।

– समस्या कोई जनमजात गुण नहीं है। यह परिस्थितियों के अनुसार अर्जित की जाती है।

– स्तरीय शिक्षा एवं उपयुक्त शिक्षण प्रविधियों के प्रयोग से इनके अन्दर सामाजिकता का विकास कर इनके व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी – (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. समस्यात्मक बालक की दो प्रमुख विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

13.9.2 समस्यात्मक बालकों के प्रकार

समस्यात्मक बालकों के प्रकार निम्नवत होते हैं –

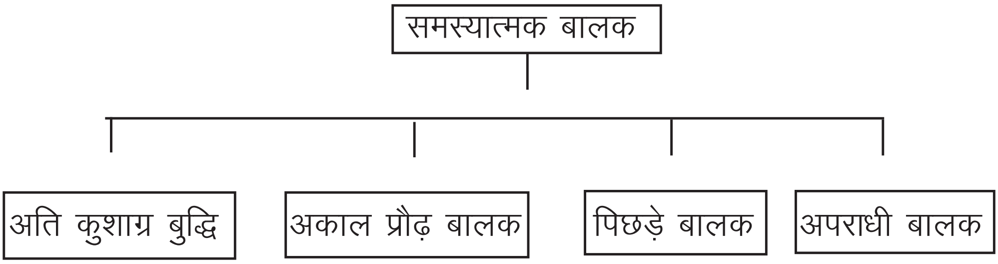

विभिन्न प्रकार के लक्षणों के आधार पर समस्यात्मक बालकों के कुछ प्रकार निम्नवत हैं –

1. चोरी करने की इच्छा वाले बालक
2. झूठ बोलने की आदत वाले बालक
3. क्रोधी एवं झगड़ालू स्वभाव के बालक
4. पलायनवादी दृष्टिकोण वाले बालक
5. परेशान करने की प्रवृत्ति वाले बालक
6. डर उत्पन्न करने वाले स्वभाव के बालक
7. गृह कार्य को समय से न करने वाले बालक
8. देर से पहुँचने की प्रवृत्ति वाले बालक
9. अनैतिक एवं असामाजिक कार्य करने की प्रवृत्ति वाले बालक

13.9.3 समस्यात्मक बालकों की शिक्षा व्यवस्था

इस प्रकार के बालकों की आदतों को देखकर उनके ऊपर क्रोधित होते हुए उन्हे दण्डित नहीं करना चाहिए। दण्ड देने से वे और अधिक आक्रमक होकर समाजविरोधी कार्यों को तेजी से करते हैं। इसलिए माता–पिता, शिक्षक,वरिष्ठ सदस्यों एवं उनके शुभचिन्तकों को उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। ऐसा करके उनको निम्नलिखित उपायों के माध्यम से सुधारा जा सकता है।

1. पारिवारिक सदस्यों एवं शिक्षकों को उनके प्रति प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए।
2. बालकों की जन्मजात मूल प्रवृत्तियों को दबाना नहीं चाहिए। बल्कि उनके अन्दर पायी जाने वाली गलत आदतों को दूर करने के लिए मनोचिकित्सक को दिखाकर उनकी राय लेनी चाहिए।
3. बालकों के अच्छे कार्यों को प्रोत्साहित करना चाहिए। इस प्रकार के बालकों के लिए सकारात्मक शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए।
4. समस्यात्मक बालकों को नैतिक शिक्षा के पाठ पढ़ाना चाहिए। जिसके माध्यम से उनके अन्दर अपेक्षित परिवर्तन किया जा सके।
5. इस प्रकार के बालकों द्वारा किए जा रहे गतिविधियों पर बराबर नजर रखनी चाहिए तथा गलत के सम्पर्क में जाने से रोकना चाहिए।
6. बालकों की रूचि के अनुसार उन्हें मनोरंजन के साधन उपलब्ध कराये जाने चाहिए।

7. ऐसे बालकों के प्रति उनके शिक्षकों का व्यवहार मित्रवत एवं आदर्शयुक्त होना चाहिए।

8. शिक्षण पद्धति प्रभावकारी होनी चाहिए जिससे बालकों का ध्यान शिक्षण प्रक्रिया में लगा रहे। अरूचिपूर्ण शिक्षण बालकों को पलायनवादी बना सकता है।

9. पाठ्यक्रम रोचक, सरल, बालक को प्रभावित करने वाले, जीवनोपयोगी एवं संतुलित होने चाहिए।

10. विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए और उन्हें इसमें प्रतिभाग करने के लिए प्रेरित करना चाहिए, जिससे उनका सर्वांगीण विकास हो सके।

11. इस प्रकार के बालकों के ऊपर विश्वास करके उन्हें उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य सौंपकर उनके अन्दर अनुशासन एवं निर्णय लेने की क्षमता का विकास किया जा सकता है।

12. विद्यालय में बालकों के लिए शैक्षिक निर्देशन के साथ–साथ व्यावसायिक निर्देशन की शिक्षा व्यवस्था करनी चाहिए।

13.10 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अन्दर विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला गया है। बालक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक रूप से सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं। इस भिन्नता के कारण विशिष्ट बालकों की श्रेणी के अन्तर्गत मानसिक दृष्टि से मन्द बृद्धि बालक पाये जाते हैं। प्रतिभाशाली बालकों की विवेचना बुद्धि लब्धि के आधार पर की जाती है। जिन बालकों की आई. क्यू. 130 के ऊपर होती है, प्रतिभाशाली बालकों की श्रेणी में आते हैं जबकि 70 से नीचे की आई. क्यू. वाले बालक मन्द बुद्धि की श्रेणी में आते हैं। मानसिक मन्दता का आधार, आई. क्यू. की न्यूनता मानसिक बीमारियों के कारण भी होती है। पिछड़े बालकों की शैक्षिक प्रगति सामान्य बालकों की अपेक्षा कम होती है। इसके अन्तर्गत सामान्य बुद्धिलब्धि. वाले बालक भी आते हैं। इनके पिछड़ेपन का आधार बुद्धिलब्धि नहीं है बल्कि शारीरिक, मानसिक योग्यता है जो जन्म के उपरान्त दुर्घटना, बीमारी, पारिवारिक कलह, दूषित वातावरण, अशिक्षा, उचित मार्गदर्शन के अभाव के कारण शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन में परिणित हो जाती है। शारीरिक विकलांग बालक वे बालक हैं जो शारीरिक दृष्टि से सामान्य बालकों के समान कार्य नहीं कर सकते। इनमें अनेकों प्रकार की शारीरिक अयोग्यताएं पायी गयी हैं। अपंग, लूले–लंगड़े, चक्षु–विकलांग एवं वाणी–दोष वाले

बालक इस श्रेणी में आते हैं। इनकी यह विकलांगता जन्मजात एवं जन्म के उपरान्त बीमारी, दुर्घटना आदि के द्वारा घटित होती हैं। समस्यात्मक बालक कक्षा में समस्या उत्पन्न कर पठन–पाठन के कार्य को प्रभावित करते हैं। ऐसे बालकों में सहानुभूति न मिल पाने के कारण चोरी करने, झूठ बोलने, अनुचित आचरण, पलायन–वादिता, कक्षा में अनुपस्थित, अपराधी प्रवृत्ति के अवगुण विद्यमान हो जाते हैं। सभी प्रकार के विशिष्ट बालकों की शिक्षा के लिए सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक विकास से सम्बन्धित विशेष शिक्षा की आवश्यकता होती है। जिसे विशिष्ट बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए विशेष कक्षा में प्रशिक्षित अध्यापकों के द्वारा उचित पाठ्यक्रम और शिक्षण प्रविधियों के प्रयोग द्वारा शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। विशिष्ट बालक भी प्रतिभा के धनी होते हैं, लेकिन उनकी योग्यता का सदुपयोग नहीं हो पाता है।

13.11 अभ्यास के प्रश्न

1. विशिष्ट बालक के अर्थ को लिखिए। प्रतिभाशाली बालकों की विशेषताओं एवं पहचान के लक्षणों का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. मन्द बुद्धि बालकों की विशेषताओं एवं पहचान के लक्षणों का वर्णन कीजिए।
3. पिछड़े बालकों को परिभाषित कीजिए तथा उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. विकलांग बालक किसे कहते हैं? विकलांग बालकों के दिए गये शैक्षिक व्यवस्था का सविस्तार वर्णन कीजिए।
5. समस्यात्मक बालकों की विशेषताओं एवं उनके लिए प्रयुक्त शैक्षिक व्यवस्था का वर्णन कीजिए।

13.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. बिस्ट, आभारानी (2006) : विशिष्ट बालक, विनोद पुस्तक भवन, आगरा।
2. पाण्डेय, राम शकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
3. भार्गव, महेश (1993) : विशिष्ट बालक, मार्डन प्रिन्टर्स, आगरा।
4. सिंह, बी.बी. एवं ग्वाड़ी, एम.सी. (1990) : विशिष्ट शिक्षा, वैशाली प्रकाशन।
5. सारस्वत, मालती (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन, लखनऊ।

6. सिंह, कर्ण (2008–2009) : अधिगमकर्ता के विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, गोविन्द प्रकाशन, लखीमपुर खीरी।

7. सिंह, अरुण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी0बी0 प्रिन्टर्स, पटना।

13.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. विशिष्ट बालकों से तात्पर्य उस बालक से होता है जो मानव विकास के विभिन्न पक्षों शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक दृष्टि से सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं, जिन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

2. विशिष्ट बालक के प्रकार निम्नांकित हैं –

   (क) शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालक

   (ख) शारीरिक रूप से विशिष्ट बालक

   (ग) मानसिक रूप से विशिष्ट बालक

   (घ) सामाजिक रूप से विशिष्ट बालक

3. प्रतिभाशाली बालक शारीरिक गठन, सामाजिक समायोजन व्यक्तित्व के लक्षणों, विद्यालय उपलब्धि, खेल की सूचनाओं और रूचियों की बहुरूपता में सामान्य बालकों से अधिक श्रेष्ठ होते हैं।

4. बुद्धि लब्धि के आधार पर पहचानना उत्तम माध्यम है।

5. मानसिक रूप से मन्द बुद्धि बालकों का सांवेगिक विकास बहुत कम होता है। इस प्रकार के बालक शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े होते हैं।

6. पिछड़ा बालक वह बालक है जो शैक्षिक स्तर के स्थान निर्धारण में एक से दो वर्ष मंदित है।

7. ''एक व्यक्ति जिसमें कोई इस प्रकार का शारीरिक दोष होता है जो किसी भी रूप में उसे सामान्य क्रियाओं में भाग लेने से रोकता है, या उसे सीमित रखता है, उसको हम विकलांग व्यक्ति कह सकते हैं।''

8. (क) इनके व्यवहार में असमान्यता पायी जाती है।

   (ख) समस्या कोई जन्मजात गुण नहीं है यह परिस्थितियों के अनुसार अर्जित की जाती है।

इकाई – 14 मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान तथा समायोजन

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मानसिक स्वास्थ्य

14.3.1 मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ

14.3.2 मानसिक स्वास्थ्य की परिभाषाएँ

14.4 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान

14.4.1 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ

14.4.2 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की परिभाषाएँ

14.5 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के उद्देश्य

14.6 अच्छे मानसिक स्वास्थ्य की विशेषताएँ

14.7 मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

14.7.1 मानसिक स्वास्थ्य पर आनुवांशिकी का प्रभाव

14.7.2 शारीरिक स्वास्थ्य का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

14.7.3 पारिवारिक वातावरण का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

14.7.4 सामाजिक परिवेश का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

14.7.5 विद्यालय के वातावरण का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

14.7.6 शारीरिक निःशक्तता का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

14.8 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने हेतु उपाय

14.8.1 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में परिवार की भूमिका

14.8.2 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में विद्यालय की भूमिका

14.8.3 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में समाज की भूमिका

14.9 समायोजन

14.9.1 समायोजन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

14.9.2 कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ
14.10 समायोजन के प्रकार
14.11 व्यक्ति के समायोजन को प्रभावित करने वाले बॉधक तत्व
14.12 कुसमायोजन को दूर करने के उपाय
14.13 सारांश
14.14 अभ्यास कार्य
14.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें
14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.1 प्रस्तावना

आज मानव अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए माननीय संसाधनों का अन्धा–धुन्ध उपयोग तेजी के साथ कर रहा है। स्वस्थ शरीर के लिए पर्यावरण का शुद्ध होना अति आवश्यक है परन्तु आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में सम्पूर्ण वातावरण प्रदूषित होता जा रहा है। संसार में मनुष्य को स्वस्थ्य रहने के लिए रोटी, कपड़ा और मकान चाहिए और ये सभी वस्तुएँ पर्यावरण के माध्यम से ही सुलभ होती हैं। मनुष्य अपनी सुख सुविधा के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता है जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव व्यक्ति के स्वास्थ्य पर पड़ता है। यदि मनुष्य शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ होगा तो उसका मानसिक स्वास्थ्य भी उत्तम होगा। व्यक्ति को अपने सर्वांगीण विकास के लिए शारीरिक स्वास्थ्य के साथ–साथ मानसिक स्वास्थ्य पर भी अधिक ध्यान देना चाहिए। शारीरिक स्वास्थ्य का प्रभाव मानसिक स्वास्थ्य को और मानसिक स्वास्थ्य का प्रभाव शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। यदि व्यक्ति शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ्य होगें तो उनके व्यक्तित्व का सर्वोत्तम विकास होता है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति को शारीरिक एवं मानसिक रूप से अपने को स्वस्थ्य बनाये रखने के लिए उचित सुझाव एवं मार्ग दर्शन प्राप्त होता है। शिक्षा प्रक्रिया का सीधा सम्बन्ध बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा नैतिक विकास से है। व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा कैसे हो सकता है, इसके लिए मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान उपयोगी व सार्थक खोज करते रहते हैं। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अन्तर्गत मानसिक रोगों की रोकथाम के लिए क्या–क्या उपाय अपनाये जाने चाहिए उसे इंगित करता है। शरीर को स्वस्थ्य रखने का अभिप्राय केवल शारीरिक रोगों से ही मुक्ति मात्र नहीं है बल्कि उसके साथ उनका मानसिक दृष्टि से निरोगी होना भी जरूरी है। षिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करने का अपना एक महत्व है। किसी भी शिक्षण अधिगम प्रणाली

को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षक तथा छात्र को मानसिक रूप से स्वस्थ्य होना चाहिए। इस इकाई के द्वारा हम बालक के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों एवं किस प्रकार बालकों को मानसिक रूप से स्वस्थ्य बनाये रखा जा सकता हैं। बालक जब शारीरिक और मानसिक रूप से अस्वस्थ होते हैं तब उनका समायोजन पर्यावरण के साथ नहीं हो पाता है। अनेंक प्रकार की बिमारियों एवं उलझनों के कारण भी व्यक्ति अपने को किसी भी कार्य में समायोजित नहीं कर पाते हैं और इससे उनका स्वाभाविक विकास अवरूद्ध होता है। प्रस्तुत इकाई में मानसिक स्वास्थ्य के साथ–साथ समायोजन के अर्थ, प्रकार उसको प्रभावित करने वाले बाधक घटक तथाा बालकों के अन्दर से कुसमायोजन को कैसे दूर किया जा सकता है। इसका विस्तृत विवेचन करेंगे।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

- मानसिक स्वास्थ्य एवं मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अर्थ को समझ सकेंगे।
- मानसिक स्वास्थ्य की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
- अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के लक्षणों से अवगत हो सकेंगे,
- मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों के विशय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- मानसिक स्वास्थ्य को उत्तम बनाने वाले उपायों से लोगों को परिचित करा सकेंगे।
- समायोजन के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगें।
- समायोजन को प्रभावित करने वाले कारणों से अवगत हो सकेंगे।
- कुसमायोजन को दूर करने के उपाय से परिचित हो सकेंगे।

14.3 मानसिक स्वास्थ्य

14.3.1 मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ

बालक का व्यवहार शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य के कारण प्रभावित होता रहता है। स्वास्थ्य से अभिप्राय केवल शारीरिक स्वास्थ्य से नहीं बल्कि शारीरिक के साथ–साथ मानसिक स्वास्थ्य से भी होता है। शरीर एवं मन जब

समन्वित रूप से बिना किसी रूकावट के कार्य करते है तब हम कह सकते हैं कि अमुख व्यक्ति पूर्णतया स्वस्थ्य है।

अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के द्वारा व्यक्ति जीवन के सभी क्षेत्रों जैसे – सांवेगिक, सामाजिक, एवं शैक्षिक पक्षों में बड़ी ही आसानी के साथ समायोजन कर लेता हैं। मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति अपनी सभी प्रकार की इच्छाओं, आवश्यकताओं, अभिलाशाओं, शीलगुणों आदि के मध्य कुशल समायोजित व्यवहार करने में सक्षम होते हैं।

14.3.2 मानसिक स्वास्थ्य की परिभाषाएँ

लैंडल के अनुसार – "मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य है – वास्तविकता के धरातल पर वातावरण से पर्याप्त सामंजस्य करने की योग्यता।"

"Mental health means the ability to make adequate adjustment to the environment on the plane of reality." **-Ledell**

स्ट्रेंज के अनुसार – "मानसिक स्वास्थ्य एक ऐसे सीखे गये व्यवहार के वर्णन के अलावा कुछ नहीं है, जो सामाजिक रूप से समायोजी होता है और जो व्यक्ति को जिन्दगी के साथ पर्याप्त रूप से अनुकूलन में मदद करता है।"

"Mental health is no more than a description of learned behavior that is a socially adaptive and allows the persons to cope adequately with life." **- Strange**

हैडफील्ड के अनुसार – "सामान्य भाषा में हम कह सकते हैं कि मानसिक स्वास्थ्य सम्पूर्णव्यक्तित्व की समन्वित क्रियाशीलता है।"

"In general terms we may say that mental health is the harmonious functioning of the whole personality."

-Headfield

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. मानसिक स्वास्थ्य को परिभाषित कीजिए।

____

____

14.4 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान

14.4.1 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान को मानसिक आरोग्य विज्ञान के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। **सी.डब्लू.बीमर्स** को मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान प्रारम्भ करने का श्रेय प्राप्त है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का आशय मन को स्वस्थ्य रखने वाले विज्ञान से है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अन्तर्गत मन को स्वस्थ्य तथा निरोगी बनाये रखने के नियमों व उपायों का अध्ययन किया जाता है। मन के स्वस्थ्य रहने से व्यक्ति के व्यक्तित्व का संतुलित विकास होता है और व्यक्ति जीवन में कठिन से कठिन परिस्थिति में भी अपने को समायोजित कर लेते हैं।

14.4.2 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की परिभाषाएँ

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए मनोवैज्ञानिकों द्वारा कई परिभाषाएँ दी गई, उनमें से कुछ प्रमुख महत्वपूर्ण परिभाषाओं को नीचे वर्णित किया जा रहा है –

हैडफील्ड के अनुसार – "मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का सम्बन्ध मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा और मानसिक असंतुलन को रोकने से है।"

"Mental hygiene is concerned with the maintenance of mental health and the prevention of mental disorders."

- Headfield

लैण्डिस तथा बोल्स (1950) के अनुसार – "मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान मानसिक स्वास्थ्य की रोकथाम या आरोग्य अथवा दोनों के उपायों का क्रमबद्ध प्रयोग है।"

"Mental hygiene is the systematic practice of measures for the prevention and/or restoration of mental health."

- Landis and Bolls

ड्रेवर के अनुसार – "मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ है – मानसिक स्वास्थ्य के नियमों की खोज करना और उनको संरक्षित करने के उपाय करना।"

"Mental hygiene means investigating of the laws of mental health and taking measures for its preservations."

- Drever

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के परिभाषाओं के आधार पर निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं –

- मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान को कार्यक्रम की संज्ञा दी जाती है।
- मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अन्तर्गत मानसिक रोग एवं रोगियों के रोगों के आधार पर उन्हें पहचान कर उसे दूर करने के उपाय बताये जाते हैं।
- मानसिक स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए किस प्रकार के वातावरण में अपने को समायोजित करना चाहिए इसके बारे में व्यक्ति को जागरूक किया जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

2. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की किसी एक परिभाषा को लिखिए।

____

____

____

14.5 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के उद्देश्य

मानसिक स्वास्थ्य क्या है ? मानसिक स्वास्थ्य कैसे प्रभावित होता है ? तथा इसे कैसे उन्नत बनाया जा सकता है ? इसकी जानकारी प्राप्त कर लेने के पश्चात इनके उद्देश्यों के अनुसार कार्यों को किया जाता है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य करने पड़ते हैं।

1. मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा एवं सुरक्षा के लिए उपाय करना।
2. मानसिक बीमारियों एवं व्याधियों को रोकने के लिए प्रयत्नशील रहना।
3. मानसिक रोगों को पहचान कर उनके लिए उपयुक्त उपचार की व्यवस्था करना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के दो उद्देश्यों को लिखिए।

____

____

____

14.6 अच्छे मानसिक स्वास्थ्य की विशेषताएँ

मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति के अन्दर कौन–कौन सी विशेषताएँ पायी जाती हैं, उसका वर्णन निम्नवत किया जा रहा है।

1. **अनुशासन** – अनुशासन के द्वारा व्यक्ति स्वयं को मानसिक रूप से स्वस्थ्य बना सकता है। व्यक्ति को अपने जीवन में कब खाना है, कब पढ़ना है, कब सोना है, कब मनोरंजन करना है इत्यादि के लिए एक निश्चित समय का निर्धारण करना चाहिए। समयबद्ध ढ़ंग से कार्य करने वाला व्यक्ति निरोगी होता है तथा ऐसा करने से वह शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ्य होगा। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है तथा यह अनुशासन के द्वारा ही सम्भव है।

2. **समायोजन की योग्यता –** मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपने बुद्धि एवं विवेक से किसी भी विपरीत परिस्थिति में अपने को समायोजित कर अपने लक्ष्य तक आसानी से पहुँच सकते हैं।

3. **संवेगों पर नियंत्रण –** मानसिक रूप स्वस्थ्य व्यक्ति ही संवेगों पर नियंत्रण रखकर किसी कार्य को बुद्धिमतापूर्ण ढ़ंग से निस्तारित कर सकते हैं। इस प्रकार के गुणों के कारण व्यक्ति डर, क्रोध, प्रेम, ईर्ष्या, घृणा इत्यादि संवेगों से प्रभावित नहीं होते हैं और अपने कार्य को बिना किसी बाँधा के आसानी से पूर्ण कर लेते हैं।

4. **आत्म विश्वासी –** मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति विषम परिस्थिति में भी अपना धैर्य नहीं छोड़ते हैं। आत्मविश्वासी होने के कारण वे कठिन से कठिन कार्य को संयम के साथ सफलता पूर्वक ढ़ंग से सम्पन्न कर लेते हैं।

5. स्व–मूल्यांकन करने की प्रवृत्ति – मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति के अन्दर अच्छे व बुरे में अन्तर करने की क्षमता का उचित विकास होता है। वे स्वयं अपनी मानसिक बुद्धि के द्वारा यह समझ लेते हैं कि कौन–सा कार्य उचित है और कौन–सा अनुचित। उन्हें अपनी कमियों एवं गलतियों को स्वीकार करने में जरा भी संकोच नहीं होता। गलत कार्यों को वे स्वयं सुधारने हेतु प्रयत्नशील होते हैं।

6. सहन करने की क्षमता का विकास – मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्तियों में किसी भी बात को सहन करने की क्षमता होती है। ये प्रतिरोधी नहीं होते बल्कि वे उत्साही व निडर होते हैं। वे अपने जीवन में उत्पन्न होने वाली बाधाओं का सामना बड़ी ही सहजता एवं सहनशीलता के साथ करते हैं। व्यक्ति के सहनशील स्वभाव के कारण वे विषम परिस्थिति में भी दुख का अनुभव नहीं करते और वे विषम परिस्थिति में भी अपना मानसिक संतुलन बनाये रखने में सक्षम होते हैं।

7. वास्तविकता से सामना – मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति किसी वस्तु एवं घटना का प्रत्यक्षीकरण वस्तुनिष्ठ ढंग से करते हैं। वे तथ्यों का प्रत्यक्षीकरण उसके मूल स्वरूप में ही करते हैं जिस रूप में वह वास्तविक एवं सत्य होती हैं।

8. शारीरिक स्वास्थ्य – मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति शारीरिक रूप से निरोगी, सुन्दर एवं आकर्षक होते हैं।

9. कार्य से सन्तोष की प्राप्ति – मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति अपने किसी भी कार्य को रूचिकर बनाकर हर्ष के साथ ध्यानपूर्वक ढ़ंग से सम्पन्न करता है। इस प्रकार के कार्यों को करने से उन्हें आत्म संतुष्टि एवं आनन्द की प्राप्ति होती है। ऐसे व्यक्ति अपने कार्यों के प्रति कर्तव्यनिष्ठ और ईमानदार होते हैं तथा अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन निष्ठापूर्वक करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. मानसिक स्वास्थ्य की दो विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

____

14.7 मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

मनुष्य आज के इस दूषित वातावरण में अनेक प्रकार की समस्याओं से ग्रसित रहता है। व्यक्ति अनेंक प्रकार की समस्याओं के कारण चिन्ता, अनिद्रा जैसी मानसिक बीमारियों से ग्रसित हो जाता है। व्यक्ति जब विषम परिस्थितियों में अपना उचित समायोजन नहीं कर पाता है तो ऐसी परिस्थिति में उसके मानसिक स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को अनेक हानिकारक तत्व प्रभावित करते हैं। इन कारकों के कारण व्यक्ति के समायोजन में अनेक प्रकार की बाधाएँ आती हैं और वे कुसमायोजित हो जाते हैं। मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों का वर्णन निम्नांकित है :–

14.7.1 मानसिक स्वास्थ्य पर अनुवंशिकी का प्रभाव

मानसिक विकास के गुण बालकों के अन्दर आनुवंशिकता के कारण अपने पूर्वजों से हस्तानान्तरित होता है। ऐसे बालक जिनमें वंशानुक्रम के कारण मानसिक अवरोध या व्याधियाँ पायी जाती हैं वे किसी भी परिस्थितिजन्य वातावरण में अपने को समायोजित नहीं कर पाते हैं। वातावरण के साथ समायोजन स्थापित न कर पाने के कारण उनके अन्दर मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

14.7.2 शारीरिक स्वास्थ्य का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

जब बच्चों की परवरिश ठीक ढ़ंग से नहीं हो पाती और उनके खान–पान की उचित व्यवस्था नही होती है तब ऐसी स्थिति में उनके अन्दर शारीरिक निर्बलता आ जाती है। शारीरिक निर्बलता के कारण बालकों का वातावरण के साथ समायोजन उचित ढ़ंग से स्थापित नहीं हो पाता। अतः बालकों के वातावरण के साथ अच्छे समायोजन के लिए बालक का शारीरिक स्वास्थ्य ठीक होना चाहिए ऐसा होने से बालक का मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा हो जायेगा।

14.7.3 पारिवारिक वातावरण का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

बालक का जन्म, पालन–पोषण, शिक्षा की व्यवस्था इत्यादि का प्रारम्भ परिवार से होता है। बालकों के विकास में परिवार के वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान है और वे बालक के विकास में विभिन्न अवस्थाओं को प्रभावित करते हैं। कुछ प्रमुख पारिवारिक कारकों का विवरण निम्नानुसार वर्णित किया जा रहा है।

1. पारिवारिक अनुशासन के अन्तर्गत जब बालक को उसकी प्रत्येक गलती के लिए डाँट–फटकार, पिटाई एवं उसके ऊपर बात–बात पर क्रोध प्रकट किया जाता है तो ऐसी परिस्थिति में बालकों के अन्दर आत्मग्लानि एवं विद्रोही प्रवृत्ति का विकास होता है जिससे उसका मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है और इसका उसके मानसिक स्वास्थ्य पर खराब असर पड़ता है।

2. यदि परिवार के सदस्यों के मध्य सौहार्दपूर्ण वातावरण नहीं होता और परिवार में कलेश होता है तो इस तनावपूर्ण वातावरण में बालक का समुचित विकास नहीं होता और बालक के मानसिक स्वास्थ्य पर इसका बुरा असर पड़ता है।

3. परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण बालक की इच्छाओं की पूर्ति जब माता–पिता नहीं कर पाते तो ऐसी स्थिति में बालक विद्रोही, चिन्तित, हीनता की भावना से ग्रसित होकर गलत तरीके से अपने इच्छा की पूर्ति करना चाहते हैं और इन कारणों से भी बालक के मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

4. उच्च आदर्श के कारण माता–पिता बालक की प्रत्येक गतिविधि पर टीका–टिप्पणी करते रहते हैं – 'तुम इस कार्य को न करो', 'यह कार्य हमारे स्तर के अनुरूप नहीं हैं, इत्यादि। परिवार के उच्च आदर्श के कारण बालक अपनी इच्छानुसार कार्य नहीं कर पाते जिसके कारण वे सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण में अपना समायोजन ठीक प्रकार से नहीं कर पाते। इस परिस्थिति के कारण बालकों के अन्दर सृजनात्मकता एवं आत्मविश्वास की कमी हो जाती है और वे हीनता की भावना से ग्रस्त हो जाते हैं। हीनता की भावना के कारण उनका मानसिक विकास प्रभावित होता है और उनके अन्दर स्नायु से सम्बन्धित बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती है।

5. जब बालकों कि इच्छाओं कि पूर्ति माता–पिता के द्वारा बहुत ही आसानी से कर दिया जाता हैं आसानी से इच्छा पूर्ति हो जाने के कारण बालक जब विपरीत परिस्थितियों में अपनी इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पाते हैं तो उनके अन्दर मानसिक द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और उनका मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित हो जाता है।

14.7.4 सामाजिक परिवेष का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

आस–पास, पास–पड़ोस एवं मित्रों की संगत इत्यादि का भी बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पडता है। जब बालक दूषित सामाजिक वातावरण में रहता है तो समाज की सभी अच्छी एवं बुरी आदतों को देखता व समझता है। इस प्रकार के व्यवहार का भी बालक के मानसिक स्वास्थ्य पर विपरीत असर पड़ता हैं। बालकों की तुलना ईश्वर से की जाती है। बालकों के अन्दर किसी भी प्रकार की बुराई न होने के

कारण वे बिना किसी कारण के सभी के साथ अच्छे व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं। आज हमारा समाज जाति–पाँति, ऊँच–नीच, क्षेत्रवाद, आतंकवाद, सम्पत्ति के कारण विवाद, चोरी, बेईमानी, झूठ बोलने जैसी कुरितियों से ग्रसित है जिसके कारण सामाजिक वातावरण दूषित हो गया है। जब बालक को इस प्रकार के वातावरण में अपने को समायोजित करना होता है तो वह अपने आप को बहुत ही दुविधा की स्थिति में पाता है जिसके कारण वह अपना समायोजन अच्छी प्रकार से नहीं कर पाता है और बालक के अन्दर तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ये सभी कारक बालक के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।

14.7.5 विद्यालय के वातावरण का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

विद्यालय भी बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। विद्यालय से सम्बन्धित मानसिक कारकों का वर्णन नीचे किया जा रहा है –

1. जब बालकों को विद्यालय में कठोर अनुशासन और नियमों में बांधने का प्रयास किया जाता है तब ऐसी स्थिति में बालक के अन्दर डर, क्रोध, भागने की प्रवृत्ति, द्वन्द्व, तनाव, अव्यावहारिकता इत्यादि की भावना विकसित होने लगती है। इन सब कारणों के द्वारा भी बालक का मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है।

2. विद्यालय में जब बालकों को उनकी रूचि एवं स्तर का पाठ्यक्रम पढ़ने के लिए उपलब्ध नही कराया जाता है तब ऐसी स्थिति में उनके अन्दर तनाव उत्पन्न हो जाता है और उनका मन अध्ययन में नही लगता है जिसके कारण बालक पढ़ाई में पीछे रह जाते हैं। इस प्रकार के तनाव की स्थिति भी बालक के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं।

3. बालकों को उपयुक्त शिक्षण विधि से शिक्षित न कर पाने के कारण शिक्षार्थी विषय वस्तु को समझ नही पातें जिसके कारण उनके अन्दर आत्मविश्वास की कमी हो जाती है और इसका उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

4. परीक्षा व्यवस्था एवं अयोग्य शिक्षकों के द्वारा उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन ठीक से न करने के कारण योग्य शिक्षार्थियों के साथ कभी–कभी अन्याय हो जाता है, इस कारण से भी बालकों का मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है।

5. आज के प्रतिस्पर्धात्मक दौर में शिक्षण संस्थाओं में तरह–तरह की शैक्षिक क्रियाएँ आयोजित कराई जाती हैं। इन प्रतियोगिताओं में प्रतिभाग करने वाले शिक्षार्थी जब असफल हो जाते है तब ऐसी स्थिति में वे प्रतियोगिता में सफल होने वाले अपने मित्रों से द्वेष, घृणा एवं ईर्ष्या रखने लगते हैं जिसके कारण कई प्रकार की अयोग्यताएँ

उनके अन्दर आ जाती हैं। इन अयोग्यताओं और कुरीतियों के कारण भी इनका मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है।

6. शिक्षकों के द्वारा कक्षा में पक्षपातपूर्ण व्यवहार के कारण भी छात्र हतोत्साहित होते हैं। अध्यापक का व्यवहार छात्रों को हर समय डाँटना, अध्यापन कार्यों का स्तरीय न होना तथा छात्रों के प्रति सकारात्मक व्यवहार न करने के कारण भी बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

14.7.6 शारीरिक निःशक्तता का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

बालकों के अन्दर कुछ जन्मजात तथा कुछ जन्म के बाद शारीरिक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती है। शारीरिक अक्षमता के कारण बालकों में हीनता का भाव उत्पन्न हो जाता है। हीनभावना से ग्रसित बालक परिस्थितियों के अनुकूल अपने को समायोजित करने में असमर्थ हो जाते हैं जिसके कारण उनके अन्दर तनाव, चिन्ता, थकान एवं मानसिक दुर्बलता उत्पन्न हो जाती है। ये कारक भी बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. अच्छे मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारकों को लिखिए।

____

____

____

____

14.8 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने हेतु उपाय

बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को निरोगी बनाने में परिवार, विद्यालय एवं समाज की प्रमुख भूमिका होती है। बालकों के मानसिक स्वास्थ्य पर परिवार, संस्कारों, अच्छी

विद्यालयीय व्यवस्था एवं सामन्जस्यपूर्ण वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है। मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने वाले कुछ सुझावों का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

14.8.1 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में परिवार की भूमिका

परिवार के प्रत्येक सदस्य की यह जिम्मेदारी है कि वे बालक के स्वास्थ्य के प्रति पूरी तरह से सजग रहे। बालक की आदत में यदि किसी भी प्रकार का बदलाव दिखाई दे तो तुरन्त उन कारणों की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। बालक के व्यवहार में हुए परिवर्तन का क्या कारण है उसका पता लगाकर समय रहते हुए उसका निराकरण करना चाहिए। बालकों के साथ दण्डात्मक व्यवहार नहीं अपनाना चाहिए और न ही उनके साथ भेद–भाव करना चाहिए। इसके साथ ही बालकों को आवश्यकता से अधिक लाड़–प्यार भी नहीं देना चाहिए। अधिक लाड़–प्यार देने से भी बालकों के अन्दर गलत प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती हैं। बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने हेतु परिवार का वातावरण शान्तिप्रिय होना चाहिए जिससे परिवार के सदस्यों के साथ बालक का स्वाभाविक समायोजन हो सके और वे अपना सांवेगिक विकास कर सकें।

14.8.2 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में विद्यालय की भूमिका

बालकों के सर्वांगीण विकास में विद्यालय एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के द्वारा ही बालक का सर्वोत्तम विकास सम्भव है। बालक के समुचित विकास, के लिए यह आवश्यक है कि विद्यालय का वातावरण शान्त, मनमोहक, आकर्षक एवं जीवनोपयोगी हो। विद्यालय के अन्दर छात्रों को शिक्षित करने वाले शिक्षक योग्य, सहानुभूतिपूर्ण एवं समान व्यवहार रखने वाले एवं सहयोगात्मक होने चाहिए। बालकों के लिए विद्यालय में पाठ्यसहयोगी क्रियाओं की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए। विद्यालय में छात्रों की रुचि, योग्यता, एवं उनके स्तर के अनुकूल ही पाठ्यक्रम का निर्माण होना चाहिए। शिक्षकों को उचित शिक्षण विधियों के द्वारा ही छात्रों को पढ़ाना चाहिए। विद्यालय में छात्रों को सीखने–सिखाने के लिए जब विद्यालय के सभी घटक अपना कार्य निष्ठापूर्वक एवं ईमानदारी के साथ करेंगे तभी बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाया जा सकता है।

14.8.3 मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में समाज की भूमिका

बालक एक सामाजिक प्राणी है। समाज में नित हो रहे कार्यों एवं परिवर्तनों का बालक के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। जब सामाजिक वातावरण स्वच्छ एवं अच्छा होगा तो बालक का मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा होगा। बालकों के मानसिक

स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में समाज महत्वपूर्ण कार्य कर सकता है। मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के लिए समाज द्वारा किये जाने वाले कार्यों का वर्णन निम्नांकित है—

1. बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के लिए है कि उन्हें स्वच्छ पर्यावरण, सुरक्षा की भावना एवं दोषमुक्त सामाजिक वातावरण उपलब्ध कराया जाय।

2. समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों जैसे – जाति–पाँति, ऊँच–नीच की भावना, धर्म आधारित युद्ध, झूठ, बेईमानी, दुराचार, अनाचार, गन्दी राजनीति, आतंकवाद, भयाक्रांत वातावरण को समाप्त करना होगा। समाजोपयोगी माहौल को उत्पन्न कर बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को अच्छा बनाया जा सकता है।

3. समाज के प्रत्येक नागरिक के अन्दर भाई–चारे की भावना, राष्ट्रीय अखण्डता, सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, सर्वधर्म समभाव, धर्म निरपेक्षता इत्यादि की भावना को जागृत करना होगा तथा स्वच्छ एवं शान्त सामाजिक वातावरण का निर्माण कर बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाया जा सकता है।

14.9 समायोजन

14.9.1 समायोजन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

समायोजन को अंग्रेजी भाषा में 'एडजस्टमेन्ट' कहते हैं। इसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के ऐड–जस्ट शब्द से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'सही की तरफ'। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि व्यक्ति को वातावरण के साथ सामंजस्य बनाये रखने के लिए परिस्थितिजन्य व्यवहार को सम्पादित करना समायोजन है। व्यक्ति जब इस जगत में जन्म लेता है तो, इस जगत में जीवन यापन करने के लिए उसकी कुछ आवश्यकताएँ एवं इच्छाएँ होती हैं। जब उसकी आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है तो उस परिस्थिति में वह अपने को वातावरण के साथ समायोजित करने में सफल हो जाता और ठीक इसके विपरीत यदि वह अपने को संयोजित नहीं कर पाता है तो वह कुण्ठा, चिन्ता, तनाव एवं अन्य व्याधियों से ग्रसित हो जाता है।

प्रत्येक व्यक्ति का अपने जीवन में कुछ न कुछ उद्देश्य होता है जो लक्ष्य केन्द्रित होता है। जब व्यक्ति अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है तो उसे आत्म संतुष्टि और सुख के अनुभव का बोध होता है आत्म संतुष्टि प्राप्त होने के कारण व्यक्ति उचित ढंग से वातावरण के साथ अपने को समायोजित करते हुए प्रगति के पथ पर अग्रसर हो जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि कोई बालक किसी प्रतियोगिता में भाग लेता है और उसमें प्रथम स्थान प्राप्त करता है तो उसे सुख का अनुभव होता है। चूँकि प्रथम

स्थान प्राप्त करना बालक का पूर्व निर्धारित लक्ष्य था जब वह उसमें सफल हो जाता है तो उसे आत्म संतुष्टि का बोध होता है। जबकि इसके विपरीत असफलता प्राप्त होने पर उसमें तरह–तरह के विकार उत्पन्न हो जाते हैं जिसके कारण उसका समायोजन अच्छी प्रकार से नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में बालक के अन्दर असमायोजन की प्रवृत्ति का विकास हो जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. समायोजन को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

____

14.9.2 कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ

गेट्स व अन्य के अनुसार :– "असमायोजन, व्यक्ति और उसके वातावरण में असन्तुलन का उल्लेख करता है।"

"Maladjustment refers to a disharmony between the person and his environment."
- Gates & Others

गेट्स व अन्य के अनुसार :– "समायोजन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने और अपने वातावरण के बीच संतुलित सम्बन्ध रखने के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तन करता है।"

"Adjustment is a continual process by which a person varies his behavior to produce a more harmonious relationship between himself and his environment."

- Gates & Others

एच. सी. स्मिथ के अनुसार :– "एक अच्छा समायोजन वह है जो यथार्थपूर्णता के साथ–साथ व्यक्ति को सन्तोष प्रदान करता है। अन्ततोगत्वा, यह व्यक्ति की

कुण्ठाओं, उसके तनावों एवं चिन्ताओं, जिन्हें उसे सहन करना पड़ता है; को न्यूनातिन्यून बना देता है।"

"A good adjustment is one which is both realistic and satisfying. At least in the long run, it reduces to a minimum the frustration, the tensions and anxieties which a person must endure."

- H. C. Smith

"समायोजन अपनी आवश्कताओं को पूरा करने तथा खिंचावों से निपटने के लिए व्यक्ति द्वारा किये प्रयासों का परिणाम है।"

"Adjustment is the outcome of the individual's effort to deal with stress and meet his needs."

- James C. Coleman

क्रो तथा क्रो के अनुसारः– "मानवीय अन्तर्नोद तथा अंतर्प्रेरणायें व्यक्ति को कुछ निश्चित लक्ष्यों एवं हितों की ओर उत्प्रेरित करती है। ऐसी दशा में फलीभूत वह व्यवहार जो व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए तुष्टिकरण होता है, समायोजन कहा जाता है।"

"Human drives and urges impel an individual toward the realization of definite interests and ideals. When the resulting behavior is satisfactory to the individual and society, there is said to be adjustment."

- Crow and Crow

बोरिंग तथा अन्य के अनुसार :– "समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीवित प्राणी अपनी आवश्यकताओं तथा इन आवश्यकताओं को संतुष्ट करने वाली परिस्थितियों के साथ संतुलन स्थापित करता है।"

"Adjustment is the process by which a living organism maintains a balance between his needs and the circumstances that influence the satisfaction of these needs."

- Boring and Others

14.10 समायोजन के प्रकार

समायोजन कई प्रकार के होते हैं उसमें से कुछ का वर्णन निम्नलिखित है–

1. रचनात्मक प्रकृति का समायोजन

जब व्यक्ति को दैनिक जीवन में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है एवं व्यक्ति कई प्रकार की उलझनों से ग्रसित होता है तब वह इसके समाधान के लिए कई स्तर से प्रयास करता है। व्यक्ति समस्या के सम्बन्ध में अपने स्तर से विचार करता है, एवं उसके समाधान के लिए व्यक्तिगत स्तर पर विवेकशील व्यक्तियों से सम्पर्क कर परामर्श प्राप्त करता है। परामर्श के द्वारा समस्या का उचित हल प्राप्त करने की कोशिश करता है। इस प्रकार के समायोजन की प्रवृत्ति को रचनात्मक प्रकृति का समायोजन कहते हैं।

2. विकल्प आधारित समायोजन

जब व्यक्ति समस्या के समाधान के लिए प्रयास करता है परन्तु उसे सफलता नही मिलती तब ऐसी स्थिति में वह समस्या के समाधान के लिए विकल्पों का चयन करके समस्या के समाधान हेतु कोशिश करता है। इस प्रकार व्यक्ति स्वयं के द्वारा समस्या का समाधान विकल्पों के आधार पर करके अपना समायोजन करता है।

3. मानसिक क्रियाएँ

कई प्रकार की समस्याओं एवं विकृतियों से बचने एवं परिस्थिति के अनुकूल अपने को समायोजित करने के लिए मानसिक क्रियाओं का प्रयोग करता है। इस प्रकार से समायोजन प्राप्त करने के लिए वह अनावश्यक इच्छाओं का दमन करता है।

4. आक्रामकता से सीधा बचाव

इसमें व्यक्ति समस्या के समाधान के लिए अनेकों प्रकार के प्रयास एवं तरीकों को अपनाता है। अतः हम कह सकते है यदि वह अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु किसी कार्य को पूरा नहीं कर पाता है तब ऐसी स्थिति में अत्यधिक क्रोधित होकर उग्र रूप धारण कर लेता है। उसके साथ ही वह किसी कार्य के प्रति निष्क्रिय होकर व्यवहार को प्रकट करता है। इस प्रकार की प्रतिक्रिया से वह समस्या के समाधान हेतु प्रयास करता है और उसके अनुकूल अपने को समायोजित करता है।

14.11 व्यक्ति के समायोजन को प्रभावित करने वाले बाधकतत्व

1. किसी व्यक्ति का उचित समायोजन व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है। जब बालक का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता है तो उसका समायोजन आस–पास के वातावरण से अच्छी

प्रकार से हो जाता है। वह अपने कार्य को बिना किसी बाधा के पूर्ण करता है एवं अपना उचित समायोजन प्रतिस्थापित कर लेता है। बालक का मानसिक स्वास्थ अच्छा न होने के कारण तो उसका शारीरिक संतुलन भी अच्छा नहीं होता और वह कार्य को पूर्ण न कर पाने के कारण कुसमायोजित हो जाता है।

2. जब व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए उन्मुख होता है और उसे कई प्रकार की सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक कारणों से उस कार्य को पूरा करने में अड़चने उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार की स्थिति से व्यक्ति के अन्दर संवेगात्मक तनाव के कारण कुण्ठा एवं भग्नाशा उत्पन्न हो जाती है जिसके कारण भी व्यक्ति का समायोजन नहीं हो पाता है।

3. जब व्यक्ति को परिवार में, कार्यालय में, समाज में अपनी इच्छा, रूचि एवं आवश्यकता के अनुसार कार्य करने का अवसर उपलब्ध नहीं हो पाता है तब ऐसी स्थिति में उनके मन मस्तिष्क में एक प्रकार का द्वन्द उत्पन्न हो जाता है। द्वन्द एवं संघर्ष की अवस्था में भी व्यक्ति का समायोजन नहीं हो पाता है।

4. व्यक्ति जब किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित होता है। परन्तु विभिन्न प्रकार की विषम परिस्थितियों के कारण जब व्यक्ति किसी कार्य को करने में अक्षम हो जाता है तब वह कभी—कभी अपनी नजरों में गिरकर अपमान बोध का अनुभव करता है। इस स्थिति के कारण व्यक्ति के अन्दर तनाव उत्पन्न हो जाता है एवं उसका संवेगात्मक संतुलन बिगड़ जाता है। ऐसी परिस्थितियाँ भी व्यक्ति की मनःस्थिति को खराब कर देती हैं और वे अपना समायोजन उचित ढ़ंग से नहीं कर पाते हैं।

5. शारीरिक रोग एवं शारीरिक निःशक्ता के कारण भी व्यक्ति के समायोजन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के व्याधियों के कारण व्यक्ति के अन्दर हीनता की भावना, आत्मग्लानि, चिन्ता, कुण्ठा, तनाव इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं जो व्यक्ति के समायोजन को असंतुलित कर देते हैं जिसके कारण भी उनका समायोजन उचित ढ़ंग से नहीं हो पाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. समायोजन को प्रभावित करने वाले किसी एक बाधक तत्व को लिखिए।

____

____

____

14.12 कुसमायोजन को दूर करने के उपाय

1. व्यक्तियों के सामने ऐसे वातावरण का सृजन किया जाये कि वे विपरीत परिस्थिति में भी अपना धैर्य न खोएं और आत्म विश्वास के साथ समस्याओं के समाधान के लिए तत्पर रहें।

2. किसी व्यक्ति में तनाव, कुण्ठा आदि के क्या कारण हैं इसकी जानकारी प्राप्त करके उसके निदान का उपाय किया जाना चाहिए। ऐसा करने से भी कुसमायोजन को रोका जा सकता है।

3. व्यक्तियों को बराबर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा उन्हें इस योग्य बनाना चाहिये कि विपरीत परिस्थितियों में भी वे अपनी धनात्मक क्षमताओं का पूरा प्रयोग कर समस्याओं का सामना कर सकें एवं उससे बाहर निकलकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें।

4. कुसमायोजित बालकों को उनकी रुचि के अनुसार कार्य देकर भी कुसमायोजन को रोका जा सकता है।

5. इस प्रकार के व्यक्तियों को भी काम करने के पूर्ण अवसर प्रदान किए जाने चाहिए जिससे वे अपने कार्य से संतुष्ट हो सकें । संतोष की प्राप्ति होने से भी कुसमायोजन को कम किया जा सकता है।

6. कुसमायोजित बालकों के लिए चरित्रगत एवं नैतिक शिक्षा की सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी – (क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गये उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. समायोजन को दूर करने के दो उपाय लिखिए।

14.13 सारांश

जब बालक का शरीर स्वस्थ्य होगा तो उसका मानसिक स्वास्थ्य भी अच्छा होगा। मानव सभ्यता का विकास जब से हुआ है तब से मानव दिन–प्रतिदिन विकास करता चला जा रहा है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति को मानसिक रोग से कैसे मुक्ति दिलाई जा सकती है इसका अध्ययन किया जाता है। इस इकाई में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान एवं मानसिक स्वास्थ्य के अर्थ एवं परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर मानसिक स्वास्थ्य के महत्व को अच्छी प्रकार से समझा जा सकता है। इस इकाई के अन्तर्गत ही अच्छे मानसिक स्वास्थ्य की विशेषताएँ उन्हें प्रभावित करने वाले कारकों, मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति में परिवार, विद्यालय एवं समाज की क्या भूमिका होनी चाहिए इसका विस्तृत वर्णन किया गया है।

बालकों को स्वस्थ एवं निरोगी बनाने के लिए बालकों के अन्दर अच्छी आदतों, व्यवहारों एवं उचित सामाजिक वातावरण का निर्माण होना चाहिए। समाज का वातावरण स्वच्छ एवं स्वस्थ होना चाहिए, विद्यालयों को बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को दृष्टिगत रखकर उचित शिक्षा कि व्यवस्था करनी चाहिए, बालकों के अध्ययन के लिए पाठ्यक्रम एवं शिक्षण प्रविधि रुचिकर और मौलिक ज्ञान पर आधारित होनी चाहिए। बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को अच्छा बनाये रखने के लिए परिवार, समाज तथा विद्यालय का वातावरण स्वच्छ एवं आकर्षक होना चाहिए जिससे छात्र उसके साथ अपना उचित समायोजन कर शिक्षा प्राप्त कर सकें। प्रत्येक व्यक्ति एक निश्चित उद्देश्य लेकर जीवन में आगे बढ़ने का प्रयास करता है। कभी–कभी बालक उद्देश्य में सफल हो जाता है तो उसका परिस्थिति के साथ अच्छा समायोजन हो जाता है। जब कि कभी–कभी उचित समायोजन न होने के कारण बालक कुसमायोजित हो जाते हैं। बालकों के अन्दर सौहार्दपूर्ण सामन्जस्य के लिए बालक के घर–परिवार का वातावरण, पास–पड़ोस का माहौल, विद्यालय का वातावरण, शिक्षक का आचरण इत्यादि का भी प्रभाव पड़ता है। बालकों को उचित शिक्षा व्यवस्था का प्रबन्ध करके उनके अन्दर किसी भी परिस्थिति में समायोजन करने की क्षमता का विकास किया जा सकता है।

14.14 अभ्यास कार्य

1. समायोजन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उनके विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
2. समायोजन के बाधक घटकों का वर्णन करते हुए उनके सुधार के उपाय बताइए।
3. मानसिक स्वास्थ्य एवं मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसकी कुछ प्रमुख परिभाषाओं को लिखिए।
4. अच्छे मानसिक स्वास्थ्य की विशेषताओं की विवेचना कीजिए।
5. मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों का सविस्तार वर्णन कीजिए।
6. मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के लिए कुछ प्रमुख सुझावों को लिखिए।
7. समायोजन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उनके विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
8. समायोजन के बाधक घटकों का वर्णन करते हुए उनके सुधार के उपाय बताइए।

14.15 उपयोगी पुस्तकें

Chauhan, S.S. (1988) : Advanced Educatonal Psychology, Vikas Publications, New Delhi.

Mathus, S.S. (1994) : Educatioal Psychology, Loyal Book Depot, Meerut.

गुप्ता, एस. पी. एवं गुप्ता अलका (2008) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

पाण्डेय, रामशकल (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो।

सिंह, अरूण कुमार (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, बी. बी. प्रिन्टर्स, पटना।

सिंह, आर.एन. (2001) : आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2।

सारस्वत, मालती (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन, लखनऊ।

सेवानी, अशोक एवं सिंह, उमा (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा–7

14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. **स्ट्रेंज के अनुसार** – "मानसिक स्वास्थ्य एक ऐसे सीखे गये व्यवहार के वर्णन के अलावा कुछ नहीं है जो सामाजिक रूप से समायोजी होता है और जो व्यक्ति को जिन्दगी के साथ पर्याप्त रूप से अनुकूलन में मदद करता है।"

2. **लैण्डिस तथा बोल्स (1950) के अनुसार** – "मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान मानसिक स्वास्थ्य की रोकथाम या अरोग्य अथवा दोनों के उपायों का क्रमबद्ध प्रयोग है।"

3. 1) मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा एवं सुरक्षा करने के लिए उपाय करना।
   2) मानसिक बीमारियों एवं व्याधियों की रोकथाम के लिए प्रयत्नशील रहना।

4. 1) **समायोजन की की योग्यता** – मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपने बुद्धि एवं विवेक से किसी भी विपरीत परिस्थिति में अपने को समायोजित कर अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं।
   2) **आत्म विश्वासी** – मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति विषम परिस्थिति में भी अपना धैर्य नहीं छोड़ते हैं। आत्मविश्वासी होने के कारण कठिन से कठिन कार्य को संयम के साथ सफलता पूर्वक पूर्ण कर लेते हैं।
   3) **शारीरिक स्वास्थ्य** – मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति वे शारीरिक रूप से निरोगी, सुन्दर एवं आकर्षक होते हैं।

5. मानसिक विकास के गुण बालकों के अन्दर आनुवंशिकता के कारण अपने पूर्वजों से हस्तानान्तरित होता है। ऐसे बालक जिनमें वंशानुक्रमक के कारण मानसिक अवरोध या व्याधियाँ पायी जाती हैं वे किसी भी परिस्थितिजन्य वातावरण में अपने को समायोजित नहीं कर पाते हैं। वातावरण के साथ समायोजन स्थापित न कर पाने के कारण उनके अन्दर मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

6. गेट्स व अन्य के अनुसार – "समायोजन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने और अपने वातावरण के बीच संतुलित सम्बन्ध रखने के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तन करता है।"

7. जब व्यक्ति को परिवार में, कार्यालय में, समाज में अपनी इच्छा, रूचि एवं आवश्यकता के अनुसार कार्य करने का अवसर उपलब्ध नहीं हो पाता है तब ऐसी स्थिति में उनके मन मस्तिष्क में एक प्रकार का द्वन्द उत्पन्न हो जाता है। द्वन्द एवं संघर्ष की स्थिति में भी व्यक्ति का समायोजन नहीं हो पाता है।

8. (i) कुसमायोजित बालकों को उनकी रूचि के अनुसार कार्य को देकर कुसमायोजन को रोका जा सकता है।

(ii) कुसमायोजित बालकों को चरित्रगत एवं नैतिक शिक्षा देकर इसे रोका जा सकता है।

इकाई – 15 समूह मनोविज्ञान

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 समूह
15.3.1 समूह का अर्थ
15.3.2 समूह की परिभाषाएँ
15.4 समूह की विशेषताएँ
15.5 समूह के प्रकार
15.5.1 प्राथमिक समूह
15.5.2 द्वितीय समूह
15.6 समूह गतिशीलता
15.7 सामाजिक अन्तःक्रिया
15.8 समूह मनोविज्ञान का शिक्षा में महत्व
15.9 सारांश
15.10 अभ्यास के प्रश्न
15.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें
15.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.1 प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन समाज के मध्य व्यतीत होता है। समाज के मध्य रहने से ही समाजिकता के गुण व्यक्तियों के अन्दर विकसित होते हैं। समाज में रहने के कारण व्यक्ति को वहाँ के रीति–रिवाजों, मान्यताओं, संस्कारों एवं परम्पराओं को मानना पड़ता है और ऐसा न करने वाले व्यक्ति को समाजिक मान्यताएं प्राप्त नहीं होती हैं और वे असामाजिक माने जाते हैं। मानव सम्यता के विकास के साथ ही मनुष्य सामाजिक बन्धनों के अनुसार ही अपने क्रियाकलापों को संचालित करता है। मनुष्य समाज में समूह में रहकर ही अपने जीवन से जुड़ी सभी

आवश्यकताओं एवं समस्याओं को आपसी सहयोग एवं भाई चारा के माध्यम से पूर्ण करता है। समाजिक प्राणी के अन्दर सहानुभूति, निर्देश, सुझाव और अनुकरण जैसे शब्द के द्वारा ही व्यक्ति में सामुदायिक प्रभाव उत्पन्न किए जा सकते हैं। व्यक्तियों के छोटे–छोटे ''समूह मिलकर'' एक दीर्घ समूह बनाते हैं और इन्ही दीर्घ समूहों के द्वारा समाज का निर्माण होता है। मनुष्य एवं समाज के बीच सम्बन्ध स्थापित होने की अवस्था को समाजीकरण कहते हैं। व्यक्ति के समूह में रहने के कारण ही उनके अन्दर सामूहिक आदतों का विकास हो जाता है, जो समूह के सदस्यों के व्यवहार को संचालित व निर्देशित करती हैं। शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यवहार के साथ ही साथ अब समूह के व्यवहार का भी अध्ययन किया जाता है। इस दृष्टि से शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षा के अन्तर्गत समूह मनोविज्ञान के महत्व एवं आवश्यकताओं को दृष्टिगत् रखते हुए यह सुझाव दिया कि शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत समूह मनोविज्ञान का अध्ययन किया जाना भी आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत समूह मनोविज्ञान के अर्थ, प्रकार, समूह की विशेषताओं एवं समूह गतिकी के विषय में विस्तृत चर्चा की गई है।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

- समूह मनोविज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसे परिभाषित कर सकेंगे।
- समूह मनोविज्ञान को कितने प्रकारों में बॉटा जा सकता है उससे अवगत हो सकेंगे।
- समूह मनोविज्ञान की विशेषताओं की विवेचना कर सकेंगे।
- सामाजिक गतिशीलता के प्रत्यय को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षा में समूह मनोविज्ञान के महत्व को वर्णित कर सकेंगे।

15.3 समूह

15.3.1 समूह का अर्थ

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य के अन्दर हमेशा समूह में रहने की आदत का विकास होता है। मनुष्य अपने सभी कार्य सामाजिक वरिष्ठ लोगों के सुझाव के आधार पर ही सम्पादित एवं निस्तारित करते हैं। समाज में रहने वाले सभी व्यक्तियों को समाज की सहायता लेनी पड़ती है एवं उनके

द्वारा बनाए गये नियमों पर चलने के लिए अभिप्रेरित करती है। व्यक्ति समाज के द्वारा बनायी गयी मान्यताओं की अनदेखी करके किसी कार्य को आसानी से सम्पादित नहीं कर पाता और यदि ऐसा करता है तो उसे सामाजिक अपराध का बोध होता है। व्यक्ति समूह में सब कुछ भूल कर सामूहिक व्यक्तित्व को स्वीकार कर लेता है तथा समूह की इच्छा के अनुसार ही कार्य करता है। समूह समाज का एक अंग होता है।

15.3.2 समूह की परिभाषाएँ

समूह के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कुछ विद्वानों ने निम्नलिखित परिभाषाएं दी है :–

आगबर्न व निमकाफ के अनुसार – ''जब कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति, एकत्रित हो जाते हैं एवं एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं तो वे एक सामाजिक समूह का निर्माण करते है।''

"Whenever two or more individuals come together and influence one another, they may be said to constitute a social group"

-Ogburn and nimkoff

पी जिसबर्ट के अनुसार – '' एक सामाजिक समूह व्यक्तियों का वह समूह है जो मान्यता प्राप्त संरचना के अधीन क्रिया – प्रतिक्रिया करता है।

"A Social group is the collection by individuals interacting on each other under a recognizable structure."

-Gisburt P.

(Fundamental of Sociology, P-19)

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार – ''समूह से तात्पर्य व्यक्ति के किसी जमाव/संग्रह से है, जो परस्पर एक दूसरे से सामाजिक सम्बन्ध बनाते हैं।''

"By group we mean a collection of human beings who are brought into social relations with one another."

Maciver and Page

15.4 समूह की विशेषताएँ

समूह की विशेषताऍं निम्नवत है –

1. समूह में कार्य करने वाले सभी व्यक्तियों के उद्‌देश्य एवं कार्य एक समान होते हैं। इन उद्‌देश्यों की प्राप्ति के लिए सभी व्यक्ति सौहार्दपूर्ण वातावरण में एक साथ मिलकर किसी कार्य को सम्पन्न करते हैं।
2. समूह में एक साथ कार्य करने के कारण उनके अन्दर भाई–चारे की भावना, सहयोग एवं एकता का भाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।
3. समूह के अन्दर व्यक्ति किसी कार्य के प्रति जागरूक होकर बड़ी ही तन्मयता एवं तत्परता के साथ किसी कार्य को पूर्ण करते हैं। समूह में व्यक्ति एक निश्चित उद्देश्य एवं लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अकेले नहीं अपितु समूह में कार्य करने के लिए कदम से कदम मिलाकर कार्य करते हैं।
4. समूह के सदस्यों में 'मैं' की भावना नहीं होती है बल्कि वे 'हम' की भावना से किसी कार्य को करने के लिए आगे बढ़ते हैं। इसी भावना से उत्साहित होकर वे एक – दूसरे की सहायता के लिए तत्पर रहते हैं। 'हम' की भावना के कारण समूह में सदस्यों के मध्य घनिष्ट सम्बन्ध होते हैं। घनिष्टता को बनाए रखने के लिए वे आपस में मिलजुल कर कार्य करते हैं।
5. समूह के सदस्यों में एक दूसरे के प्रति आदर–सम्मान की भावना होती है और वे समर्पण के भाव से कार्य करते हैं। वे समूह के सम्मान व प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए तथा अपने कार्य को सफल एवं सर्वमान्य करने के लिए दृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा पूर्ण करने के लिए पूरे मनोयोग से समर्पित होते हैं।
6. समूह की कुछ मान्यताएँ, नियम, मूल्य एवं आदर्श होते हैं जिनका पालन समूह के सभी सदस्यों को करना होता है।
7. समूह के सदस्य सामूहिक रूप से रहने के कारण एक ऐसी शक्ति का अनुभव करते हैं, जिसके प्रभाव से वे कोई कार्य करने को तत्पर रहते हैं।
8. समूह के सदस्य के मध्य एक साथ कार्य करने के कारण परिवार जैसे रिस्ते बन जाते हैं जिसके कारण वे एक–दूसरे के प्रति भावुक होते हैं। भावुकता के विकास के कारण वे तर्क एवं आलोचना को अधिक महत्व नहीं देते हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1. समूह को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

2. समूह की विशेषताओं को लिखिए।

____

____

____

15.5 समूह के प्रकार

व्यक्ति किसी उद्देश्य की पूर्ति लक्ष्य की प्राप्ति एवं आदर्श गुणों की सुरक्षा के लिए एक समूह का निर्माण करते है। समूहों को संरचना के आधार पर दो भागों में वर्गीकृत किया गया हैं।

1. प्राथमिक समूह
2. द्वितीय समूह

15.5.1 प्राथमिक समूह

स्वाभाविक समूह प्राथमिक समूह के नाम से भी जाना जाता है। इस समूह में व्यक्ति को अनिवार्य रूप से सदस्य बनना पड़ता है। इसके प्रमुख उदाहरणों में परिवार, राष्ट्र, समाज एवं समुदाय आदि आते हैं।

15.5.2 द्वितीय समूह

कृत्रिम समूह को द्वितीय समूह की संख्या दी जाती है। इस समूह में व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार सदस्य बनने की छूट होती है। विद्यालय, क्लब, राजनैतिक दल, धार्मिक संस्थाएं एवं मनोरंजन सम्बन्धी संस्थाएं इस समूह के प्रमुख उदाहरण हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

3. समूह के दोनो प्रकारों के नाम लिखिए।

____

____

____

4. स्वाभाविक समूह के प्रमुख उदाहरणों के नाम लिखिए।

____

____

____

ड्रेवर के अनुसार मानसिक विकास के आधार पर समूह का विभाजन

मानसिक विकास पर आधारित समूहों की विशेषताएँ

प्रत्यक्षात्मक समूह	**विचारात्मक समूह**	**विवेकात्मक समूह**
1. ये व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियों पर निर्भर होता है।	1. विचारों की समानता इस समूह के आधार है।	1.यह उत्कृष्ट स्तर का समूह है।
2. इसके अन्तर्गत निम्न स्तर के समूह आते हैं। 3 भीड़ रूपी समूह इसके	2. इस समूह में स्थायित्व के गुण पाये जाते है। 3. प्रत्यक्षात्मक स्तर की	2. ये आदर्शों एव उद्देश्यों पर आधारित होते है। 3.समुदाय रूपी समूह
उदाहरण हैं।	तुलना में इस समूह का स्तर उच्च होता है।	इसके उदाहरण होते है।
	4.गोष्ठी रूपी समूह इसके उदाहरण है	

15.6 समूह गतिशीलता

मानव जीवन जन्म से मृत्यु तक क्रियाशील एवं गतिशील रहता है। मनुष्य अपनी जीवन काल में सदैव गतिशील एवं क्रियाशील होकर किसी कार्य को पूर्ण करते हैं। समूह समाज के अंग होते है। चूँकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसे समूह एवं समाज के मध्य ही अपनी समस्त क्रियाएँ करनी होती है। अतः हम कह सकते है कि व्यक्ति समूह अन्तः क्रिया निरन्तर चलती रहती है।

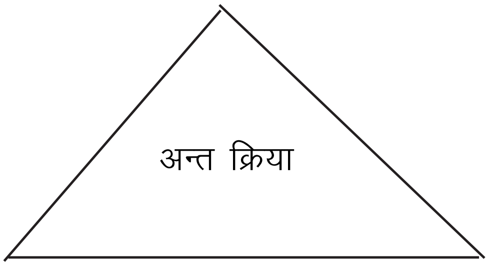

समूह की पहचान अपनी विशेषताओं के कारण होती है। मनुष्य अपने आवश्यकतानुसार उसकी संरचना, लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं कार्य प्रणाली में समय–समय पर परिवर्तन कर सकता है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया का प्रभाव समूह में पाये जाने वाले विभिन्न पक्षों की विशेषताओं पर पड़ता है। समूह में होने वाले परिवर्तन को ही गतिशीलता कहते हैं।

समूह गतिशीलता को जब विकेन्द्रित करते हैं तो उसमें गतिकी एवं समूह गतिकी क सम्प्रत्यय दिखाई देता है। गतिकी का अर्थ है– परिवर्तनशीलता। समूह के अन्दर अन्तःक्रियाओं के द्वारा व्यवहार में परिवर्तन।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

5. समूह गतिशीलता के सम्बन्ध में फिशर द्वारा वर्णित परिभाषा को लिखिए।

____

____

____

समूह गतिशीलता को विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर भी स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नवत है –

प्रो0 ट्रो के अनुसार समूह गतिविज्ञान की परिभाषा – ''समूह गति विज्ञान एक वैज्ञानिक अध्ययन है जो कि विभिन्न समूह सम्बन्धों में व्यक्ति के व्यव हार और विभिन्न आन्तरिक एवं बाह्य परिस्थितियों के अर्न्तगत समूह प्रक्रियाओं का कभी–कभी उनकी प्रभावकारिता को बढ़ाने के विचार से अध्ययन करता है।''

"Group dynamics is the Scientific study of the behaviour of individual in various group relationship under varying internal and external conditions, sometime with a view to improving their effectiveness."

-Prof. Trow

फिशर के अनुसार समूह गतिकी की परिभाषा – ''समूह गतिकी अध ययन का एक ऐसा क्षेत्र है उन बलों या दबावों पर प्रकाश डालता है जिनसे छोटे समूह में व्यक्तियों का व्यवहार प्रभावित होता है।''

"Group dynamics is area of study focusing on the social forces or pressures that affect the behavior of the individual in a small group."

Fisher (Social Psychology 1983, page 7)

15.7 सामाजिक अन्तःक्रिया

मनुष्य अपने दैनिक जीवन में नित नई क्रियाएँ करता रहता है। विभिन्न प्रकार की क्रियाओं के करने से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन होते रहते है। व्यक्ति की कार्य पद्वति एवं उसके व्यवहार में धनात्मक परिवर्तन ही उसे समाजिक बनाता है। समाज में रहने के कारण उसका सम्पर्क समाज के विभिन्न वर्गो से पड़ता है और वे उनके साथ सामज्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करते है। व्यक्ति अपने समाज के लोगों के व्यवहार से प्रभावित अपने व्यवहार से दूसरों को प्रभावित करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार समाज में वास करने वाला प्रत्येक सदस्य दूसरे व्यक्तियों की गतिविधियों एवं व्यवहार के सापेक्ष क्रिया और प्रतिक्रिया व्यक्त करता है इसे ही सामाजिक अन्तःक्रिया कहते है।

सामाजिक अन्तःक्रिया को मुख्य रूप से तीन भागों में बाँटा जा सकता है–

1. बालक तथा बालक के बीच अन्तःक्रिया
2. बालक तथा समूह के मध्य अन्तःक्रिया
3. समूह तथा समूह के मध्य अन्तःक्रिया

सामाजिक अन्तःक्रिया के पाँच आधार होते हैं। इन्हें हम सामाजिक प्रक्रिया के रूप में अभिव्यक्त करते हैं। सामाजिक अन्तःक्रिया के पाँच आधार निम्नलिखि त हैं –

1. सहयोग (सकारात्मक आधार)
2. प्रतिस्पर्धा (नकारात्मक आधार)
3. संघर्ष (नकारात्मक आधार)
4. व्यवस्था (सकारात्मक आधार)
5. आत्मसातीकरण (सकारात्मक आधार)

सहयोग, प्रतिस्पर्धा, व्यवस्था एवं आत्मसातीकरण जैसे गुण बालकों की शिक्षा व्यवस्था के लिए सकारात्मक आधार प्रस्तुत करते हैं। जबकि इसके विपरीत संघर्ष नकारात्मक पद्धति वाले आधार बालकों में विध्वसक प्रवृत्ति को बढ़ावा देते हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए

1. समूह अन्तक्रिया का कारात्मक आधार है–

(क) सहयोग

(ख) प्रतिस्पर्धा

(ग) संघर्ष

(घ) व्यवस्था

(ङ.) आत्मसातीकरण

15.8 समूह मनोविज्ञान का शिक्षा में महत्व

शिशु जन्म के उपरान्त समय अबोध एवं असहज होते है। ज्यों–ज्यों शिशु का शारीरिक विकास होता है उनके अन्दर परिवर्तन परिलक्षित होते है। शैशववस्था से वह बाल्यावस्था में प्रवेश करता है। शिशु से बालक बनने की अवस्था में उसके अन्दर शाारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक विकास गति अत्यन्त अधिक होती है। परिवार बालक का लघु समाज होता है। बालक परिवार में ही चलना और बोलना सीखता है। जहाँ से वह आगे बढ़ती हुई पास–पड़ोस में पहुँच जाती है। इसके पश्चात बालक विद्यालय जाने लगता है। बालक भी प्रथम शिक्षा प्रारम्भ होती है। बल्कि बालक बड़ा होकर लोगों के सम्पर्क में जाकर क्रिया एवं प्रतिक्रिया करने लगता है जिससे बालक के व्यवहार में परिवर्तन परिलक्षित होता है। सीखने के लिए सर्वप्रथम विद्यालय में जाता है। विद्यालय समाज का लघु रूप है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें कई व्यक्ति मिलकर अपना योगदान करते हैं। शिक्षा संस्थाओं में अनेक प्रकार के समूह पाये जाते है–

1. कक्षा समूह
2. खेल समूह
3. शिक्षण समूह
4. शिक्षार्थी समूह

बोध बोध बोध बोध बोध प्रश्न प्रश्न प्रश्न प्रश्न प्रश्न –

टिप्पणी (क) नीचे दिये हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर की तुलना इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

7. समूह गतिशीलता के सम्बन्ध में फिशर द्वारा वर्णित परिभाषा को लिखिए।

____

____

____

उपरोक्त चारों समूह शिक्षा व्यवस्था को सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित ढंग से आगे ले जाने के लिए अपने स्तर से प्रयास करते हैं। शिक्षा में समूह–मनोविज्ञान के महत्व को निम्नलिखित रूप में अभिव्यक्त किया जा सकता है।

1. समूह मनोविज्ञान के द्वारा बालकों का समाजीकरण कर उसमें सामाजिकता की भावना का विकास किया जा सकता है।
2. कक्षा समूह में छात्र प्रतिस्पर्धात्मक रूप से एक–दूसरे की उपलब्धियों को देखकर हमेशा बेहतर करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं।
3. छात्रों के द्वारा कक्षा समूह के साथ आपस में विचार–विमर्श करने से उनके अन्दर तर्क करने, निर्णय लेने, चिन्तन करने की प्रवृत्ति का विकास तीव्र गति से होता है।
4. बालकों के अन्दर त्याग करने की भावना का विकास समूह में एक साथ कार्य करने के कारण विकसित होती है।
5. कक्षा समूह में एक साथ कार्य करने से बालकों के अन्दर सहयोग की भावना का विकास होता है तथा वे व्यवहार कुशल हो जाते हैं।
6. कक्षा समूह में कार्य करने के कारण वे एक दूसरे के सुख–दुःख में हिस्सा लेते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण उनके अन्दर आत्मीयता एवं भाई–चारे के गुणों का विकास होता है।
7. समूह में रहने के कारण छात्र–छात्र के बीच में प्रतिस्पर्धा की भावना का विकास होता है। स्वच्छ प्रतिस्पर्धा के कारण उनके ज्ञान में वृद्धि होती है।
8. पाठ्य सहगामी क्रियाओं में प्रतिभाग करने से बालकों के अन्दर नेतृत्व के गुणों का विकास किया जा सकता है।

15.9 सारांश

मनुष्य एक समाजिक प्राणी है। प्रस्तुत इकाई में समूह मनोविज्ञान के अर्थ, विशेषताओं एवं प्रकारों को विवेचित किया गया है। समूह के द्वारा ही आवश्यकताओ की पूर्ति एवं उत्पत्ति होती है। कक्षा में छात्र एक दूसरें के साथ अन्त या करना समूह के माध्यम से ही सीखते है। समूह गतिकी का अध्ययन शिक्षार्थियों के लिए आवश्यक है जिससे वे समूह के महत्व इत्यादि को समझ सके। समूह गतिकी का अभिप्राय व्यक्ति का समूह में व्यवहार परिवर्तन से है। समाज में कुछ व्यक्ति इस प्रकार के होते है जो दूसरों के कार्यो की प्रशंसा नही करते अपितु अपने कार्य से दूसरों को अवश्य प्रभावित करते है। शिक्षा ही एक ऐसा सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा बालक का सामाजिक विकास किया जा सकता है। समूह मनोविज्ञान की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ही शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत समूह मनोविज्ञान की शिक्षा प्रदान करने की अनुंशसा

की गई। समूह में कार्य करने के कारण बालकों के व्यवहार में अप्रत्याशित परिवर्तन देखे जाते हैं।

15.10 अभ्यास के प्रश्न

1. समूह विज्ञान के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
2. समूह की विशेषताओं एवं प्रकारों का सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. समूह गतिशीलता को समझाइए।
4. सामाजिक अन्तःक्रिया की विवेचना कीजिए।
5. शिक्षा में समूह मनोंविज्ञान के महत्व की विवेचना कीजिए।

15.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Mathur S.S. (1994): Educational Psychology, Vikas Publication, New Delhi.

माथुर एस. एस. (2008) : शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।

सारस्वत, मालती (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन, लखनऊ।

15.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. समूह से तात्पर्य व्यक्ति के किसी जमाव संग्रह से है, जो परस्पर एक दूसरे से सामाजिक सम्बन्ध बनाते है।
2. (1) समूह के कार्य करने वाले सभी व्यक्तियों के उद्देश्यों एवं कार्य एक समान होते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सभी व्यक्ति सौहार्द पूर्ण वातावरण में एक साथ मिलकर किसी कार्य को सम्पन्न करते है।

   (2) समूह की कुछ मान्यताएँ, नियम, मूल्य एवं आदर्श होते है जिनका पालन समूह के सभी सदस्यों को करना होता है।
3. (1) स्वाभाविक समूह (2) कृत्रिम समूह
4. परिवार, राष्ट्र, समाज एवं समुदाय स्वाभाविक समूह के प्रमुख उदाहरण है।
5. ''समूह गति की अध्ययन का एक ऐसा क्षेत्र है जो उन बलों दबावों पर प्रकाश डालता है जिनसे छोटे समूह में व्यक्तियों का व्यवहार प्रभावित होता है।''
6. संघर्ष

7. (1) समूह मनोविज्ञान के द्वारा बालकों का समाजीकरण कर उसमें सामाजिकता की भावना का विकास किया जा सकता है।

(2) बालकों के अन्दर त्याग करने की भावना का विकास समूह में एक साथ कार्य करने के कारण विकसित होती है।